हो गया वि लियो ने
बुलाया मध्य

अध्याय १

पुनरुत्थान और सुधार

पुनरुत्थान का अर्थ पुनर्जन्म है। इसका अभिप्राय यह है कि रोम और यूनान
के प्राचीन साहित्य और कला में लोगों की रुचि बढ़ गई। यूनान और रोम के
विज्ञान तथा दर्शन का लोग अध्ययन करने लगे और उन प्राचीन विचारों को
सम्मान की दृष्टि से देखने लगे। किन्तु पुनरुत्थान से उस आन्दोलन के केवल
एक अंग का पता चलता है। इस आन्दोलन के कारण लोगों के जीवन और
उनके विचारों में परिवर्तन हुआ। लोगों में नये प्रकार के आनन्द की भावना आई
और एक नई दृष्टि से उन्होंने जीवन की आलोचना तथा छानबीन प्रारंभ
की। उन की जिज्ञासा और निरीक्षण की भावना बदल कर नई हो गई।
बाहरी संसार की वस्तुओं को उन्हों ने इस नई दृष्टि से देखना प्रारम्भ
किया।

यह आन्दोलन आकस्मिक विस्फोट नहीं था। इसको दो युगों के बीच का
काल कह सकते हैं। यह आन्दोलन वर्तमान काल के प्रारम्भ और मध्यकाल के
अंत दोनों को बतलाता है। पुनरुत्थान के साथ नये संसार के वर्तमान काल का
प्रारंभ होता है और बहुत दिनों तक रहनेवाले मध्ययुग का अन्त हो जाता है।
इस आन्दोलन के कारण भूतकाल से संबंध टूट जाता है; किन्तु भूतकाल का यह
संबंध अचानक और बिल्कुल समाप्त नहीं हो जाता।

मध्यकाल में जीवन आजकल की भाँति नहीं था। तब उच्च घरानों के लोग
शासन करते थे और प्राचीन परम्पराओं का समाज पर नियन्त्रण था। लोगों का
दैनिक जीवन उस समय के पादरियों और बुद्धिमान् लोगों के बनाये हुए नियमों
के अनुसार था। लोगों पर धर्म का प्रभाव आज से अधिक था। चर्च के पादरियों
की शिक्षाओं का विरोध करने का साहस किसी में नहीं था। विरोध करनेवालों
का जीवन संकट में पड़ जाता था। चर्च और सम्राट् की शक्ति बहुत बड़ी थी।

...चीन परम्...ना पवित्र समझी जाती थी। लोग उनका ...
...चाहते थे। विरोध करना बुरा माना जाता था।

इस प्रकार भूतकाल की परम्पराओं, प्रथाओं और जीर्ण ...
समाज पर लदा हुआ था। इस कारण उन्नति का मार्ग रुका हुआ था। उन्नति के लिए नये विचारों का प्रयोग करना पड़ता है और इसके लिए साहस की आवश्यकता पड़ती है। किन्तु मध्यकाल का जीवन इस प्रकार के सभी प्रयत्नों के विरुद्ध था। इसी कारण मध्यकाल स्वभाव से ही प्रगतिशील नहीं था।

मनुष्य स्वभावतः क्रियाशील होता है। वह चाहता है कि नई वस्तुओं को बनाये, नये विचारों को सोचे तथा नये क्षेत्रों को ढूंढ़े। इसलिए मध्ययुग की दबी हुई प्रगति की भावना सदा के लिए दबी हुई न रह सकी। मनुष्य ने अपनी जकड़ी हुई शृंखला को तोड़ा। इसीलिए पुनरुत्थान मनुष्य की आत्मा की मुक्ति कहा जा सकता है।

किन्तु हमें एक बात नहीं भूलनी चाहिए। मध्ययुग अन्धकार और अज्ञान का काल नहीं था। मध्ययुग के उत्तरार्ध में लोगों में बहुत ही कार्यशीलता थी और उनका जीवन व्यस्त था। इस काल में मनुष्य की सफलता पर लोग गर्व करने लगे थे। धर्म का प्रभाव कुछ-कुछ कम हो गया था और लोगों का ध्यान अपने जीवन तथा इस संसार की ओर अधिक हो गया था। लोगों ने यह समझना छोड़ दिया था कि पूरा वर्तमान जीवन अगले जीवन की तैयारी के लिए है। बड़े-बड़े साम्राज्य बनने लगे थे। गौथ शैलीवाले बड़े-बड़े वैभवशाली गिरिजा घर बनने लगे थे। नगरों का विकास वाणिज्य केन्द्रों के रूप में होने लगा था। इन दिनों नगरों की गलियों में प्रकाश का ठीक प्रबन्ध नहीं था। लोग इन गलियों में गाने गाया करते थे और प्रेम तथा वीरता की कहानियाँ कहते थे। अनेक नवयुवक ज्ञान की खोज में झुंड के झुंड विश्व-विद्यालयों में पहुँचने लगे। ये विश्व-विद्यालय हाल ही में स्थापित हुए थे। उस समय के अधिकतर लोग अन्तर्राष्ट्रीयतावादी थे। शिक्षित लोग सभी देशों में लैटिन भाषा बोलते थे। एरेस्मस सुधार और सहिष्णुता के उपदेशकों में सबसे प्रसिद्ध था। उसने लैटिन भाषा में पुस्तकें लिखीं। सारा संसार उसकी बात सुनता था।

पुनरुत्थान के समय बहुत सी पुरानी बातें प्रचलित थीं, उनमें कुछ परिवर्तन हुआ। इसके पहले लोगों का विश्वास था कि सभी ग्रह पृथ्वी के चारों

हो गया कि अपने विश्व ही ब्रह्माण्ड का केन्द्र है। कापरनिकस और गैलीलियो ने बुलाया। जब वह ... किया और वतलाया कि पृथ्वी नहीं, बल्कि सूर्य केन्द्र है। मध्य काल में कुलीन लोग व्यापार और वाणिज्य को नीची दृष्टि से देखते थे। किन्तु शीघ्र ही यह विचार वदल गया। धनी व्यापारियों का आदर तथा सम्मान होने लगा। वीरता का युग बीत चला। मनुष्य पहले की भाँति अव केवल समाज का एक सदस्य ही नहीं रहा, बल्कि मनुष्य और व्यक्ति के रूप में उसकी महत्ता बढ़ गई।

मनुष्य जाति के दीर्घकालीन इतिहास में प्रत्येक महान् घटना के अनेक कारण होते हैं। पुनरुत्थान के भी कई कारण थे। व्यापार और वाणिज्य के वढ़ जाने से लोग धनी हो गये थे। इन धनिकों ने वड़े-वड़े भवन वनवाये। ये लोग विलासिता और आनन्द का जीवन विताना चाहते थे। चर्च सदा सादे जीवन की शिक्षा दिया करता था। किन्तु लोगों ने चर्च की आज्ञाओं का उल्लंघन किया। विशाल और सुन्दर नगर वनाये गये। सन् १४५३ में कुस्तुनतुनिया-पतन के वाद वहुत से विद्वान् भागकर इटली पहुँचे। उनके कारण यूनानी और रोमन साहित्य में लोगों की रुचि वढ़ी। प्रकृति और संसार के ग्रहों के विषय में विभिन्न प्रश्नों का उत्तर वाइ-विल में दिया गया था। वुद्धिमान् लोग इस समय उन उत्तरों से सन्तुष्ट नहीं थे। वैज्ञानिक खोज की भावना दिन-प्रतिदिन वलवती होने लगी। अनेक विद्यार्थियों ने रोमन विधान और अफ़लातूं तथा अरस्तू के दर्शन के अध्ययन में अपनी शक्ति और समय को लगाया। इस प्रकार नई उत्तेजना और उत्साह के साथ जीवन, प्रकृति और सारे संसार के प्रति एक नये दृष्टिकोण का विकास हुआ। छापेखाने के आविष्कार ने पुस्तकों को सस्ता और सुलभ बनाकर शिक्षा के प्रति रुचि और उसके विस्तार में सहायता की।

पुनरुत्थान सर्वप्रथम इटली में प्रारम्भ हुआ। इसके वहुत से कारण थे। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से इटलीवालों की संस्कारगत परम्पराएँ अधिक दृढ़ थीं। वे स्वयं अपने को प्राचीन रोमनों के उत्तराधिकारी समझते थे। रोमन साम्राज्य के दिनों की अपनी विजय का स्वप्न वे प्रायः देखा करते थे। फ्रान्स और जर्मनी की अपेक्षा इटली पूर्व से अधिक निकट था। इसलिए मुसलमानी और वाइज़ैन्टाइन सभ्यता का प्रभाव इटली पर अधिक था। प्राचीन यूनानी और रोमन भावनाओं से इटलीवाले अधिक प्रभावित थे और सुख, सौन्दर्य तथा आनन्द के प्रेमी थे। वे पार्थिव संसार की वस्तुओं का अधिक ध्यान रखते थे। उत्तरी देशों के लोगों की

अपेक्षा धर्म को वे कम गम्भीरता से ग्रहण करते थे। इट...
में धर्म-शास्त्र की अपेक्षा कानून-शास्त्र और चिकित्साशास्त्र को अ...
जाती थी। इसके अतिरिक्त पूर्व के साथ वहुत वड़ा व्यापार चल पड़ा था। जिसके कारण इटली के व्यापारियों ने वहुत सी सम्पत्ति एकत्र कर ली थी। वहुत से सम्पन्न ओर सुखी नगर जैसे वेनिस, नेपिल्स, जेनोआ, इत्यादि इटली में स्थापित हो गये थे। वहाँ वहुत से नगर-राज्य थे जिनमें सभी क्षेत्रों में वड़ी प्रतिद्वंद्विता थी। इन नगरों के निरंकुश शासक और पोप नये साहित्य और कला के विकास को प्रोत्साहन देते थे।

फ्लोरेंस, मिलान और वेनिस संस्कृति के केन्द्र वन गये। कवि, चित्रकार, संगतराश, शिल्पकार और वैज्ञानिक इन नगरों में आ वसे। यहाँ के सम्पन्न नागरिक उनके आश्रयदाता वने और उन्हें सहायता तथा प्रोत्साहन दिया। इस प्रकार इटली पुनरुत्थान का केन्द्र वना। पन्द्रहवीं शताब्दी के लगभग इटली के लोग प्राचीन यूनान और रोम के नवअन्वेषित सौन्दर्य के विषय में वैसे ही उन्मत्त थे जैसे उन दिनों कुछ लोग नई खोजों के लिए उन्मत्त थे। इस काल में चित्रकारी, संगतराशी, शिल्पकारी तथा साहित्य के क्षेत्रों में संसार की कुछ सुन्दरतम कृतियों का निर्माण हुआ। इन सभी कृतियों और कलाओं के पीछे सवसे महत्त्वपूर्ण विषय मानवतावाद था। सीधे शब्दों में मानवतावाद का अर्थ दैवी और पारलौकिक के स्थान पर मनुष्य और प्रकृति का गुणगान है।

महान् चित्रकारों लेखकों, संगतराशों और शिल्पकारों के समूह में सवसे प्रसिद्ध पेट्रार्क (Petrarch), वोकाशियो (Boccacio), (साहित्य के क्षेत्र में), रेफ़ल, माइकेल एन्जेलो (Raphael, Michel Angelo) और लिओनार्डो डाविंची (Leonardo da Vinci) (चित्रकारी, संगतराशी में) और मेकिआवेली (Machiavelli) (राजनीति में) थे।

पेट्रार्क फ्लोरेंस से दूर पैदा हुआ था। उसका पिता वकील था और वह चाहता था कि उसका लड़का भी वकील वने। इसलिए वह कानून पढ़ने के लिए फ़्रान्स भेजा गया। किन्तु पेट्रार्क कानून से घृणा करता था। वह लेखक और कवि वनना चाहता था। अपने पिता के विरोध करने पर भी दृढ़प्रतिज्ञ वालक ने अपना रास्ता लिया। नई वातों को सीखने तथा नये देशों और लोगों को देखने के लिए उसने लम्बी लम्बी यात्राएँ कीं। गहन अध्ययन के कुछ वर्षों वाद वह इतना प्रसिद्ध

स्थान

हो गया कि अपने विद्य

बुलाया। जब वह
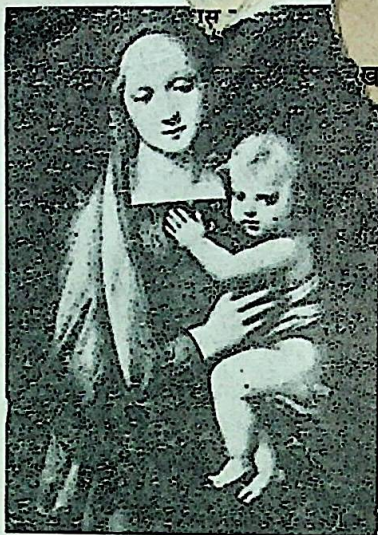
मैडोना
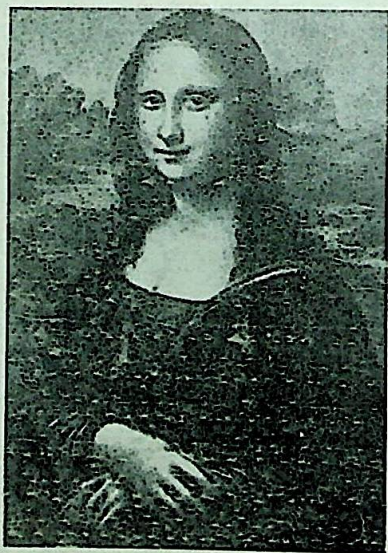
मोना लीसा

हो गया कि अपने विद्यार्थियों और प्रजा को पढ़ाने के लिए नेपिल्स के राजा ने उसे बुलाया। जब वह रोम से गुजरा तो लोगों ने एक महान् कवि के रूप में उसका सम्मान किया। पेट्रार्क जानता था कि किस प्रकार की कविता उस समय लोग सबसे अधिक सुनना चाहते थे। उसने प्रेम, प्रकृति और जीवन सुख के विषय में लिखा और दुखान्त विषयों को दूर रखा। उसने कहा कि अपने जीवन में आनन्द प्राप्त करना प्रत्येक व्यक्ति के लिए अच्छी बात है। उसने सुन्दर गीत लिखे और अपनी प्रेयसी लौरा (Laura) को उन्हें सुनाया। वह मानवतावाद का पिता माना जाता है।

बोकाशियो एक बड़े धनी महाजन का लड़का था। उसका पिता भी उसे अपने ही व्यवसाय में डालना चाहता था। बैंकिंग और वाणिज्य पढ़ने के लिए उसे नेपिल्स भेजा गया। किन्तु स्वभाव से ही उसकी कला में रुचि थी। नेपिल्स के रोमांचकारी वातावरण ने उसकी काव्य भावनाओं को जगा दिया। पहले वह कविता लिखा करता था, किन्तु बाद में वह गद्य-लेखक हो गया। उसकी पुस्तकों में सबसे प्रसिद्ध डेकामेरन (Decameron) है। इसमें सौ कहानियाँ हैं। ये कहानियाँ कुछ नवयुवक और नवयुवतियों द्वारा कही गई हैं जो प्लेग फैल जाने के कारण फ्लोरेन्स से भाग गये थे। वे नगर से बाहर एक गाँव में रहते हैं और जब तक वे बाहर रहते हैं, इन कहानियों को कहते हैं। उन दिनों के लोगों के सुख और प्रेमपूर्ण विचारों का पता इन कहानियों से चलता है। दूसरी दुनिया का ध्यान न रखते हुए एक सुख और आनन्दपूर्ण जीवन व्यतीत करने की राय बोकाशियो लोगों को देता है।

लिओनारडो डा विन्ची बुद्धिमान् व्यक्तियों में से था। वह एक चित्रकार, संगीतज्ञ, शिल्पकार, गणितज्ञ, वैज्ञानिक और दार्शनिक था। अपने बचपन में फ्लोरेन्स के सबसे प्रसिद्ध कला विदों में से एक की संरक्षता में वह रह चुका था। उसका विश्वास था कि कलाकार को प्रकृति का गम्भीर और वैज्ञानिक अध्ययन करना चाहिए। प्रकृति के असाधारण और भयानक दृश्यों पर वह बहुत ही मोहित था। वह गलियों में कई घन्टे एक नई आकृतिवाले मनुष्य की खोज में घूमा करता था। उसके अनेक चित्र संसार में प्रसिद्ध हैं। 'मोना लीका' (Mona Lica) चित्र सबसे अधिक प्रसिद्ध है। उसने एक उड़नेवाली मशीन बनाने का भी प्रयत्न किया था।

माइकेल एंजेलो भी केवल पुनरुत्थान काल के ही नहीं, बल्कि सभी कालों के महान् चित्रकारों में से एक है। उसका जीवन सुखी नहीं था। वह दीनता तथा स्वार्थी सम्वन्धियों द्वारा वुरी तरह सताया गया था। उसकी चित्रकारी और भास्कर-शिल्प में निराशा और उदासी की झलक थी। उसने सिस्चर गिरजे (Sisture chapel) के फाटकों और उसकी दीवालों पर वहुत से सुन्दर चित्र वनाये। इसके लिये उसे ४१ वर्ष तक क़ठिन परिश्रम करना पड़ा। वाइविल के अनुसार प्रारम्भ से लेकर अन्त तक मनुष्य की कहानी से इन चित्रों का सम्वन्ध है। वह स्वयं वहुत वड़ा शिल्पकार था। 'दि क्रिएशन आफ आडम (The Creation of Adam) 'दि फाल आफ मैन' (The Fall of Man) ओर 'दि लास्ट जजमेन्ट (The Last Judgment) उसकी कुछ प्रसिद्ध कृतियाँ हैं। रैफल, लिओनार्डो और माइकेल से भिन्न था। उसके चित्र सुन्दर थे। फ्लोरेंस के लोग उसके मैडोना नामके चित्र (Madonna) की प्रशंसा करते थे। सिस्चर चैप्ल (Sisture Chapel) के निकट घरों की दीवालों को उसने सजाया और उसके चित्रों की प्रशंसा होती है। उसकी प्रसिद्ध चित्रकारी डिस्प्यूटा (Disputa) स्पष्टतया ईसाई मत के अनुसार जीवन और मरण की धारणा को व्यक्त करती है। मनुष्य ने अपनी वुद्धि द्वारा जो दार्शनिक वुद्धिमत्ता प्राप्त की है वह उसके 'स्कूल आफ एथेन्स' (School of Athens) से प्रगट होती है।

मेकिआवेली (Machiavelli) अपने युग का वहुत वड़ा राजनीतिज्ञ था। वह प्रत्येक राजा के लिए एक ऐसी व्यावहारिक पुस्तक तैयार करना चाहता था, जो प्रजा पर उत्तम रीति से शासन करने में उसकी सहायता कर सके। उसकी धारणा थी कि जहाँ तक सरकार का सम्वन्ध है, राजा को नैतिकता और धर्म का ध्यान नहीं रखना चाहिए।

पश्चिमी यूरोप के अन्य देशों में पुनरुत्थान का प्रसार इटली से हुआ। धीरे धीरे फ्रान्स, जर्मनी, हालैंड, डेनमार्क और इँगलैंड सभी इसके प्रभाव में आ गये। मानवता की भावना, वौद्धिक जिज्ञासा, वैज्ञानिक निरीक्षण और रोम तथा यूनान के प्राचीन वैभव के प्रति श्रद्धा इन्हीं का चारों ओर प्राधान्य हो गया।

पुनरुत्थान-युग ने एक नये प्रकार की वास्तु-कला को जन्म दिया। वहुत से नये भवनों का निर्माण हुआ जिनमें मिलान के निकट 'सेन्ट पीटर का चर्च' और 'कैथीड्रल' प्रसिद्ध हैं। सेन्ट पीटर का चर्च मध्य युग में ईसाई मत का केन्द्र था और

पोपों की स्मृति दिलाता था। मिलान का गिरजा गौथ शैली के अनुसार बना हुआ एक प्रसिद्ध भवन है।

विज्ञान के क्षेत्र में कापरनिकस (Copernicus), गेलीलियो (Galileo), और हारवे (Harvey) इत्यादि ने अनेक अन्वेषण किये। कापरनिकस ने सिद्ध किया कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। गैलीलियो ने दूरदर्शक यंत्र का प्रयोग किया और सूर्य के धब्बों को देखा। उसने माइक्रोस्कोप (सूक्ष्म-दर्शक यंत्र) का आविष्कार किया, जिससे वैज्ञानिक खोज वहुत आगे बढ़ गई। हारवे ने 'रक्त-प्रवाह सिद्धान्त' की पुष्टि की। बहुत से दूसरे लोग भी थे, जिन्होंने भौतिक विज्ञान के अध्ययन में अपने को लगा दिया और मौलिक कार्य किया। इस काल के सबसे प्रसिद्ध व्यक्ति इंगलैंड में शेक्सपियर और बेकन थे। मानवतावादियों में इरेस्मस (Erasums) सबसे प्रसिद्ध था। वह हालैंड देश में राटरडम के पास पैदा हुआ था। उसकी प्रारम्भिक शिक्षा एक मठ में हुई थी और बाद में वह पेरिस विश्व-विद्यालय चला गया था, किन्तु वह महन्त होना नहीं चाहता था। वह लिख पढ़कर अपनी जीविका कमाना चाहता था। उसकी पुस्तकें सारे यूरोप में पढ़ी जाती थीं। सहिष्णुता और प्रेम की शिक्षा उसने सभी लोगों को दी। उस समय के महन्तों में साधारण जड़ता और अहंकार की आलोचना करते हुए उसने बहुत से पत्र और पुस्तकें लिखीं। एक पुस्तक का उस युग पर बहुत प्रभाव पड़ा। उसका नाम है 'मूर्खता की प्रशंसा' (Praise of Folly)।

धार्मिक सुधार

ऐल्प्स के उत्तरी देशों में पहुँचकर पुनरुत्थान में कुछ परिवर्तन हुआ। इटली के विचित्र वातावरण और विशेष परिस्थिति के कारण पुनरुत्थान ने इटली के लोगों में एक सरल और आनन्दपूर्ण जीवन की चाह उत्पन्न कर दी थी। चर्च की आज्ञाओं की अपेक्षा कला, नाटक और साहित्य के सुख का लोग अधिक ध्यान रखने लगे। पोप और बड़े-बड़े धर्माध्यक्ष भी चर्च के सन्देशवाहक की अपेक्षा कला के आश्रयदाता के रूप में अपने को देखना अधिक चाहते थे। जो कुछ भी हो, यूनान और रोम के जीवन के वैभव और उत्साह को लोगों ने एक बार पुनः अनुभव किया।' चर्च के नियमों के अनुसार उनका वर्तमान जीवन नीरस और उदास लगने लगा। अतः वे प्राचीन जीवन प्रणालियों की ओर लौट जाने की इच्छा

करने लगे ताकि वे अपने अल्प जीवन को इस संसार में अधिक से अधिक सुख से व्यतीत कर सकें।

किन्तु उत्तरी देशों में पुनरुत्थान की प्रतिक्रिया इससे कुछ भिन्न हुई। उत्तरी यूरोप के लोगों को भिन्न जलवायु में रहने के कारण वर्फ या पानी की वर्षा को देखते हुए अधिक समय तक घर के भीतर रहना पड़ता था। इटलीवालों की भाँति उनका वातावरण प्रसन्न और प्रकाशपूर्ण नहीं था। उस तरह के आरामपूर्ण जीवन और प्रहसन की आशा उनसे नहीं की जा सकती थी। वे अपने धर्म के विषय में अधिक गम्भीर थे। वे दूसरे लोक के जीवन पर अधिक विचार करते थे। पुनरुत्थान के प्रभाव में उन लोगों ने ठीक इटलीवालों की भाँति ही व्यवहार नहीं किया। किन्तु इतना सवल प्रवाह उन पर प्रभाव डाले विना न रह सका। पुनरुत्थान ने उत्तरी देशों के लोगों में प्राचीन परम्पराओं और स्वभावों के प्रति आलोचना और चुनौती का भाव उत्पन्न कर दिया। पुरानी प्रणालियों को उन लोगों ने सन्देह की दृष्टि से देखना प्रारम्भ कर दिया। अपने दैनिक जीवन को शासित करने वाले नियमों की वे आलोचना करने लगे। चर्च में जो कुरीतियाँ चल पड़ी थीं उनके विषय में वे अधिक सतर्क हो गये। जीवन के प्रति विचारों में इस तरह का परिवर्तन हुआ कि उसने धार्मिक रीतियों में भी सुधार की इच्छा उत्पन्न कर दी। वे अपने चर्चों को पवित्र करना और पादरियों को सुधारना चाहते थे। चुनौती और आलोचना की इस भावना और सुधार के लिए इस उत्साह ने यूरोप में एक दूसरे शक्तिशाली आन्दोलन को जन्म दिया जो धर्म-सुधार (Reformation) के नाम से प्रसिद्ध है।

सुधार यह जैसा कि शब्द स्वयं वतलाता है, चर्चों को सुधारने और पादरियों के जीवन में जो दोष आ गये थे, उनको दूर करने के लिए आन्दोलन था। पुनरुत्थान की भाँति सुधार के भी अनेक कारण थे। इसके धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक कारण थे। किन्तु धार्मिक कारणों ने आन्दोलन को सवसे अधिक गति प्रदान की।

इस समय तक पादरियों की नैतिकता और आचरण में भारी पतन हो चुका था। पोप से लेकर साधु और पुजारियों तक में विलासिता, भ्रष्टाचार और अनैतिकता फैली हुई थी, चर्च के नियमों के विरुद्ध पोप और धर्माध्यक्ष राजाओं की तरह रहते थे तथा स्त्री और वाल वच्चे भी रखते थे। चर्च के उच्चतर पद रुपया लेकर दिये जाते थे। इसका अर्थ यह था कि इन पदों पर मूर्ख किन्तु धनी लोगों
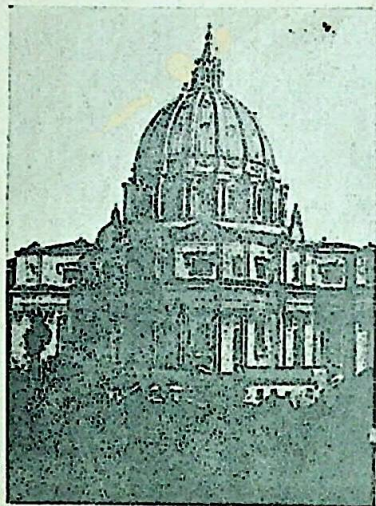
सेन्ट पीटर का गिर्जा—रोम

मार्टिन ल्यूथर
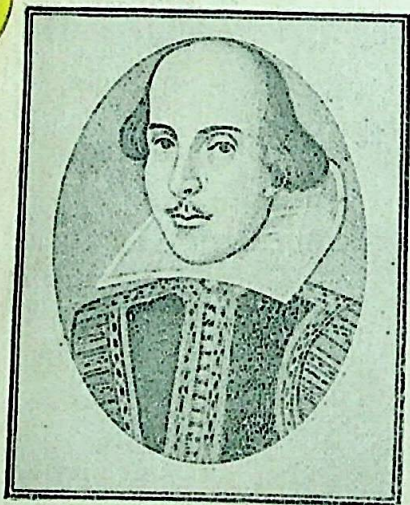
विलियम शेक्सपियर

पैट्रार्क

की नियुक्ति होती थी। बहुत से ऐसे पादरी थे जो ईश्वर-प्रार्थना को भी नहीं दुहरा सकते थे। पोप और चर्च के उच्च अधिकारी विलासिता का जीवन व्यतीत करने के लिए भारी सम्पत्ति चाहते थे। भोले-भाले लोगों से रुपया लेने के लिए उन्होंने अनेक ढंग निकाले थे। वे 'मुक्ति-पत्र' (Indulgences) बेचते थे। जो लोग उन्हें रुपया दे देते थे उनको वे चर्च के कठिन नियमों का पालन न करने की छूट दे देते थे। सेन्ट पीटर के चर्च की मरम्मत कराने के लिये जब रुपये की आवश्यकता हुई तो पोप ने क्षमा-पत्र (Indulgences) बेचना प्रारम्भ किया था। इसका अर्थ यह था कि लोग पोप को रुपया देकर अपने पाप से छुटकारा पा सकते थे। भोले-भाले साधारण लोग इन सब बातों को स्वर्ग प्राप्ति का साधन समझते थे। धार्मिक चिह्नों की पूजा में भी जिन्हें साधु और ईसामसीह ने अपनाया, बड़े दोष आ गये थे। बहुत सी अन्धविश्वासपूर्ण प्रथाएँ चल पड़ी थीं, इतनी लकड़ी क्रास (Cross) की बताई गई कि उससे एक जहाज बनाया जा सकता था। कहा जाता था कि जान बैप्टिस्ट (John the Baptist) के बारह सिर थे। चर्च के अधिकांश लोग दीन किसानों को सताने और उनसे रुपया ऐंठने पर तुले हुए थे।

आर्थिक क्षेत्र में हम देखते हैं कि चर्चों के अधिकार में बहुत बड़ी सम्पत्ति थी। उनके पास विशाल भूभाग और द्रव्य था। पोप सारे यूरोप में ईसाई लोगों पर अनेक कर लगाता था। शक्तिशाली राजा पोप के इस प्रभाव के भीतर रहना नहीं चाहते थे। इन सभी कारणों से सुधार का सूत्रपात हुआ।

सर्वप्रथम जर्मनी में सुधार प्रारम्भ हुआ। इटली अथवा फ्रान्स की अपेक्षा यह पिछड़ा हुआ देश था। पुनरुत्थान का प्रभाव इस पर उतना नहीं पड़ा था। लोग धार्मिक प्रवृत्ति के अधिक थे। कैथोलिक चर्चों की बुराइयाँ जर्मनी में अधिक थीं। चर्च के पास श्रेष्ठ भूमि थी। दीन कृषक लोलुप दृष्टि से चर्च की सम्पत्ति को देखते थे। सबसे बढ़कर जर्मनी छापेखाने का घर था। पुस्तकें यहाँ सस्ती थीं। जनता उन्हें सुगमता से खरीद सकती थी।

मार्टिन लूथर इस आन्दोलन का नेता था। वह एक उत्तरी जर्मनी के कृषक का लड़का था। वह बहुत मेधावी और उत्साही व्यक्ति था। उसका बचपन सुखमय नहीं था। उसका पिता प्रायः उसको कोड़े लगाया करता था। वह भूत-प्रेत में विश्वास करता था। वह उसे वकील बनाना चाहता था। एक बार जब

वह घर से लौट रहा था तो तूफान में पड़ गया । बिजली की चोट से वह किसी तरह बच गया । उसे बहुत कष्ट हुआ और उसने संन्यासी होने की प्रतिज्ञा ले ली ।

शीघ्र ही उसने यह देखना प्रारम्भ किया कि ईसामसीह के शब्दों और पोप तथा धर्माध्यक्षों के उपदेश में महान् अन्तर है । किसी कार्यवश एक बार वह रोम गया । वहाँ उसने उच्च पादरियों में विलासिता और भ्रष्टाचार देखा । वह बहुत ही निराश हुआ । बाद में जब पोप ने जान टैटज़ल को जर्मनी में मुक्ति-पत्र बेचने के लिए भेजा तो उसके कार्यक्रम से लूथर बहुत क्रोधित हुआ । उसने ९५ वक्तव्य लिखे और उन्हें विटिनवर्ग विश्वविद्यालय के गिरजे के दरवाजे पर लगा दिया । उसने मुक्ति-पत्र बेचने की प्रथा की निन्दा की ।

इस समय तक लोगों ने तत्कालीन धार्मिक समस्याओं के विषय में बहुत अधिक रुचि रखना प्रारम्भ कर दिया था । लूथर ने विरोध के मारे तहलका मचा दिया । पोप भयभीत हो गया । उसने लूथर को विधर्मी घोषित किया और उसे रोम बुलाया । किन्तु वह एक दूसरे महान सुधारक जान हस की भाँति अपने को जलाना नहीं चाहता था । उसने पोप की आज्ञा का उल्लंघन कर दिया और इस पर वह धर्म से बहिष्कृत कर दिया गया । उसने पोप के आज्ञा पत्र को जला दिया और शीघ्रही वह उन लोगों का नेता हो गया जो चर्च की वर्तमान दशा से बहुत ही असन्तुष्ट थे ।

सम्राट् चार्ल्स पंचम ने लूथर को बुलाया । उसने जो कुछ कहा था या लिखा था उसमें से एक शब्द भी वापस लेने से इनकार कर दिया । वह अवैध (Outlaw) घोषित कर दिया गया, किन्तु उसके मित्रों ने उसे शरण दी और उसे दंड से बचा लिया । लूथर ने जिस आन्दोलन को चलाया उसे प्रोटेस्टेंटिज्म (Protestantism) कहते हैं । इसका अर्थ रोम के चर्च का विरोध है । लूथर का प्रभाव दूर तक फैल गया । उसके बहुत से अनुयायी थे । उनमें सबसे प्रसिद्ध कैलविन (Calvin) और नौक्स (Knox) थे ।

कैलविन कट्टर प्रोटेस्टैन्ट था । वह स्विटजरलैंड के नगर जीनीवा में एक 'ईश-नगर' (City of God) स्थापित करना चाहता था । इस नगर में कुछ समय तक उसकी सर्वोच्च सत्ता रही । उसने इस नगर के निवासियों के जीवन को नियमित करने के लिए बहुत से कड़े नियम बनाये थे । नागरिकों का निजी जीवन भी चर्च के नियंत्रण में था । नाच, ताश, खेल देखने और रविवार को काम करने या खेलने का

पूर्ण निषेध था। कोई भी व्यक्ति ६ वजे रात के वाद सराय में नहीं बैठ सकता था और न खा पी सकता था। कोई भी व्यक्ति बतलायें गयें माप से बड़े बाल नहीं रख सकता था।

बहुत से यूरोपीय देशों पर इस आन्दोलन का प्रभाव पड़ा। इंगलैंड भी उनमें से एक था। किन्तु मुख्य कार्य उसके राजा हेनरी अष्टम ने किया। उसने पोप का विरोध किया क्योंकि पोप ने उसकी इच्छा पूरी नहीं की। वह अपनी रानी कैथरीन को छोड़कर एक अन्य स्त्री से विवाह करना चाहता था। पोप ने उसको इसके लिए आज्ञा नहीं दी। इससे राजा इतना क्रोधित हुआ कि उसने अंगरेज पादरियों को बुलाया और धमकी देकर उनसे अपने को अंगरेजी चर्च का अध्यक्ष स्वीकृत कराया। चर्च के विरुद्ध वहुत से नियम बनाये गये, पोप को कर देना वन्द कर दिया गया। मठों की सम्पत्ति छीन ली गई। वाइविल का अंगरेजी में अनुवाद किया गया। किन्तु इंग्लैंड में सुधार आंशिक रहा। जान नाक्स ने इस आन्दोलन को आगे बढ़ाया। वह भी कैलविन की भांति अतिवादी था। उसने स्काटलैंड की रानी मेरी का विरोध किया और उसके शासन को असम्भव कर दिया। वाद में एलिजावेथ ने नम्र नीति का अनुसरण किया।

सुधार आन्दोलन के वहुत व्यापक परिणाम हुए। उसने ईसाई जगत् की एकता को भंग कर दिया। कुछ राजा प्रोटेस्टैन्ट हो गये और कुछ कैथोलिक ही रह गये। इसका परिणाम यह हुआ कि वहुत से धार्मिक युद्ध हुए। इन युद्धों ने बहुत से देशों के लिए विशेषकर जर्मनी के लिए घोर संकट उत्पन्न कर दिया। सर्वत्र अव्यवस्था और अनाचार का बोलबाला हो गया। पोप की शक्ति का ह्रास इस तरह हो गया कि वह फिर सँभल न सका।

कुछ समय के वाद रोमन कैथोलिकों ने उसके विरोध में एक आन्दोलन चलाया। इसको कांउन्टर रिफार्मेशन (Counter-Reformation) अर्थात् सुधार की प्रति-क्रिया कहते हैं। स्पेन और फ्रान्स के प्रोटेस्टेंटों के साथ बड़ी निर्दयता का व्यवहार किया गया।

भारत और चीन में इस समय दूसरे धर्म प्रचलित थे। किन्तु धार्मिक युद्ध यूरोप की भांति इन देशों में नहीं हुआ था। राजाओं के गृह-युद्ध से ये देश बच गये क्योंकि उन्होंने सहिष्णुता की नीति का अनुसरण किया।

अभ्यास

१. पुनरुत्थान से आप क्या समझते हैं ?
२. इसने मनुष्य के जीवन पर क्या प्रभाव डाला ?
३. पुनरुत्थान के नेताओं के नाम बताइए और उनके कार्यों का संक्षिप्त विवरण दीजिए ?
४. पुनरुत्थान इटली में क्यों प्रारम्भ हुआ ?
५. सुधार का क्या अर्थ है ?
६. इसके क्या कारण थे ?
७. मार्टिन लूथर कौन था ? वह किस प्रकार चर्च के विरुद्ध आन्दोलन का नेता हो गया ?
८. सुधार जर्मनी में क्यों प्रारम्भ हुआ ?
९. लूथर के प्रमुख अनुयायी कौन थे ?
१०. सुधार का इँगलैंड पर क्या प्रभाव पड़ा ?

अन्वेषण की मुख्य यात्रायें
ब्रिस्टल
साम्राज्य
फ्रांस
लिस्बन
पेकिंग
१५२०
चीन
कैन्टन
फिलिपाइन्स
क्यूबा
राजधानी
सैन्टो डोमिंगो
अंतरीप वर्डी
कस्ता बोजाडोर
कस्ता ब्लैंको १४३४
मिस्र
अरब
मक्का
भारत
बम्बई
कालीकट
सेनेगल
गैम्बिया
गिनी
लागोस
लामू
कांगो नदी
मोजम्बीक
सुमात्रा
जावा
प्रशान्त
महासागर
भारत
महासागर
नैटाल
उत्तमाशा अंतरीप
मैगेलन जलप्रणाली
कोलम्बस
जान कैबट
मैगलन
वास्को डी गामा
बार्थोलोम्यू डियाज
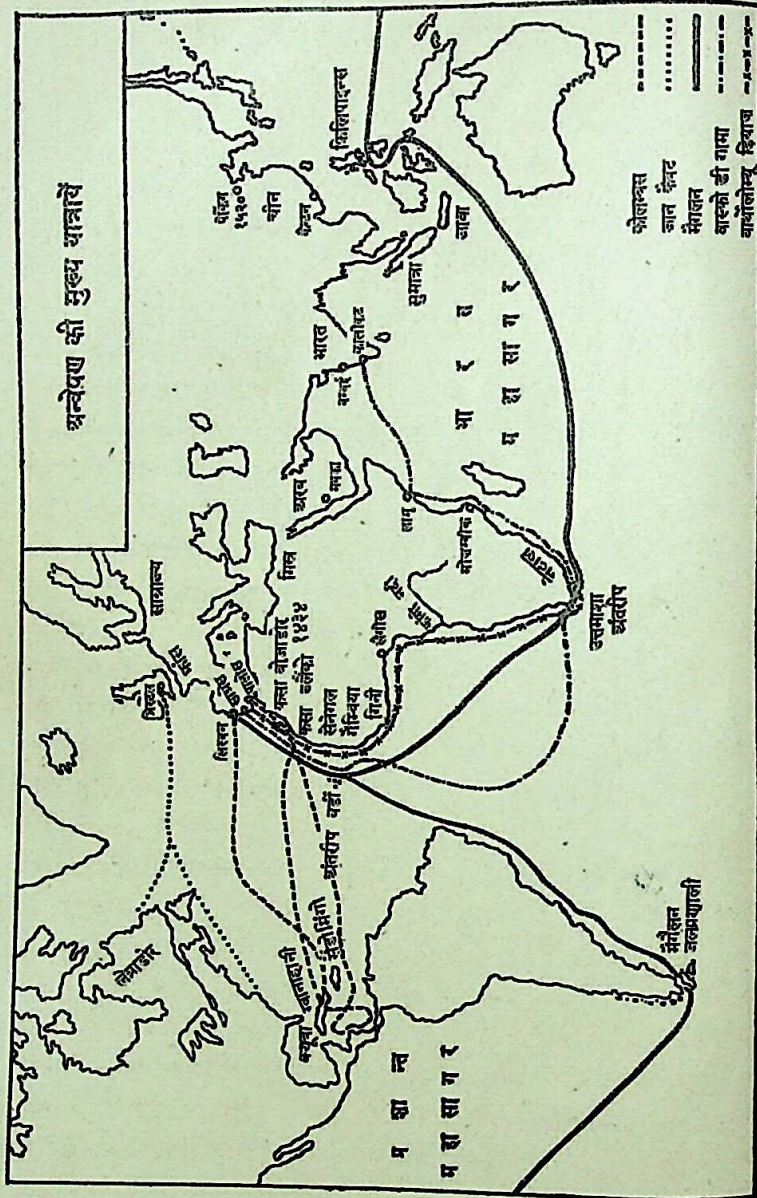
अध्याय २

भौगोलिक अन्वेषण और यूरोपीय सभ्यता का प्रारम्भ

पुनरुत्थान और सुधार के युग ने लोगों के विचारों में परिवर्तन कर दिया था। नये विचार और नई भावनायें उत्पन्न और विकसित हो गई थीं। लोग नये देशों को देखने के लिए उत्सुक हो रहे थे। जिज्ञासा की यह भावना उस युग के भौगोलिक अन्वेषणों का कारण बनी।

मध्य-युग में भी यह भावना थी। किन्तु उस समय यह उतनी बलवती नहीं थी। लोग महान् साहसिकता के लिए तैयार नहीं थे। वे भूमध्यसागर में छोटी-छोटी यात्राओं से सन्तुष्ट थे। पूर्व के लिए प्राचीन समय से जाने हुए स्थल मार्ग का ही केवल उन्हें ज्ञान था। ईसाइयों के धर्म-युद्धों ने लोगों के हृदय में नये देशों को देखने और नई भाषाओं को सीखने की अभिलाषा उत्पन्न कर दी। उन्होंने पूर्व और पश्चिम के बीच प्रथम सम्बन्ध स्थापित किया। भूगोल विषयक अरबी की पुस्तकों का अनुवाद लैटिन भाषा में हुआ था। इससे यूरोपीय लोगों को अफ्रीका, भारत और लंका आदि विचित्र देशों के विषय में ज्ञान प्राप्त हुआ। इन विचित्र और सम्पत्ति-शाली देशों का मार्ग ढूंढ़ने के लिए इन पुस्तकों ने पुरुषार्थी लोगों की अभिलाषा को और बढ़ा दिया।

१३वीं शताब्दी में मार्कोपोलो ने पूर्व की यात्रा की। उसे मंगोलिया के मरुस्थल और बड़े ऊँचे पर्वतों को पार करना पड़ा था। किन्तु एक पुरुषार्थी व्यक्ति होने के कारण वह हताश नहीं हुआ। वह आगे बढ़ता गया और चीन के सम्राट् के दर्बार में पहुँचा। सर्वप्रथम वह अपने पिता और चाचा के साथ गया था। दर्बार के वैभव से वह बहुत प्रभावित हुआ। उसने अपनी यात्रा के विषय में एक पुस्तक लिखी, जिसमें उसने इन देशों की सम्पन्नता और नगरों के वैभव का वर्णन किया है। मार्कोपोलो की पुस्तक के यूरोपीय पाठक इस वर्णन से मुग्ध हो गये। अनेक साहसी व्यक्ति इन नये देशों की यात्रा करने की इच्छा करने

लगे, किन्तु संकट इतने कठिन थे कि कोई उनका सामना करने का साहस नहीं करता था।

इतने संकटों के होते हुए भी इन अपरिचित और विचित्र देशों की यात्रा यूरोप के लोगों ने क्यों की? इसके दो प्रमुख कारण थे, धर्म और व्यापार। दीर्घ काल से इटली के नगरों और पूर्वी देशों के बीच बहुत बड़ा व्यापार होता था। यूरोप के लोग पूरब के देशों से मसाले, रेशम, हाथीदाँत, मूल्यवान् पत्थर और अनेक अन्य वस्तुएँ मँगाते थे। उनके जीवन को आनन्दित और विलासी बनाने के लिए ये वस्तुएँ बहुत आवश्यक थीं। किन्तु शनैः शनैः इटली के व्यापारियों ने इन वस्तुओं का मूल्य बढ़ा दिया। यूरोप के अन्य देशों के लोगों का काम इन वस्तुओं के बिना नहीं चल सकता था, इसलिए उन्हें इटलीवालों को मूल्य अधिक देना पड़ता था। किन्तु यह अवस्था अधिक समय तक न रह सकी। कुछ समय के बाद पश्चिमी यूरोप के अन्य देशों के पुरुषार्थी लोगों ने मसाला उत्पन्न करनेवाले देशों का दूसरा मार्ग ढूँढ़ निकालने का निश्चय किया। इस निश्चय के कारण उन्होंने लम्बी और संकटपूर्ण यात्राएँ प्रारम्भ कीं।

दूसरा उद्देश्य धर्म था। मुसलमानों के नियंत्रण से ईसामसीह के जन्मस्थान को स्वतंत्र करने के लिए ईसाई-धर्म-युद्ध प्रारम्भ हुए थे। इस समय बहुत से ईसाई थे जिनका विश्वास था कि यदि वे ईसाई मत का प्रचार करते रहें तो स्वर्ग पहुँच जायँगे। इस तरह इन देशों में जहाँ लोग अन्य धर्मों को मानते थे अपने धर्म को फैलाने की इच्छा इन लोगों में हुई।

किन्तु यदि इस समय तक यूरोप के लोगों में भूगोल का ज्ञान पर्याप्त न हो गया होता तो वे अपने प्रयत्न में कभी भी सफल नहीं होते। बहुत दिनों तक लोग साधारणतया विश्वास करते थे कि पृथ्वी चपटी है। उन्होंने अपनी धार्मिक पुस्तकों से इस बात को जाना था। किन्तु यह विश्वास अब हटने लगा। अब वे विश्वास करने लगे कि पृथ्वी गोल है। इसके अतिरिक्त कुतुबनुमा, नक्शा इत्यादि ने समुद्र में जहाज चलाना पहले की अपेक्षा सरल कर दिया।

उस समय के जहाज बहुत छोटे थे। समुद्र में चलने के लिये उन्हें हवा के बहाव पर निर्भर रहना पड़ता था। जहाजों पर भोजन, पानी और रहने का प्रबन्ध अच्छा नहीं था। नाविक इस बुरी दशा के कारण बीमार पड़ जाते थे और उनमें से बहुतेरे रास्ते में ही मर जाते थे। किन्तु इन कठिनाइयों और

हैनरी नैवीगेटर

वास्कोडिगामा

फर्डीनेन्ड मैगेलन
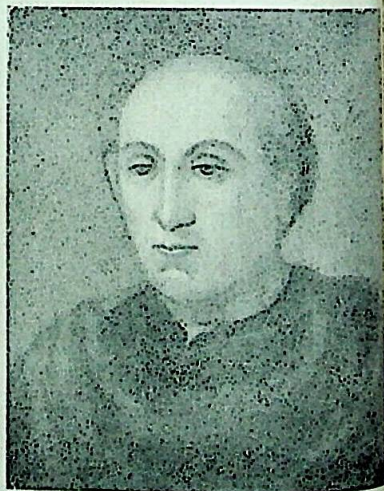
कोलम्वस

आपत्तियों के होते हुए भी साहसी नाविकों ने लम्बी यात्राएँ कीं और नये देशों को ढूंढ़ निकाला।

इन खोजों के विषय में एक बात और ध्यान देने योग्य है। अब तक केवल इटली के नगर व्यापार ओर वाणिज्य के केन्द्र थे। किन्तु अब परिस्थिति बदल गई। भूमध्य सागर के तट की महत्ता अब कम हो गई। इन नये साहसों में पश्चिमी यूरोप के देशों ने प्रमुख भाग लिया। पुर्तगाल और स्पेन इस क्षेत्र में नेता थे। अटलान्टिक का तट अब यूरोपीय व्यापार का केन्द्र हो गया।

राजकुमार हेनरी अपनी सामुद्रिक यात्राओं के कारण ही महा नाविक कहलाता है। उसने १४१५ ई० में उत्तरी पश्चिमी अफ्रीका की खोज करने की तैयारी प्रारम्भ की। उसके पहले फ़िनीशिया और नार्स के लोगों ने इस क्षेत्र में अन्वेषण किया था। किन्तु वे इसे विकट जंगली लोगों का देश कहते थे। कहते हैं राजकुमार हेनरी ने कुछ मजबूत जहाज तैयार कराये, कुछ पुरुषार्थी लोगों को एकत्र किया, जो सभी प्रकार के भावी संकटों का सामना करने के लिए उद्यत थे। उन्होंने अफ्रीका के उत्तरी-पश्चिमी तट से जहाज चलाया और कनारी तथा मडीरा को ढूंढ़ निकाला। तब १५ वीं शताब्दी के मध्य में वे ग्रीन अन्तरीप पहुँचे। राजकुमार हेनरी ने इस कार्य के लिए बहुत सा रुपया व्यय किया। उसके प्रयत्नों के फलस्वरूप सहारा मरुभूमि के कुछ भागों का भी अन्वेषण हुआ।

बारथोलोम्यू डिआज़ (Bartholomew Diaz) नाम का एक दूसरा व्यक्ति था। उस समय यूरोप के लोगों का विश्वास था कि प्रिस्टर जान नाम के ईसाई शासक का पूरब में कहीं राज्य है। इस बात की खोज के लिए डिआज़ ने लम्बी यात्रा की और वह अफ्रीका के दक्षिणी सिरे पर पहुँचा। वह पूरब की ओर आगे नहीं गया। यहाँ उसे जोरों की हवा का सामना करना पड़ा, जिसने उसकी यात्रा को असम्भव बना दिया। कहा जाता है कि डिआज़ ने इस अन्तरीप को 'तूफ़ान का अन्तरीप' कहा, किन्तु पुर्तगाल के राजा ने कहा कि हम लोग इसे केप आव गुड होप (अच्छी आशा का अन्तरीप) कहेंगे। इसीलिए इसका नाम केप आव गुड होप पड़ा।

इस क्षेत्र में वास्कोडिगामा एक दूसरा व्यक्ति था। वह पुर्तगाल से चला, केप आव गुड होप यानी उत्तमाशा अंतरीप तक पहुँचा और वहाँ से पूरब की ओर बढ़ा। वह भारत के मलाबार तट पर पहुँचा। कालीकट उस जिले के बीच में

पड़ता था जहाँ मिर्च, अदरक और कुनैन उत्पन्न होते थे। भारत के दूसरे भागों से कालीकट में मसाले, बहुमूल्य पत्थर, टीन, लौंग, अनाज और कपड़े आते थे। कैलीको शब्द का आजकल प्रयोग होता है। इसका अर्थ है कालीकट का वस्त्र। वह कालीकट पहुँचा और राजा के दरबार में गया। उसकी यात्रा की बहुत महत्ता है क्योंकि उसके बाद पूर्वी देशों में पुर्तगालियों ने अनेक व्यापारी केन्द्र स्थापित किये विशेषकर भारत में।

पूर्व के लिए नया मार्ग ढूंढ़ने में स्पेन उतना ही सफल रहा। स्पेन की खोजों में सबसे प्रसिद्ध कोलम्बस और मैगेलन द्वारा अमेरिका की खोज है।

कोलम्बस जेनोआ के एक ऊन के व्यापारी का बेटा था। सर्वप्रथम वह इंगलैंड गया। वहाँ उसने बहुत दूर पश्चिम में एक विशाल देश की कहानी उत्तरी द्वीप-समूह के मछुओं से सुनी। उसका विश्वास था कि वह पश्चिम की ओर नाव चलाकर इन्डीज (भारत) पहुँच सकता है। उसने अपनी योजना बनाई। किन्तु उसके पास धन नहीं था। किसी राजा की सहायता की उसे आवश्यकता थी। इसलिए वह पुर्तगाल और स्पेन के राज-दरबारों में गया। किन्तु पुर्तगाल के राजा ने उसकी बातों पर विश्वास नहीं किया और सहायता करने से इनकार कर दिया। स्पेन का राजा भी युद्ध में फंसा हुआ था; उससे भी कोई सहायता न मिल सकी। लोगों ने उसकी हँसी उड़ाई। किन्तु अन्त में स्पेन के राजा और रानी ने उसकी सहायता करने का वचन दिया। उसने ३ जहाजों और ८८ आदमियों के साथ यात्रा प्रारम्भ की। उनमें से बहुत से अपराधी थे। लोग ऐसी यात्रा करने में डरते थे, जिसका अन्त अनिश्चित था। कोलम्बस का जहाज आगे बढ़ता गया किन्तु कई दिनों तक कोई भू-भाग नहीं दिखाई दिया। उसके साथी भयभीत हो गये; वे वापस लौटना चाहते थे। किन्तु कोलम्बस रुकने के लिए तैयार नहीं था। उन लोगों ने उसे मार डालने की एक योजना बनाई। किन्तु संयोगवश उन्होंने कुछ पक्षी और लकड़ी के टुकड़े देखे। थोड़ी देर बाद वे भू-भाग पर पहुँच गये। कोलम्बस ने समझा कि वह भारत पहुँच गया। इसलिए उसने इन नये देशों का नाम इन्डीज़ रखा किन्तु वास्तव में वह अमेरिका के तट पर पहुँचा था। वह अपनी सफलता राजा से बतलाने के लिए स्पेन पहुँचा। बाद में उसने इस नये देश की कई बार यात्रा की।

दूसरा स्पेन का प्रसिद्ध अन्वेषक मैगेलन था। उसने पाँच जहाज लेकर अपनी यात्रा प्रारम्भ की। वह पश्चिम की ओर चला क्योंकि पूर्वी मार्ग

पूर्ण रूप से पुर्तगाल के नियंत्रण में था। उसने अटलांटिक महासागर को पार किया और दक्षिण की ओर चला। वह अमेरिका के सबसे दक्षिणी छोर पर पहुँचा तो उसे एक नाला पार करना पड़ा। यहाँ नाविकों ने मनुष्य के कुछ पैरों के निशान और आग के निशान देखे। इसलिए उन्होंने इस देश को 'आग का देश' (Land of fire) कहा। मैंगलेन को यहाँ अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कई दिनों तक भयानक तूफान चलता रहा। उसके साथी उसके विरुद्ध उठ खड़े हुए। उसने उनको कठोर दंड दिया और उनमें से दो को वहीं किनारे पर छोड़ दिया। कुछ दिनों के वाद उसने एक नये महासागर में प्रवेश किया। यह महासागर वहुत शान्त था. इसलिए उसने इसका नाम प्रशान्त सागर रखा। इसके वाद भूभाग देखने के पूर्व वह ९८ दिन तक महासागर में जहाज चलाता रहा। उसके साथी खाये विना मृतप्राय हो गये। उन्होंने अपनी भूख मिटाने के लिए जहाज के चूहों तक को भी खा लिया। उसने वहुत से द्वीपों का पता लगाया। किन्तु उनमें से एक में वहाँ के लोगों द्वारा वह मार डाला गया। तदुपरान्त शेष लोग स्पेन वापस लौट आये। यह सबसे प्रमुख यात्रा थी। इसने प्रमाणित कर दिया कि पृथ्वी गोल है। इन अन्वेषणों से स्पेन और पुर्तगाल को वड़ा लाभ हुआ। पोप ने एक कल्पित रेखा द्वारा स्पेन और पुर्तगाल के वीच उन देशों को विभाजित कर दिया जिनकी खोज नहीं हुई थी। इस विभाजन से स्पेन को अमेरिका महाद्वीप मिला और इन्डीज और अफ्रीका का अधिकतर भाग पुर्तगाल को मिले। इन दो देशों ने अपने औपनिवेशिक राज्य का उपभोग तव तक किया जव तक कि ये अँगरेजों और डचों द्वारा नष्ट नहीं कर दिये गये।

१७ वीं शताब्दी में अँगरेज और डच भी अपने साम्राज्य स्थापित करनेके लिए चल पड़े। उन्होंने स्पेन और पुर्तगाल के विरुद्ध लड़ाई की और उन्हें युद्ध में पराजित किया। वाद में फ्रान्स भी इस संघर्ष में सम्मिलित हुआ। इन देशों ने पूर्वी देशों में, अफ्रीका में, भारत में और एशिया के दूसरे भागों में विशाल साम्राज्य स्थापित किया। इस प्रकार अन्वेषणों का परिणाम यह हुआ कि दूरस्थ देशों पर यूरोपीय देशों का आधिपत्य स्थापित हुआ।

इन अन्वेषणों के अनेक परिणाम हुए। इस काल में समुद्री व्यापार वहुत वढ़ा। नये देशों का पता लगा। अमेरिका, भारत, अफ्रीका इत्यादि में यूरोपीय देशों ने अपने साम्राज्य स्थापित किये। स्पेन, पुर्तगाल, इंगलैंड इत्यादि इन देशों से प्राप्त

सम्पत्ति से बहुत धनी देश बन गये। इसके कारण यूरोपीय देशों में व्यापार, वाणिज्य और उद्योग का विकास हुआ।

अभ्यास

१. यूरोपीय लोगों में साहस की भावना किस प्रकार उत्पन्न हुई ?
२. मार्कोपोलो कौन था ? उसकी यात्रा का संक्षिप्त विवरण दीजिए।
३. उत्तमाशा अन्तरीप (केप आफ़ गुडहोप) की खोज का क्या कारण था ?
४. नाविक राजकुमार हेनरी के विषय में आप क्या जानते हैं ?
५. वारथोलोम्यू डिआज़ कौन था ?
६. भारत का पता किसने लगाया ?
७. कोलम्वस कौन था ? उसने कौन सी खोज की ?
८. इन खोजों में स्पेन और पुर्तगाल का प्रमुख हाथ क्यों रहा ?
९. इन खोजों के प्रभाव की व्याख्या कीजिए।

अध्याय ३

मुगलकालीन भारत

जिस समय यूरोप में पुनरुत्थान और सुधार की चर्चा हो रही थी भारत भी अपने वर्तमान इतिहास के एक महत्त्वपूर्ण काल से गुजर रहा था। इस समय यहाँ मुगलों का शासन था। मुगल-साम्राज्य की नींव बावर ने डाली थी। वह तैमूर और चंगेज के बंश में से था। उसका पिता मध्य एशिया में एक छोटे से राज्य का शासक था। किन्तु उसकी मृत्यु के बाद बावर ने उसे विस्तृत करने का निश्चय किया। सर्वप्रथम उसने समरकन्द को जीता; किन्तु बाद में उसे छोड़ना पड़ा। अपने पूर्वजों द्वारा मातृ-भूमि से भगाये जाने पर उसने काबुल में अपने पैर जमाये। वहाँ से उसने भारत पर १५२६ ई० में आक्रमण किया। उस समय इब्राहीम लोदी दिल्ली का बादशाह था। उसके दरबारी उससे प्रसन्न नहीं थे। उन दरबारियों ने बावर को भारत आने के लिए निमंत्रण भेजा।

बावर

बावर ने सहर्ष इस निमन्त्रण को स्वीकार कर लिया। पानीपत के महान् युद्ध (१५२६) में इब्राहीम लोदी पराजित हुआ। इब्राहीम के पास विशाल वाहिनी थी। बावर की सेना से भी उसकी सेना बड़ी थी, किन्तु बावर के तोपखाने के सामने वह न टिक सकी। तब बावर को मेवाड़ के रानासाँगा से लड़ना पड़ा। रानासांगा एक विशाल वाहिनी लेकर सीकरी के पास खानवा के मैदान में उतर पड़ा। राजपूतों की अपार संख्या देखकर बावर के सैनिक निराश हो गये। किन्तु बावर ने

उनमें नया उत्साह भरा। उसने प्रण किया कि यदि ईश्वर ने उसे इस युद्ध में विजयी वना दिया तो वह भविष्य में शराव नहीं पियेगा। उसका साहस और उसकी वीरता का उसके सैनिकों पर वड़ा प्रभाव पड़ा। राजपूत पराजित हुये और इस प्रकार वावर ने मुगल-साम्राज्य की नींव भारत में डाली।

वावर के वाद उसका पुत्र हुमायूँ सिंहासनारूढ़ हुआ। किन्तु वह उतना प्रभावशाली नहीं था। उसे विहार के अफगान शासक शेरशाह का सामना करना पड़ा। शेरशाह एक योग्य व्यक्ति था। उसने हुमायूं को दो युद्धों में हराया और वह हिन्दुस्तान का शासक वन गया। हुमायूं को भारत से भागना पड़ा। शेरशाह ने राज्य का संगठन किया और अपनी सहायता के लिए योग्य व्यक्तियों को नियुक्त किया। टोडरमल भी उनमें से एक था। उसके नेतृत्व में भूमिकर प्रणाली में वहुत से सुधार हुए। सारी भूमि की नाप हुई और राज्य का भाग वसूल करने के लिए अधिकारी नियुक्त किये गये। राज्य का भाग $\frac{1}{3}$ था। शेरशाह कृषकों की भलाई का सदा ध्यान रखता था। उसकी सेना भी संगठित थी। घोड़ों को दागने की प्रथा उसीने प्रचलित की। पुलिस की व्यवस्था में भी सुधार हुआ। न्यायालय भी सुधारे गये। वहुत सी नई सड़कें वनाई गईं। दोनों ओर छायादार वृक्ष लगाये गये। सराएँ वनवाई गईं, जहाँ लोग ठहर सकते थे और भोजन वना सकते थे। उनकी सुविधा के लिए पानी पिलाने-वालों की नियुक्ति की गई। यदि किसी गाँव में चोरी हो जाती थी तो गाँव का मुखिया उसके लिए उत्तरदायी होता था। अभाग्यवश शेरशाह ने वहुत थोड़े दिन शासन किया। उसके द्वारा प्रचलित किये गये वहुत से सुधार इतने महत्वपूर्ण थे कि महान् मुग़ल सम्राट् अकवर ने भी उनको अपनाया।

अकवर

जिस समय अकवर का वाप मरा वह केवल १३ वर्ष का वालक था। उस समय

भारत की दशा वहुत सन्तोषजनक नहीं थी। यह छोटे-छोटे अनेक राज्यों में विभक्त था। विभिन्न प्रान्तों के शासक केन्द्रीय सरकार से सम्बन्ध विच्छेद करना चाहते थे। एक छोटे वालक के लिए अपने वंश का राज्य पुनः स्थापित करना कठिन कार्य था।

किन्तु अकवर एक दृढ़प्रतिज्ञ वालक था और उसका अभिभावक बैरम खाँ वहुत योग्य व्यक्ति था। पानीपत के द्वितीय युद्ध (१५५६) में उसने अफगान मंत्री हेमू को पराजित किया। किन्तु वह घमंडी हो गया और राज्य के सरदारों का अपमान करने लगा। इस वात को अकवर ने शीघ्र ही समझ लिया। उसने उसकी शक्ति कम करने के लिए कदम उठाया और उसे मक्का जाने के लिए वाध्य किया। बैरम से छुटकारा पाकर अकवर ने शासन की वागडोर अपने हाथ में ली। वह वहुत महत्त्वाकांक्षी था और अपने साम्राज्य को वढ़ाने की योजना वनाने लगा। उसने अपना विजयी जीवन गोंडवाला के छोटे राज्य पर आक्रमण करके प्रारम्भ किया। गोंडवाना में रानी दुर्गावती राज्य करती थी, क्योंकि उसका पुत्र अभी अल्पवयस्क था। रानी वीरतापूर्वक लड़ी। किन्तु पराजित हुई और युद्ध में मारी गई। तत्पश्चात् अकवर ने अनेक विद्रोहियों को दवाया और अपने साम्राज्य में नये भू भाग सम्मिलित किये। स्वभावतः अकवर एक सहिष्णु और विशाल हृदय का वादशाह था। उसने हिन्दुओं के साथ सहानुभूति दिखाई और उनसे मित्रता स्थापित की।

अकवर का विजयी जीवन तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है, उत्तरी भारत की विजय, पश्चिमोत्तर सीमा के कवीलों का दमन और दक्षिण की विजय। ग्वालियर, अजमेर और जौनपुर की पुनः विजय के साथ उसका साम्राज्य-विस्तार प्रारम्भ हुआ। उसके वाद मालवा पर भी अधिकार किया गया। तत्पश्चात् वह राजपूताने की ओर गया। उसने आमेर के साथ सन्धि की और कछवाहा वंश के राजपूत सर्दार राजा विहारीमल की पुत्री से विवाह किया। चित्तौड़, रणथम्भौर और कालिंजर जीत लिये गये। जैसलमेर, जोधपुर और बीकानेर के राजकुमारों ने भी अपना सिर झुका दिया। गुजरात और बंगाल भी मुगल राज्य में मिलाये गये। कावुल और काश्मीर साम्राज्य के भाग वन गये। सिन्ध और विलोचिस्तान भी साम्राज्य में सम्मिलित कर लिये गये। निजामशाही राज्य अर्थात् अहमदनगर के लिए अकवर की सेना का सामना करना कठिन था। उसकी वीर नेत्री

चांद वीवी भी पराजित हुई। इन विजयों के वाद अकवर का साम्राज्य सारे संसार में सवसे विस्तृत, शक्तिशाली और सम्पन्न हो गया।

केवल भारत के इतिहास में ही नहीं, वल्कि सारे संसार के इतिहास में अकवर प्रसिद्ध राजाओं में से है। वह मध्यम उँचाई का व्यक्ति था। उसका रंग गेंहुआ था। उसकी आँखें ओर भौंहे काली थीं। उसकी छाती विशाल और भुजायें लम्वी थीं। उसके शरीर का गठन शेर का सा था। उसकी वाणी मनोहर तथा ओजपूर्ण थी। उसकी आकृति इतनी वैभवपूर्ण और प्रभावशाली थी कि उसको देखते ही मालूम होता था कि वह राजा है। वह चाल ढाल से राजा प्रतीत होता था।

वह खूव हँसता था, मजाक करता था। उसका स्वभाव वहुत अच्छा था। उसका व्यवहार सौजन्यपूर्ण था। वास्तव में वह वड़ों के साथ वड़ा और छोटों के साथ छोटा वन जाता था। उसकी प्रजा उससे प्रेम करती थी। वह वहुत वुद्धिमान् था।

पोशाक उसकी मुसलमान वादशाहों की सी थी। उसके वस्त्र सुन्दर रेशम के वने होते थे। वह आभूषणों का वहुत प्रेमी था। वह यूरोपीय वस्त्र भी पसन्द करता था और कभी कभी उन्हें पहनता भी था। खाने-पीने में वह वहुत संयमी था। वह दिन में केवल एक वार भोजन करता था और कभी नहीं पूछता था कि आज क्या भोजन वना है। वह मांस वहुत कम खाता था। अपने हिन्दू मित्रों और स्त्रियों का ध्यान रखकर उसने लहसुन और प्याज खाना छोड़ दिया था। युवावस्था में वह शराव वहुत पीता था किन्तु वाद में उसने इसे छोड़ दिया था। वह अपने मित्रों और सम्वन्धियों से वड़े प्रेम से मिलता था। वह छोटे वच्चों को वहुत प्यार करता था।

अकवर दूरदर्शी शासक था। उसने जज़िया वन्द कर दिया था। जज़िया से हिन्दू वहुत अप्रसन्न थे। उसने और भी दूसरे कर हटा दिये। उसने राज्य के ऊँचे पदों पर हिन्दुओं को रखा। राजा मानसिंह को उसने प्रधान सेनापति नियुक्त किया। वह हिन्दू धर्म का आदर करता था और कोई ऐसा काम नहीं करता था जिससे हिन्दुओं को चोट पहुँचे।

धर्म के विषय में अकवर के विचार वड़े उदार थे। विभिन्न धर्मों के अनुयायियों को वह एकता के सूत्र में वाँधना चाहता था। फतेहपुर सीकरी में उसने एक पूजा-गृह (इवादत खाना) वनवाया। वह विभिन्न धर्मों के आचार्यों को वर्तालाप के लिए

अकबर और औरंगजब के समय में
मुग़ल साम्राज्य का विस्तार
अकबर का साम्राज्य
औरंगजेब द्वारा विस्तृत
काबुल
पेशावर
श्रीनगर
स्यालकोट
लाहौर
जलन्धर
मुल्तान
पानीपत
देहली
आगरा
अयोध्या
जोधपुर
अजमेर
ग्वालियर
बनारस
पटना
इलाहाबाद
चित्तौड़
उदयपुर
पाटन
अहमदाबाद
उज्जैन
नर्मदा
बुरहानपुर
सूरत
दौलताबाद
अहमदनगर
सतारा
बीदर
वारंगल
गोलकुण्डा
बीजापुर
कोल्हापुर
बेलारी
गोआ
नेलोर
मद्रास
मंगलोर
पांडीचेरी
नेगापट्टम
कालीकट
त्रिचनापल्ली
कोचीन
मदुरा
पुरी
चन्द्रनगर
कलकत्ता
ढाका
टाँडा
अरब सागर
बंगाल की खाड़ी
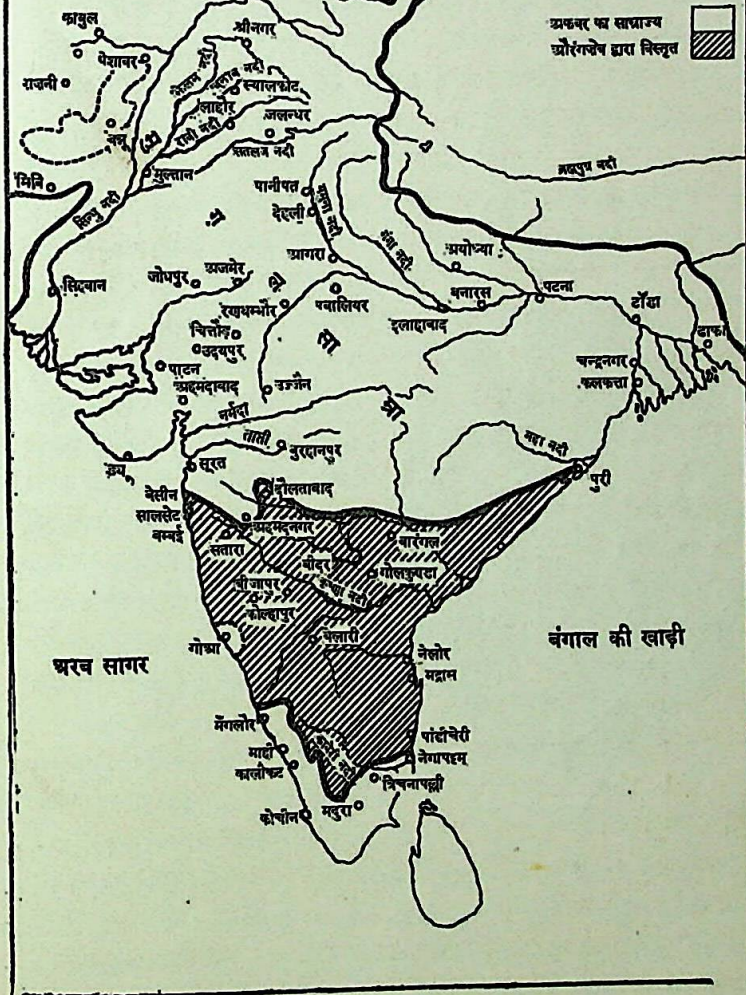
वहाँ बुलाता था। कुछ वर्षों के बाद उसने 'दीन-इलाही' नामक एक धर्म चलाया। उसमें सभी धर्मों की अच्छी बातें रखी गईं। इस धर्म में किसी को पैगम्बर नहीं माना गया। सम्राट् ने अपने को इसका प्रवर्तक घोषित नहीं किया। वह नहीं चाहता था कि लोग उसे ईश्वर या पैगम्बर मानें। इस धर्म को चलाने में अकबर का उद्देश्य विभिन्न धर्मों में एकता स्थापित करना था। किन्तु हिन्दू और मुसलमान किसी ने इसको पसन्द नहीं किया। बीरबल ही एक हिन्दू था जिसने इस धर्म को स्वीकार किया था।

अकबर के बाद उसका बेटा जहाँगीर गद्दी पर बैठा। मुगल वंश का वह एक अद्भुत व्यक्ति था। वह बहुत बुद्धिमान् था। उसने अपने बापकी नीति को प्रचलित रखा। वह शिकार खेलना बहुत पसन्द करता था। उसका शासन न्यायपूर्ण था। किले के फाटक पर उसने एक सोने की जंजीर लटकवा दी थी। उस जंजीर में बहुत से घंटियाँ बँधी हुई थीं। यदि राजा से किसी को कुछ शिकायत करनी होती थी तो उसे केवल इस जंजीरकोखींचना पड़ताथा और घंटी बादशाह के कमरे में बजती थी किन्तु वास्तव में डर के मारे बहुत कम लोग इसका प्रयोग करते होंगे।

जहाँगीर

जहाँगीर के दरबार में मिर्जा गयासबेग नामक एक ईरानी अमीर था। उसकी एक बेटी थी जिसका नाम था नूरजहाँ। नूरजहाँ के पति की मृत्यु के बाद जहाँगीर ने उससे विवाह किया था। उसके साथ उसका गहरा प्रेम था। उसके जीवन के अन्तिम क्षण तक नूरजहाँ उसकी साथी और मार्ग-प्रदर्शक बनी रही। जहाँगीर शिक्षित व्यक्ति था। वह कला और चित्रकारी का प्रेमी था। हिन्दी गीतों में भी उसकी रुचि थी और हिन्दी कवियों को वह पुरस्कार भी देता था। प्राकृतिक दृश्यों को वह बहुत पसंद करता था।

इसका पता इस बात से चलता है कि वह प्रायः कश्मीर सैर करने जाया करता था।

किन्तु इन सद्गुणों के साथ उसमें कुछ दुर्गुण भी थे। अधिक शराब पीने के कारण उसका स्वास्थ्य खराब हो गया था। दूसरों का उस पर बहुत शीघ्र प्रभाव पड़ जाता था। कुछ वर्षों के बाद वह काहिल और विलासप्रिय हो गया और राज्य का सारा प्रबन्ध उसने दूसरों के हाथों में छोड़ दिया।

शाहजहाँ जहाँगीर का तीसरा बेटा था। उसका दादा अकबर उसको बहुत चाहता था? जहाँगीर के सभी बेटों में वह उसे सबसे योग्य समझता था। उसे अच्छी शिक्षा मिली थी। वह दृढ़-संकल्प और सच्चरित्र व्यक्ति था। अन्य राजकुमार खूब शराब पीते थे किन्तु शाहजहाँ कभी उसे छूता भी नहीं था। वह एक प्रतिभाशाली शासक था। अपने शासन-काल में उसने बहुत से सुन्दर भवन बनवाये। अपनी स्त्री की स्मृति में बनवाया हुआ उसका ताजमहल आज भी उसकी सम्पदा और वैभव का द्योतक है। यह सफेद संगमरमर का बना हुआ है और संसार की सात अद्भुत चीजों में इसकी भी गिनती की जाती है। उसका तख्तताऊस (मयूरासन) भी उतना ही अच्छा था। उसको बनवाने में एक करोड़ रुपया लगा था। आगरा और दिल्ली के किलों में उसने अनेक सुन्दर भवन बनवाये। सुन्दर वस्त्रों और आभूषणों का भी वह बहुत प्रेमी था। बुढ़ापे में वह अति क्षीण हो गया और अपने पुत्रों पर नियंत्रण नहीं रख सका। उन्होंने विद्रोह का झंडा उठाया और वे परस्पर युद्ध करने लगे। अन्त में औरंगजेब ने सबको पराजित किया और वह हिन्दुस्तान का सम्राट् बन गया। शाहजहाँ आगरे के किले में बन्दी बना लिया गया और वहीं

शाहजहाँ

आठ वर्ष के वाद मर गया। वन्दीगृह में उसकी पुत्री जहानारा ने वड़े भक्तिभाव से उसकी सेवा की।

औरंगजेव की गणना मुगल वंश के महान् शासकों में की जाती है। उसकी युवावस्था से ही उसकी महानता की झलक दिखाई देने लगी थी। उसमें शारीरिक वल था। अनेक युद्धों में उसने अपनी शक्ति का परिचय दिया था। वह उच्चकोटि का सेनापति भी था। वह विद्वान् भी था और कुरान को भली भाँति जानता था। अपने हाथ से उसने कुरान की कई प्रतियों की नकल की थी। वह कविता लिख सकता था, किन्तु इसमें उसकी रुचि नहीं थी। वह कहता था कि कवि झूठी वातें लिखते हैं। संगीत उसे प्रिय नहीं था। वह अपने धर्म का पक्का था और सादा जीवन व्यतीत करता था। वह वहुत कम खाता था, केवल तीन घण्टे सोता था और शराव कभी नहीं पीता था। वह वहुत कम कपड़े पहनता था, आभूषणों का वहुत कम प्रयोग करता था और राज्य-कोप से अपने लिए कुछ भी नहीं लेता था। अपने व्यक्तिगत व्यय के लिए वह टोपियाँ वनाया करता था।

औरंगजेव

वह इतना कठोर था कि कोई भी व्यक्ति उसके सामने झूठ नहीं वोल सकता था और अपशव्द नहीं निकाल सकता था। वह अपने परिवार वालों के साथ वहुत प्रेम नहीं करता था। उसके लड़के उससे डरते थे। एक तो उसका पत्र पाकर पाला पड़ जाता था।

किन्तु उसके वुढ़ापे के साथ मुगल-साम्राज्य का पतन प्रारम्भ हुआ। साम्राज्य में चारों ओर विद्रोह होने लगे। राजपूत, मराठा, जाट, वुन्देले और सिक्ख सभी विद्रोही हो गये। जोधपुर, मेवाड़ और आमेर(जयपुर) उस समय राजपूताने

के प्रमुख राज्य थे। औरंगजेब की मृत्यु के थोड़े दिन वाद जोधपुर के राजा ने कर देना वन्द कर दिया और अपने राज्य से मुसलमानों को वाहर निकाल दिया।

गुरु गोविन्दसिंह की मृत्यु के वाद सिक्खों ने वन्दावहादुर को अपना नेता वनाया। उसने कुछ अनुयायियों को एकत्र किया और विद्रोह का झंड़ा उठाया। सिक्खों ने पहले सरहिन्द पर आक्रमण किये और मुगलों से लड़ने के लिए उनकी सेना चारों ओर फैल गई। किन्तु कुछ समय के वाद सिक्ख सेना पराजित हुई। वन्दा वहादुर पकड़ा गया और मार डाला गया। उसके साथ नृशंसता का वर्त्ताव किया गया मुगलों का फिर अधिकार स्थापित हो गया।

मुगल सेना दक्षिण से हटा ली गई, किन्तु तुरन्त ही मराठों ने आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने वहुत से किलों पर अधिकार कर लिया और वहाँ से मुगल साम्राज्य पर आक्रमण करना प्रारम्भ किया। मुगल साम्राज्य की शक्ति दिन-प्रति-दिन क्षीण होने लगी।

सम्राट् ने जिन शासकों को प्रान्तों में नियुक्त किया था, वे भी केन्द्रीय सरकार के विश्वासपात्र न रहे। उनमें से वहुत से स्वतंत्र हो गये। उन्होंने अपनी सेना संगठित की और अपने स्वाधीन राज्य स्थापित कर लिये।
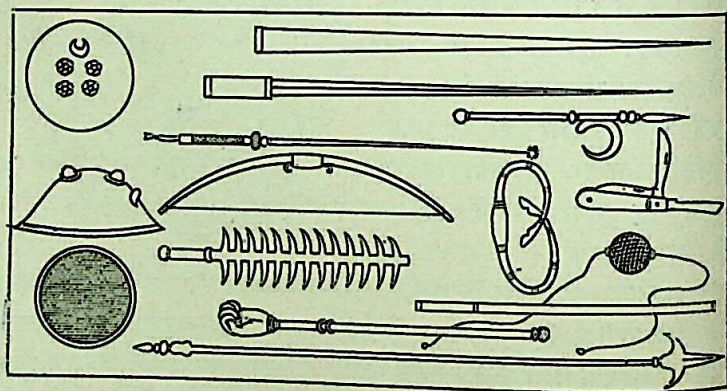
मुगलकालीन अस्त्र-शस्त्र

मुगल-साम्राज्य संसार के सवसे समृद्ध और महान साम्राज्यों में था। किन्तु इसका पतन वहुत शीघ्रता से हुआ। इस पतन का मुख्य कारण औरंगजेब की धार्मिक

मदान्धता थी। वह असहिष्णु था और विधर्मियों से घृणा करता था। हिन्दू और मुसलमानों को मिलाने का प्रयत्न करके अकबर ने बुद्धिमानी का कार्य किया था। वह महान् राजनीतिज्ञ था। उसने देखा कि उसकी प्रजा में विभिन्न जातियों और सम्प्रदायों के लोग हैं। इनके साथ उदारता का वर्त्ताव करने से ही सहयोग प्राप्त हो सकेगा। वह सारी प्रजा का समर्थन प्राप्त करना चाहता था। हिन्दुओं के प्रति वह दयालु था। वास्तव में हिन्दू और मुसलमान में उसने कोई भेद-भाव नहीं रखा। बहुत से हिन्दू राज्य के ऊँचे पदों पर नियुक्त हो गये और बड़ी लगन से उन्होंने साम्राज्य की सेवा की। टोडरमल, मानसिंह, भगवानदास और बीरबल का नाम सभी लोग जानते हैं। हिन्दुओं ने सर्वप्रथम एक ऐसा मुसलमान सम्राट् देखा जिसने उनके साथ अच्छा वर्ताव किया और उनकी धार्मिक भावनाओं का आदर किया। अतः वे राजभक्त हो गये और उन्होंने राज्य की आज्ञाओं का पालन किया।

किन्तु औरंगजेब संकुचित हृदय का मनुष्य था। वह हिन्दुओं से घृणा करता था और उन्हें दबा देना चाहता था। उसने बहुत से मन्दिर तुड़वाये, जजिया फिर से लगाया और राज्य के पदों से हिन्दुओं को निकाल बाहर किया। औरंगजेब के कठोर नियंत्रण के समाप्त हो जाने पर देश में बड़ी अव्यवस्था फैल गई। सिक्खों ने पंजाब में विद्रोह किया। औरंगजेब ने उनके गुरु तेगबहादुर की हत्या करायी। इससे वे क्षुब्ध हुए और मुगल साम्राज्य के नाश का उपाय करने लगे। जब गोविन्द सिंह गुरु की गद्दी पर बैठे तब इस विद्रोह ने प्रचंड रूप धारण किया। उन्होंने सिक्खों को एक सैनिक जाति में बदल दिया और युद्ध करने की आज्ञा दी। इसी तरह जाट और राजपूतों ने भी विद्रोह किया। राजपूतों ने मुगल राज्य की मदद से हाथ खींच लिया। औरंगज़ेब द्वारा किये हुये अपमान को वे न सह सके और उन्होंने जान लिया कि अब उसकी नीति घातक सिद्ध हो रही है। जाटों ने भी अपनी शक्ति बढ़ा ली। उन्होंने लूटमार करना आरंभ किया और भरतपुर में अपना एक स्वाधीन राज्य स्थापित कर लिया। मराठे दक्षिण में उत्पात कर ही रहे थे। उन्होंने बहुत पहले से साम्राज्य के नाश का बीड़ा उठाया था। औरंगज़ेब की मृत्यु होते ही साम्राज्य छिन्नभिन्न होने लगा। अमीरों में न पहले का सा उत्साह था, न वीरता। वे विलास-प्रिय होने के कारण अशक्त हो चुके थे। जनता में असंतोष फैला हुआ था। किसानों की दशा दयनीय

थी। दस्तकार, कारीगर वेकार हो रहे थे। साम्राज्य की आर्थिक दशा संतोष जनक नहीं थी। मुगल राज्य का पतन अवश्यम्भावी सा हो रहा था।

मुगल राजकुमार सिंहासन के लिए परस्पर लड़ने लगे। मुगल सेना की शक्ति कम हो गई और उसका अनुशासन क्षीण हो गया। सैनिक कौशल तथा वीरता का अभाव होने लगा। साम्राज्य वहुत विस्तृत हो गया था। उन दिनों शीघ्र आवागमन के लिये रेलवे तथा अन्य साधन नहीं थे। इसके अतिरिक्त उस समय विदेशी आक्रमणों ने साम्राज्य को जर्जर कर दिया था। इनमें नादिरशाह का आक्रमण सवसे अधिक प्रसिद्ध है।

नादिरशाह एक गड़रिये का लड़का था। केवल अपनी योग्यता के वल पर वह फारस का राजा वन गया था। लूट और विजय के लोभ ने उसे भारत की ओर खींचा। एक विशाल सेना लेकर उसने दिल्ली पर चढ़ाई की। मुगल सम्राट् मुहम्मदशाह को उसने पराजित किया। सैनिकों और गल्ले के व्यापारियों में झगड़ा होने के कारण उसने सारे दिल्ली निवासियों को मार डालने की आज्ञा दे दी। हजारों का सिर उड़ा देने और नागरिकों की सम्पत्ति लूट लेने के वाद नादिरशाह
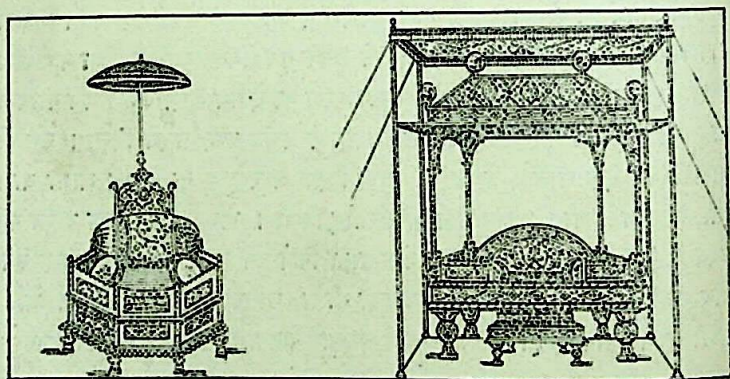
तख्त ताऊस

अपने देश को लौट गया। उसने राज-भवन को भी लूटा और जो कुछ वहुमूल्य पदार्थ उसके हाथ लगे उन्हें साथ लेता गया। विश्वविख्यात तख्तताऊस को भी वह अपने साथ ले गया।

मुगलों के समय के राज्य-संगठन और आज के राज्य-संगठन में बहुत कुछ सादृश्य है। किन्तु बहुतसा अन्तर भी है। आजकल की भाँति सारा मुगल-साम्राज्य सूबों में विभाजित था। आजकल के प्रान्तीय गवर्नरों की तरह उस समय भी प्रत्येक प्रान्त में सूबेदार होते थे। भूमि कर की व्यवस्था भी समान ही थी। बहुत से अधिकारी थे जो न्याय का प्रबन्ध करते थे। न्याय के लिए काजी थे। शहरों में कोतवाल होते थे जो शान्ति और व्यवस्था की देखभाल करते थे।

किन्तु आज की केन्द्रीय सरकार की अपेक्षा मुगल-काल की केन्द्रीय सरकार के कर्तव्य कुछ कम थे। सम्राट् की आज्ञा सर्वोपरि थी। उसकी आज्ञा ही राज्य का कानून थी। आजकल ऐसा नहीं है। मुगल-शासन स्वेच्छाचारी था और उत्तरदायी नहीं था। आजकल की सरकार उत्तरदायी है। उससे जनता का सम्बन्ध है। विभिन्न अधिकारी अपने प्रान्तों में अपने नीचे के अफसरों के बढ़ते हुए अनुचित प्रभाव को रोकते थे। इस प्रकार नियंत्रण रहता था। गाँवों में स्वायत्त शासन था। ग्राम-पंचायतों के बड़े अधिकार थे। हिन्दुओं के बहुत से झगड़े इन पंचायतों में तय होते थे। मुगल-काल की सबसे बड़ी बात यह थी कि इस काल में एक नई संस्कृति का विकास हुआ था।

बुलन्द दरवाजा

हिन्दू और मुसलमान संस्कृतियों के विभिन्न तत्वों के मेल से इस नवीन संस्कृति का जन्म हुआ था। यह न तो केवल हिन्दू संस्कृति थी और न केवल मुसलमान संस्कृति। इसमें दोनों संस्कृतियों का सम्मिश्रण था। अकबर के समय में हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के निकट आये और उन्होंने एक दूसरे से बहुत सी बातें सीखीं। इन दो जातियों को मिलाने में सूफी सन्तों ने भी सहायता की। औरंगजेब की तरह कुछ शासकों के समय में इन दो जातियों में काफी वैमनस्य और विरोध
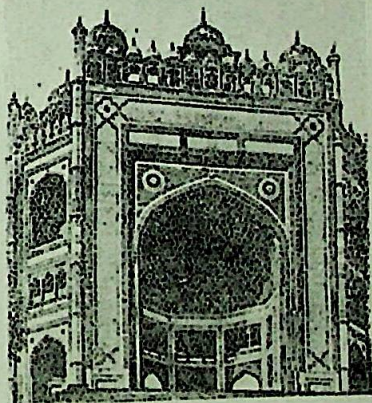
रहा किन्तु इन दोनों ने इस नई संस्कृति के विकास में सहयोग दिया। शिल्प-विद्या, चित्रकारी और संगीत इत्यादि में एक नई शैली का विकास हुआ। आगरा का किला, ताजमहल, फतहपुर सीकरी के राज्यभवन, सिकन्दरे में अकवर का मकवरा दिल्ली का किला, दीवान खास, दीवान आम, जामा मस्जिद इत्यादि सुन्दर भवनों को देखने से इस नई शैली की सुन्दरता का पता लगता है।

सर टामस रो

मुगल सम्राट विद्वानों के आश्रय दाता थे। हिन्दू मुसलमान सव उनके दर्बार में जाते थे और अपनी कृतियों से उन्हें प्रसन्न करते थे और पुरस्कार पाते थे। व्रजभाषा को उनके समय में वड़ा प्रोत्साहन मिला था। हिन्दी के कवियों का दरवार में सम्मान था। मुसलमान भी इनकी कविता से प्रभावित होते थे। अब्दुर रहीम खानखाना स्वयं हिन्दी में कविता करता था। उसके दोहे आजतक पढ़े जाते हैं।

मुगल शासन-काल में वहुत से यूरोपीय व्यापारी और यात्री भारत आये। कुछ यूरोपीय कारखाने भी स्थापित हुए। यूरोप से आनेवालों में सर टामस रो सवसे प्रसिद्ध हैं। वह जहांगीर वादशाह के समय में आया था। उसने साम्राज्य और उसके शासन प्रवन्ध का सुन्दर विवरण दिया है। यूरोप के लोग भारतीय कारीगरों के हाथ की वनी वस्तुएँ अपने साथ ले जाते थे। वहाँ वे वहुत पसन्द की जाती थीं।

मुगलकालीन भारत के जीवन का हाल हमें वहुत सी पुस्तकों और सरकारी लेखों में मिलता है। टैवर्नियर और वर्नियर की तरह कुछ यूरोपीय यात्रियों ने जो कुछ देखा उसको लिखा है। वावर और जहाँगीर के जीवन चरित्र और अवुल फज़ल की 'आईन-ए-अकवरी' से उस समय की सामाजिक दशा का पता लगता है।
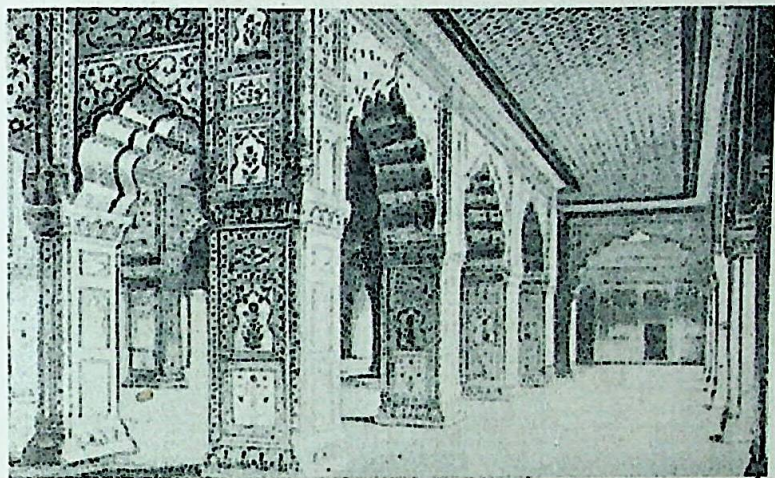
दीवान-ए-खास
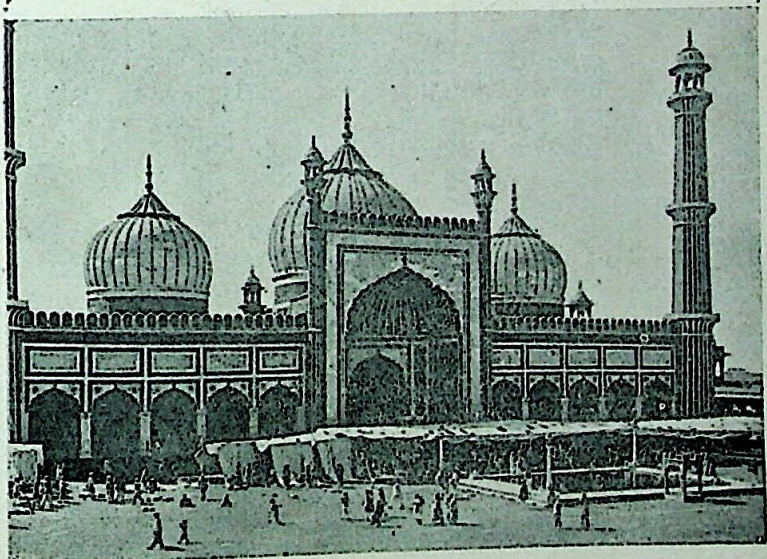
जाम-मसजिद (दिल्ली)
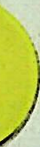
उच्च श्रेणी के लोगों का जीवन विलासितापूर्ण था। अधिकतर रईस लोग शराब पीते थे। वे अपने सम्राटों के स्वभाव और रुचि का अनुकरण करते थे और बहुत से

मुगलकालीन वाद्य-यन्त्र

नौकर चाकर रखते थे। बड़ी-बड़ी दावतें हुआ करती थीं। राज-दरबारियों को मूल्यवान् वस्त्र और आभूषण पहनने पड़ते थे। धनी व्यक्तियों के लिए कई प्रकार के खेल और आनन्द के साधन थे। अमीर लोग राज-भवनों में रहते थे, हर प्रकार की विलासिता का आनन्द उठाते थे और दीन लोगों के पैसे को अपने व्यक्तिगत सुख के लिए पानी की तरह व्यय करते थे।

मध्यम वर्ग का जीवन सादा था। यूरोपीय यात्रियों ने नैतिकता और धार्मिक भावना के लिए हिन्दुओं की प्रशंसा की है। उनका लेख है कि हिन्दू सदाचारी थे, अपने कर्त्तव्य का पालन करते थे, उनका गार्हस्थ जीवन शांत एवं सुखमय था, वे तीर्थ यात्रा आदि को जाते थे। उनका व्यवहार सच्चा और निष्कपट होता था। शासकों के भय से धनी लोग अपना धन छिपा कर रखते थे, क्योंकि कभी कभी ये शासक उनका धन बिना किसी हिचक के छीन लेते थे। इसलिए रुपया होते हुए भी वे बड़ी कंजूसी से रहते थे।

समाज के सम्पत्तिशाली और सम्पत्तिहीन व्यक्तियों के जीवन में महान अन्तर था। किन्तु इस समय सारे संसार में परिस्थिति लगभग एक ही प्रकार की थी। वस्तुओं का भाव सस्ता था, अधिकतर लोगों की आय भी बहुत ही कम थी।

अभ्यास

१. मुगल-साम्राज्य की नींव डालनेवाला कौन था ? वह कहाँ से आया था ?
२. शेरशाह क्यों महान् शासक कहलाता है ?
३. अकबर की नीति के बारे में आप क्या जानते हैं ? वह राष्ट्रीय राजा क्यों कहलाता है ?
४. रानी दुर्गावती इतिहास में क्यों प्रसिद्ध है ?
५. अकबर के चरित्र और व्यक्तित्व का वर्णन कीजिए।
६. दीन-इलाही का क्या अर्थ है ? वह क्या था ?
७. नूरजहाँ कौन थी ?
८. शाहजहाँ इतना क्यों प्रसिद्ध है ? ताज के विषय में आप क्या जानते हैं ?
९. औरंगजेब के चरित्र का वर्णन कीजिए।
१०. मुगल-साम्राज्य के पतन के क्या कारण थे ?
११. मुगलों ने जिस नई संस्कृति का निर्माण किया उसके विषय में आप क्या जानते हैं ?
१२. मुगल कालीन जीवन का वर्णन कीजिए।

अध्याय ४

१७वीं शताब्दी में इँगलैंड की क्रान्ति

इंगलैंड ऐसा देश है जहाँ वैधानिक सरकार है। इसका अभिप्राय यह है कि वहाँ का राजा स्वेच्छाचारी नहीं है। वह मनचाहा नहीं कर सकता। वह सदा अपने मंत्रियों की राय से काम करता है। मंत्री अपने कार्यों के लिए पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी होते हैं। पार्लियामेण्ट का निर्वाचन जनता करती है।

पहले राजा वहुत शक्तिशाली होते थे और कोई भी उनकी इच्छा के विरुद्ध काम नहीं कर सकता था। कुछ राजाओं ने पार्लिय मेण्ट की कभी पर्वाह नहीं की और केवल वहुत दवाव पड़ने पर ही पार्लियामेण्ट को वे बुलाते थे। हेनरी अष्टम और एलिजावेथ जैसे शासकों ने पार्लियामेण्ट को भी अपनी इच्छा के अनुसार झुका दिया। लोगों का विश्वास था कि राजा पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि होता है। प्रजा का कर्तव्य राजा की आज्ञा मानना और उसे कर देना है। राजसत्ता का विरोध करना ईश्वर की आज्ञा के विरुद्ध कार्य करना समझा जाता था।

किन्तु पुनरुत्थान और सुधार ने लोगों के विचारों और जीवन के ढंग में परिवर्तन कर दिया था। जहाजों द्वारा वाणिज्य और व्यापार के विकास का परिणाम वहुत वड़ा हुआ। राजनीतिक अधिकार अव तक राजा और उसके सरदारों के हाथ में थे। व्यापारी और सामान्य जनता नीची दृष्टि से देखे जाते थे। किन्तु व्यापारी, छोटे दूकानदार और भूमिपति अव समाज के महत्त्वपूर्ण अंग वन गये। इस महत्ता के साथ राजनीतिक अधिकार और सरकारी कार्यों में हाथ वटाने की उनकी इच्छा वढ़ गई। राजा और उसके मित्रों ने इनका विरोध किया। एक लम्वा युद्ध छिड़ गया। अन्त में इस नये वर्ग ने राजा और उसके समर्थकों को पराजित करने में सफलता पाई। पार्लियामेण्ट ने सभी अधिकार ले लिये। इसे १७वीं शताब्दी की अँग्रेजी क्रान्ति कहते हैं।

टयूडर वंश के राजा बड़े शक्तिशाली थे। उनके शासन-काल में इंगलैंड ने बहुत प्रगति की। आवश्यक सुधारों को कार्यान्वित करने में उन्होंने सहायता की। वे बहुत स्वेच्छाचारी और दृढ़ इच्छा वाले थे, किन्तु उनमें से कुछ, जैसे एलिजाबेथ, बहुत बुद्धिमान् और लोकप्रिय थे। लोग उसे राष्ट्रीय रानी समझते थे और उस पर गर्व करते थे। उसने अपनी बुद्धिमानी से रक्तपूर्ण धार्मिक और गृह युद्ध से इंगलैंड को बचा लिया था। उसी के समय में शैक्सपियर ने अपने अमर नाटकों की रचना की। व्यापार और वाणिज्य का विकास हुआ। लोगों के जीवन का स्तर ऊँचा उठ गया। दूर के देशों से अपार सम्पत्ति इंगलैंड में आ गई।

जेम्स प्रथम

टयूडरवंशीय राजाओं के बाद स्टुअर्ट वंश का राज्य हुआ। इस वंश के राजा स्काटलैंड से आये थे और टयूडर राजाओं की तरह लोग उनका सम्मान नहीं करते थे। अपनी इच्छानुसार एलिजाबेथ ने शासन किया, किन्तु उसे अपनी प्रजा के प्रेम और राजभक्ति पर विश्वास था। स्टुअर्ट राजाओं की जड़ इतनी दृढ़ नहीं थी। इसके अतिरिक्त वे अपनी प्रजा की भावनाओं को न तो समझ पाते थे और न उसके साथ सहानुभूति ही रखते थे। जेम्स प्रथम ने दिखाने के लिए रानी एलिजाबेथ की नीति का अनुसरण किया। उसने व्यापार और वाणिज्य को प्रोत्साहन दिया। किन्तु वह कैथोलिक राज्य स्पेन से मित्रता करना चाहता था। इंगलैंड के लोग इसे पसन्द नहीं करते थे; किन्तु किसी ने खुलकर उसका विरोध नहीं किया। शीघ्र ही बहुत सी समस्याएँ उठ खड़ी हुईं जिनके कारण राजा और पार्लियामेण्ट के बीच झगड़ा छिड़ गया। राजा जेम्स और उसका पुत्र चार्ल्स प्रथम दोनों 'दैवी अधिकार-सिद्धान्त' में विश्वास रखते थे। उन्होंने इस बात को माना कि वे केवल ईश्वर के प्रति उत्तरदायी हैं। उनके कार्यों की छानबीन करना प्रजा के लिए

ठीक नहीं है। इस तरह वे समझते थे कि वे जैसा चाहें, स्वतंत्रतापूर्वक शासन कर सकते हैं। उनकी प्रजा ने उनके इस विचार को स्वीकार नहीं किया और इस कारण युद्ध अनिवार्य हो गया।

पार्लियामेण्ट चाहती थी कि उसकी राय से कर लगाये जायें और कर देने-वालों का कर द्वारा वसूल किये गये रुपये पर नियंत्रण रहे। किन्तु राजा जेम्स का विचार इससे भिन्न था। वह निरंकुश शासक की तरह काम करता था। वह अपने को कानून से ऊपर समझता था। यहाँ तक कि अंगरेजी विधान द्वारा स्वीकृत प्रथाओं के विरुद्ध भी उसने बहुत से कर लगाये थे। प्रोटेस्टेंट धर्म के प्रति राजा उदारता का भाव नहीं रखता था। वह प्यूरीटनों (Puritans) को राजवंश के विरुद्ध समझता था। वह बहुत बड़ा विद्वान् था, किन्तु अहंकारी था। फ्रांस का राजा उसे "ईसाई जगत् का सबसे बुद्धिमान् मूर्ख" कहा करता था। कैथोलिक भी जेम्स से प्रसन्न नहीं थे क्योंकि उनके विरुद्ध एलिजाबेथ के समय के पुराने दंड विधान को उसने समाप्त नहीं किया था।

चार्ल्स प्रथम

जेम्स के बाद उसका पुत्र चार्ल्स सिंहासन पर बैठा। वह बहुत सुन्दर और उदार हृदय का था। किन्तु वह भी बहुत हठी था। उसने युद्ध में बहुत सा रुपया व्यय कर दिया। रुपया इकट्ठा करने के लिए वह नये कर लगाना चाहता था किन्तु उसकी माँग को मानने के लिए पार्लियामेन्ट तैयार नहीं थी। पार्लियामेंण्ट के नेता पिम (Pym), इलियट (Eliot) और हैम्पडन (Hampden) बुकिंघम के तीव्र विरोध में थे। बकिंघम राजा का परामर्शदाता था। उन्होंने राजा की नीति की आलोचना की और माँग की कि वह उसको निकाल बाहर कर दे। किन्तु वह राजा का घनिष्ट मित्र था। इस प्रकार पार्लियामेन्ट और राजा के बीच झगड़ा प्रारम्भ हुआ।

पार्लियामेण्ट राजा के अपरिमित अधिकार पर कुछ रोक लगाना चाहती थी। उसने अधिकारों का एक प्रार्थनापत्र प्रस्तुत किया। उसमें यह माँग की गई थी कि पार्लियामेण्ट से विना पूछे राजा कोई नया कर नहीं लगा सकता और विना मुक़दमा चलाये किसी को वन्दी नहीं वनाया जा सकता। इस प्रार्थनापत्र का वहुत वड़ा महत्त्व है। इससे राजा वहुत घवराया और जव उसने देखा कि पार्लियामेण्ट उसकी आज्ञा नहीं मान रही है तो उसने उसे विसर्जित कर दिया और नये नये कर लगाना प्रारम्भ कर दिया। शीघ्र ही समस्या टेढ़ी हो गई। इलियट इत्यादि नेता वन्दी वना लिये गये और पार्लियामेण्ट का फाटक वन्द कर दिया गया। ११ वर्ष तक विना पार्लियामेण्ट के शासन चलता रहा। इन दिनों चार्ल्स पूर्णरूप से स्वेच्छाचारी शासक था। उसने वलपूर्वक ऋण लेकर रुपया वसूल किया और सभी प्रकार के कर लगाये।

किन्तु इस काल के वाद उसे पार्लियामेण्ट को वुलाना पड़ा क्योंकि उसे रुपये की वहुत आवश्यकता थी। पार्लियामेन्ट ने उसकी माँगों का विरोध किया और उसने उसे फिर विसर्जित कर दिया। किन्तु पुनः दूसरी पार्लियामेण्ट उसे वुलानी पड़ी। जव इस द्वितीय पार्लियामेण्ट की वैठक हुई तो उसने राजा का विरोध करने का निश्चय किया। उसने यह भी तय किया कि अव राजा उसको विसर्जित नहीं कर सकता। यह 'दीर्घ पार्लियामेण्ट' कहलाती है और वीस वर्ष तक चलती रही। राजा का मंत्री स्ट्रैस्ट्राफ़र्ड देशद्रोही घोषित किया गया और पार्लियामेण्ट की आज्ञा से उसे फाँसी पर लटका दिया गया। जिन न्यायाधीशों ने राजा का समर्थन किया था उनको वन्दी वना लिया गया और जिन न्यायालयों ने लोगों को आतंकित कर रखा था, उन्हें समाप्त कर दिया गया। पार्लियामेण्ट के पाँच नेताओं को राजा वन्दी वनाना चाहता था। इनमें हैम्पडन भी था। उसने शिपमनी नामक कर नहीं दिया था। जव अपने सैनिकों के साथ राजा पार्लियामेण्ट भवन में पहुँचा तो उन पाँच नेताओं का स्थान रिक्त था। उसने कहा कि मैंने समझ लिया पक्षी उड़ गये हैं।

राजा और पार्लियामेण्ट का यह झगड़ा वढ़कर रक्तपूर्ण गृहयुद्ध के रूप में वदल गया। पार्लियामेण्ट के दल का नेता क्रामवेल था। राजा के समर्थकों के पास वहुत से घोड़े थे। इसलिए वे घुड़सवार (Cavaliers) कहलाते थे। पार्लियामेण्ट दल के लोग राउन्डहेड्स (Roundheads) कहलाते थे। उन्होंने नये ढंग से अपने सारे सर के वाल कटा रक्खे थे।
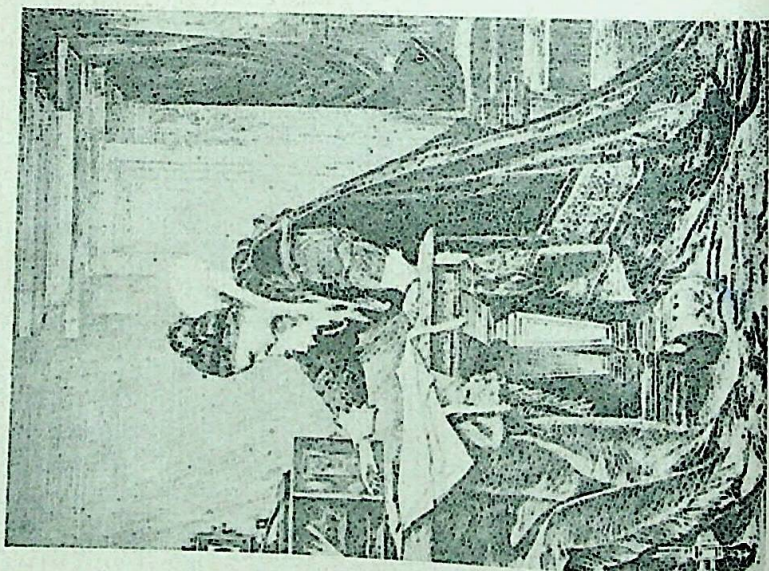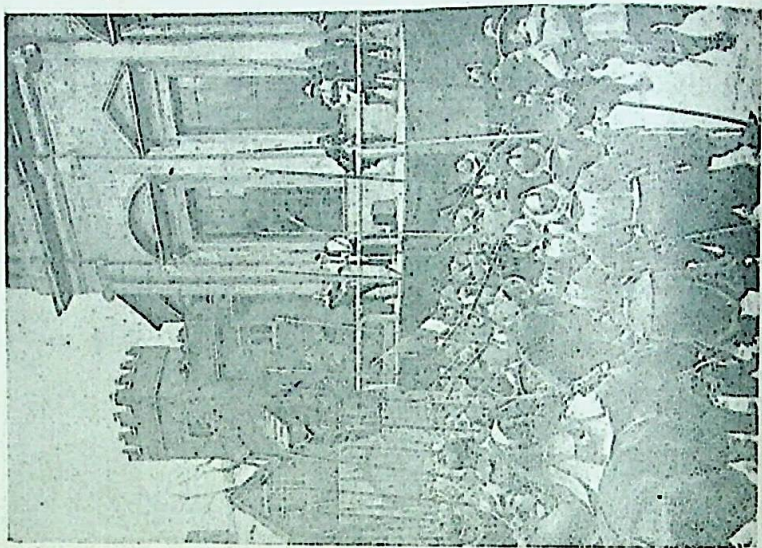
ओलिवर क्रामवेल पार्लियामेण्ट के दल का नेता था। वह एक धार्मिक व्यक्ति था। वह चाहता था कि उसकी सेना का प्रत्येक सैनिक अपने को ईश्वर की सेना का सैनिक समझे। उसने अपनी सेना को नये ढंग से संगठित किया और निर्भीकतापूर्वक पार्लियामेण्ट का कार्य करता रहा।
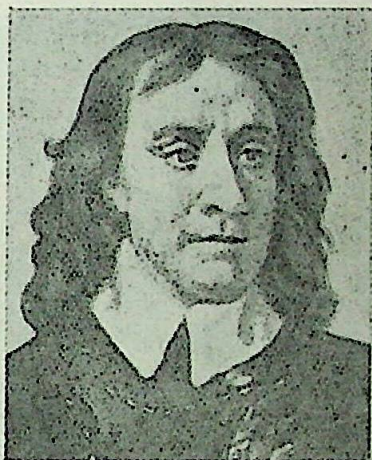
ओलिवर क्रामवल

कई युद्धों के वाद राजा चार्ल्स वन्दी कर लिया गया। उस पर अभि-योग चलाया गया और उसे प्राणदंड दिया गया। जव राजा ने इसकी आज्ञा सुनी तो उसने असाधारण धैर्य तथा शान्ति दिखलाई। फाँसी पर लटकाये जाने के पहले उसने अपनी पुत्री और छोटे पुत्र के साथ स्नेह प्रकट किया और दुखित मन से उनसे विदा ली। उसने अपने सेवक से दो कमीजें मांगी क्योंकि जाड़े की ऋतु थी। उसने कहा कि वह नहीं चाहता कि लोग यह समझें कि राजा डर से काँप रहा है। जव वह दंड देने-वाले के सामने आया तो उसने कहा कि मैं लोगों की वास्तविक भलाई के लिए मर रहा हूँ।

राजा की मृत्यु के वाद १० वर्ष तक इंगलैंड में कोई राजा नहीं हुआ। ओलिवर क्रामवेल शासन का प्रधान था। वह रक्षक कहलाता था। इस काल में सम्पूर्ण अधिकार उसके हाथ में था।

किन्तु शीघ्र ही लोगों को राजा की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। चार्ल्स प्रथम के पुत्र चार्ल्स द्वितीय ने यह सव देखा और वह क्रामवेल की मृत्यु के वाद फिर लौट आया। पार्लियामेण्ट के साथ उसने वड़ी बुद्धिमानी और नीति से काम लिया। किन्तु उसका भाई जेम्स द्वितीय जो उसके वाद सिंहासन पर वैठा वहुत ही अहंकारी था। उसने पार्लियामेण्ट से झगड़ा कर डाला। वह रोमन कैथोलिक था। इसलिए अँगरेज लोग डरते थे कि वह कहीं प्राचीन धर्म को पुनः स्थापित करके प्रोटेस्टैन्ट

लोगों को दंड न देने लगे और अपने बाप की भाँति आततायी न हो जाय। इस प्रकार सभी दलों के लोग उसके विरुद्ध हो गये। रानी के पुत्र होने पर लोगों ने सन्देह किया।
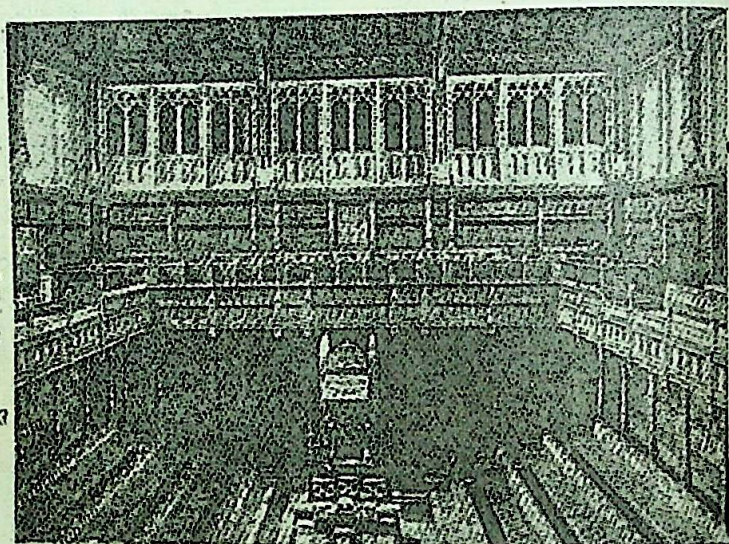
इँगलैंड का पार्लियामेण्ट भवन

उन्होंने सोचा कि रानी इतनी बूढ़ी है कि उसके बच्चा नहीं पैदा हो सकता। एक कैथोलिक उत्तराधिकारी को राज्य देने के लिए यह राजा का षड्यंत्र है। इसलिए उन्होंने उसके दामाद विलियम को उसकी लड़की मेरी के साथ इँगलैंड के सिंहासन पर बिठाने का निश्चय किया। विलियम प्रोटेस्टैन्ट था। बूढा जेम्स फ्रांस भाग गया। उसका सिंहासन रिक्त घोषित किया गया। १६८६ में विलियम और मेरी इंगलैंड के संयुक्त शासक बने। पार्लियामेण्ट द्वारा प्रस्तुत 'बिल आव राइट्स' (Bill of Rights) को राजा ने स्वीकार कर लिया। पार्लियामेन्ट की इच्छाओं के अनुसार देश का शासन करने के लिए वह तैयार हो गया। इस प्रकार राजा के हाथ से पार्लियामेण्ट के हाथ में शक्ति आ गई। इँगलैंड में वैधानिक शासन का यह प्रारम्भ है। यह 'गौरवपूर्ण क्रान्ति' कहलाती है क्योंकि इस क्रान्ति से इँगलैंड के लोगों की धार्मिक और नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा हुई। जिन लोगों ने पार्लियामेण्ट के

अधिकारों के लिए संघर्ष किया और लोगों की माँग को पूरा किया उन वीर लोगों के लिए यह महान् विजय थी ।

अभ्यास

१. पार्लियामेण्ट के साथ टयूडर राजाओं के क्या सम्वन्ध थे ?
२. चार्ल्स प्रथम का पार्लियामेण्ट के साथ क्यों झगड़ा हुआ ?
३. जेम्स द्वितीय को गद्दी से क्यों हटा दिया गया ?
४. इंगलैंड के इतिहास में 'क्रान्ति' का क्या महत्त्व है ?
५. इसको गौरवपूर्ण क्रान्ति क्यों कहते हैं ?

अध्याय ५

भारत ब्रिटिश साम्राज्य का एक अंग बनता है

औरंगजेव की मृत्यु के वाद मुगल-साम्राज्य छोटे छोटे भागों में विभक्त हो गया। सारे देश से शान्ति और व्यवस्था विदा हो गई। विभिन्न सूवों में नये-नये राज्य स्थापित हो गये। पंजाव में सिक्खों ने विद्रोह किया। राजपूतों ने भी मुगलों का साथ छोड़ दिया। दक्षिण में मराठे वहुत शक्तिशाली हो गये। प्रान्तीय शासक स्वयं निरंकुश शासक वन वैठे। वंगाल, अवध और देश के अन्य भागों में प्रान्तीय शासक विल्कुल स्वतंत्र हो गये और केन्द्रीय सरकार के नियंत्रण का उन्होंने कोई ध्यान नहीं रखा।

डूप्ले

मुगल सम्राट् इन दिनों अपने मंत्रियों के हाथ की कठपुतली हो रहे थे। ये मंत्री दरवार के परस्पर विरोधी दलों के नेता थे। किन्तु इनका प्रभाव केवल दिल्ली तक ही सीमित था। कभी एक दल शक्तिशाली हो जाता था और उसके मंत्रियों का प्रभाव सम्राट् पर हो जाता था; कुछ समय के वाद दूसरा दल शक्तिशाली हो जाता था और वह राजा को अपनी इच्छा के अनुसार चलाने लगता था। सम्राटों की कुछ नहीं चलती थी। इस काल में अनेक विदेशी आक्रमण हुए। नादिरशाह और अहमदशाह अव्दाली ने दिल्ली पर आक्रमण किया। साम्राज्य की दशा दयनीय हो गई और उसकी रक्षा की कोई आशा न रही।

देश की यह अव्यवस्थित दशा उन विदेशियों के लिए अच्छी थी जो भारत में अपना पैर जमाना चाहते थे। यूरोपीय व्यापारी, जो भारत में वहुत पहले से आये

हुए थे, देश की दशा को बड़े ध्यान से देख रहे थे। शीघ्र ही उन्होंने देखा कि अपनी शक्ति बढ़ाने का अच्छा अवसर है।

इस साहसपूर्ण कार्य में फ्रान्सीसियों ने सबसे पहले हाथ लगाया। फ्रान्सीसियों में डूप्ले प्रमुख व्यक्ति था। उसने सोचा कि आपस में लड़ते हुए भारतीय राजाओं की लड़ाइयों से लाभ उठाया जा सकता है। उसने देखा कि एक दल की सहायता करने पर यदि वह दल विजयी हो जाता है तो कुछ सुविधा मिलेगी। बाद में फ्रान्सीसियों की इस नीति को अंगरेजों ने भी अपनाया और उनके युवक सेनापति राबर्ट क्लाइव ने भारतीय राजनीति में भाग लिया। उत्तराधिकार के प्रश्न पर कर्नाटक और दक्षिण में इस समय संघर्ष छिड़ गया। फ्रान्सीसी और अंगरेज दोनों एक एक ओर हो गये और इन राज्यों में अपना अपना राजनीतिक प्रभाव स्थापित करने के लिए एक दूसरे के शत्रु हो गये। दक्षिण में पैर जमाने में फ्रान्सीसी असफल रहे किन्तु अंगरेज सफल हो गये।

सिराजुद्दौला

बंगाल में अंगरेज पहले से ही जम चुके थे। किन्तु वे ऐसे स्थान की खोज में थे जहाँ किले बनाकर रह सकें। अन्त में बड़ी छान-बीन के बाद जाब चारनाक ने १६९० ई० में कलकत्ता को चुना। इसीलिए वह कलकत्ते का संस्थापक कहलाता है। तत्पश्चात् मुगल सम्राट् से उसे आज्ञा मिल गई कि अंगरेज कलकत्ते में बस सकते हैं। बहुत साधारण वार्षिक कर देकर बंगाल में व्यापार करने की आज्ञा उन्हें मिल गई।
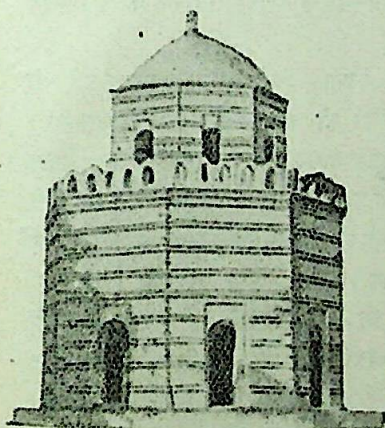
जाब चारनाक की समाधि

अलीवर्दी खाँ की मृत्यु के वाद जव सिराजुदौला नवाव हुआ तो उसका अंगरेजों से मतभेद हो गया। इसका कारण उनकी धृष्टता थी। उन्होंने नवाव के हुक्म की अवहेलना करना आरम्भ कर दिया। दिल्ली के वादशाह नें उन्हें चुंगी से मुक्त कर दिया था। परन्तु वे अव अपने दस्तक भारतीय व्यापारियों को वेच कर रुपया कमाने लगे। कलकत्ता तथा अन्य स्थानों में किले वन्दी करने लगे। कलकत्ते के चारों ओर उन्होंने एक खाई भी खोदी। इससे सिराजुदौला को वड़ी शंका हुई। इसी समय उसका एक अधिकारी भागकर अंग्रेजों की शरण में चला गया। नवाव ने अँगरेजों को लिखा कि उसे वापस करो, परन्तु उन्होंने आज्ञा का पालन नहीं किया।

इस पर नवाव ने कासिम वाज़ार पर चढ़ाई कर दी। वहाँ से नवाव की सेना कलकत्ते की ओर चली। अँगरेजो की कोठी पर हमला हुआ। वहुत से अँगरेज कैद कर लिये गये। वहुतों को क्षमा प्रदान कर दी गई। कहा जाता है कि नवाव ने वहुत से कैदियों को एक तंग कोठरी में वन्द कर दिया, जिसमें साँस लेने को भी जगह न थी। १४६ में से केवल २३ आदमी वचे। यह ब्लैक होल की घटना कही जाती है। यह सव हौलवैल नामक एक व्यक्ति की मन गढ़न्त कहानी है। जव यह खवर मदरास पहुँची तो वहाँ से अंगरेज़ों के दो सेनानायक क्लाइव और वाटसन कलकत्ते को रवाना हुए।

नवाव के दरवार मे उसके विरुद्ध षड़यन्त्र हो रहा था। मीरजाफ़र जो सिराजुद्दौला का सेनाध्यक्ष था अपने स्वामी को गद्दी से उतारना चाहता था। उसने क्लाइव से समझौता कर लिया ओर उसे नवाव होने पर वहुत सा धन देने का वादा किया। इसके अतिरिक्त यह भी तय हुआ कि मीरजाफ़र अंगरेजों की सारी कोठियाँ उन्हें लौटा देगा। मीरजाफ़र अपने स्वार्थ को सिद्ध करने की चेष्टा कर रहा था। उसने देश द्रोही का कार्य किया।

सिराजुद्दौला को विवश होकर युद्ध की तैयारी करनी पड़ी। उसे यह नहीं मालूम था कि उस की सेना उसके साथ विश्वासघात करेगी और न उसे इस वात का पता लगा कि उसकी सेना का वख्शी मीरजाफ़र शत्रु के साथ मिला हुआ है। जून सन् १७५७ में प्लासी के वाग के पास दोनों सेनाओं का सामना हुआ। मीरजाफ़र के अतिरिक्त उसके अन्य सेनापति यारलुत्फ़ खाँ और दुर्लभ राय भी अंगरेजो से मिले हुये थे। युद्ध आरम्भ होते ही तीनों सेनाध्यक्ष शत्रु की ओर चले

Devendra Prasad Mishra
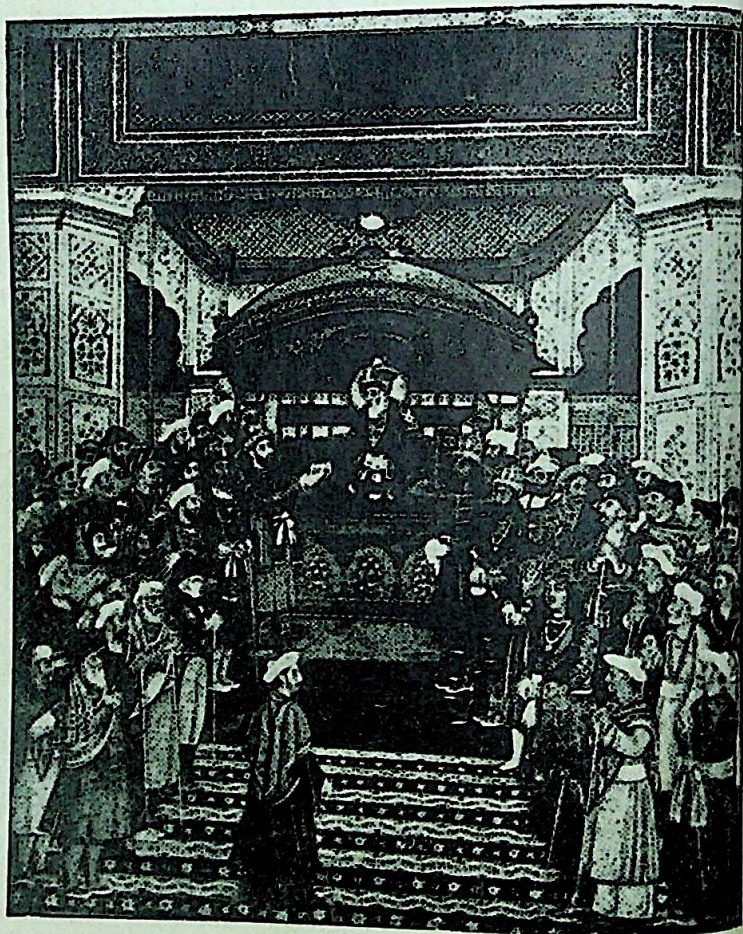
शाहआलम दीवानी दे रहा है।

गये और उन्होंने युद्ध में कुछ भी भाग न लिया। यह देखकर नवाब के सैनिक चकित रह गये। उन्होंने युद्ध किया परन्तु हार गये। नवाब भाग गया और मुर्शिदाबाद पहुँचा व्लाइव भी उसके पीछे पीछे चला। सिराजुद्दौला गिरफ्तार कर लिया गया। और मीरजाफ़र के बेटे ने उसे मार डाला।

मीरजाफ़र अब नवाब हो गया। परन्तु वह अंगरेजों के हाथ की कठपुतली था। वे जो कहते थे उससे कराते थे। रुपया भी उन्होंने उससे बहुत सा लिया और कोष खाली कर दिया। प्लासी की लड़ाई से वास्तव में नवाबी का अन्त ही हो गया। शासन प्रबन्ध बिगड़ने लगा। विदेशियों की शक्ति बढ़ने लगी। मीरजाफ़र से कुछ भी करते न बना। जब वह अंगरेजों को संतुष्ट न कर सका तो उन्होंने उसकी स्थिति असह्य कर दी। वे रुपया मांगते थे, वह दे नहीं सकता था। वे शासन में हस्तक्षेप करते थे; परिणाम यह होता था कि राज्य में भ्रष्टाचार फैलता और प्रजा को कष्ट होता था।
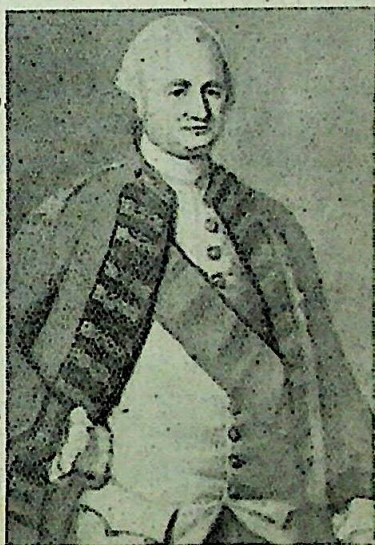
राबर्ट क्लाइव

अब अंगरेजों ने मीरजाफ़र को भी गद्दी से हटा दिया और उसके दामाद मीरकासिम को नवाब बनाया। मीर कासिम एक योग्य व्यक्ति था। उसने अंगरेजों की बेईमानी को रोकने की चेष्टा की, परन्तु इस कार्य में अनेक बाधाएं उपस्थित हुईं। शासन प्रबन्ध बिगड़ने लगा। अन्त में मीरकासिम को छुटकारा पाने के लिये युद्ध करना पड़ा।

बक्सर के युद्ध में वह पराजित हुआ। सन् १७६५ ई० में मुगल सम्राट् ने अंगरेजी कम्पनी को दीवानी दे दी। इसका अर्थ यह था कि बंगाल, बिहार और उड़ीसा की माल गुजारी वसूल करने का अधिकार

उन्हें मिल गया। यह वहुत बड़ी सुविधा थी। कम्पनी का प्रभाव बढ़ता गया।

जब वारेन हेस्टिंग्ज गवर्नर-जनरल हुआ तो देश का वास्तविक शासन कम्पनी के हाथ में आ गया। उसने शासन की नई व्यवस्था की और कई सुधार भी किये। परन्तु उसने कई कार्य ऐसे किये जिनके कारण उसकी बड़ी निन्दा हुई। नन्दकुमार नामक एक बंगाली ब्राह्मण को झूठा अपराध लगा कर उसने फाँसी का दंड दिलवाया। कम्पनी को रुपये की आवश्यकता होने पर उसने अनुचित साधनों का प्रयोग कर रुपया वसूल किया। बनारस के राजा चेतसिंह से उसने इसी तरह कई लाख रुपया मांगा और जब उसने देने में आनाकानी की तो हेस्टिंग्ज ने राजा को अपनी ही राजधानी में गिरफ्तार करने की चेष्टा की। नगर में विद्रोह हो गया और हेस्टिंग्ज की जान कठिनाई से बची। इसी प्रकार उसने अवध की बेगमों से बलात् रुपया वसूल किया। ये बेगमें फैजाबाद में रहती थी। उन पर उसने झूठा अपराध लगाया कि उन्होंने चेतसिंह की मदद की थी। इसका कोई प्रमाण नहीं था। बेगमों के नौकरों के साथ वहुत कठोर वर्ताव किया गया और उनसे जबरदस्ती रुपया लिया गया। इन दुष्कृत्यों के लिये गवर्नर-जनरल की बड़ी निन्दा हुई। जब वह इंगलैंड लौटकर गया तब वहाँ उसपर मुकदमा चलाया गया। अन्त में वह छूट गया, परन्तु उसका वहुत सा रुपया व्यय हो गया और बड़ी अपकीर्ति हुई।

इस समय अँगरेजों को जिन शत्रुओं का सामना करना पड़ा उनमें हैदरअली सबसे भयानक था। उसके शक्तिशाली होने की कथा वहुत ही रोचक है। मैसूर पहले विजय नगर राज्य में सम्मिलित था। विजयनगर के हिन्दू राज्य के पतन के बाद वह स्वतंत्र हो गया। हैदर एक सैनिक का पुत्र था। बचपन से ही उसने युद्ध में कौशल दिखलाया। जब मराठों ने मैसूर राज्य पर आक्रमण किया तो उसने उन्हें मार भगाया। धीरे धीरे वह शक्तिशाली हो गया और उसने राज्य के मंत्री खाण्डेराव को हटा दिया। कुछ समय तक वह राजा की प्रभुता को मानता रहा, किन्तु उसकी मृत्यु के बाद वह मैसूर का वास्तविक शासक बन बैठा। अब उसने विजय करना प्रारम्भ किया और मराठों तथा निजाम के विरुद्ध लड़ा। एक बार उसने कर्नाटक पर आक्रमण किया। उस आक्रमण में वह जहां कहीं भी गया उसने सत्यानाश कर दिया। अंगरेज उससे आतंकित हो गये और उसने उन लोगों को एक बार बुरी तरह पराजित किया। उसने अपने राज्य को अच्छी तरह संगठित

किया, सुन्दर शासन-प्रबन्ध किया और अपनी सहायता के लिए योग्य अधिकारियों की नियुक्ति की। उसका ब्राह्मण मंत्री पूर्णिया बहुत योग्य और उत्साही व्यक्ति था। उसने देश का शासन अच्छी तरह किया।

हैदरअली

हैदरअली की मृत्यु के बाद उसका पुत्र टीपू गद्दी पर बैठा। वह अपने पिता की भाँति योग्य शासक नहीं था। उसने युद्ध में वैसा उत्साह और जोश नहीं दिखाया। कहा जाता है कि हैदर साम्राज्य निर्माण के लिए पैदा हुआ था और टीपू उसको खोने के लिए। हैदर-अली सहिष्णु शासक था। उसने हिन्दुओं को सताया नहीं। उसकी सारी प्रजा उससे प्रसन्न थी। किन्तु टीपू उतना उदार नहीं था। हैदर योग्यता के आधार पर अधिकारियों को चुनता था, किन्तु टीपू मुसलमानों का पक्ष लेता था। उसने योग्य हिन्दुओं को भी शासन से हटा दिया और इस प्रकार राज्य को भारी क्षति पहुँचाई। टीपू शासन से भ्रष्टाचार और बेईमानी को दूर न कर सका। वह कठोर दंड देता था। किन्तु वह वीर मनुष्य था।

टीपू

जब लार्ड वेलेज़ली भारतवर्ष आया तो उसने देशी राज्यों के मामले में हस्तक्षेप न करने की नीति का परित्याग कर दिया। वह घोर साम्राज्यवादी था और भारत में इंगलैंड का पूर्ण आधिपत्य स्थापित करना चाहता था। इस

समय देशी शक्तियां दो ही थीं जो अंगरेजों से लोहा ले सकती थीं। ये थे टीपू और मराठे। निजाम की शक्ति का तो पहले ही ह्रास हो चुका था और वह अंगरेज़ों के साथ सन्धि कर चुका था। जब लार्ड वेलेजली ने अपनी सहायक-सन्धि प्रथा चलाई तो उसने टीपू से भी कहा; परन्तु उसने अपमानजनक शर्तों को स्वीकार नहीं किया और कहा कि ऐसी शर्तों के मानने से तो युद्ध में सैनिक की तरह मर जाना श्रेयष्कर है। अन्त में अंगरेजों ने युद्ध करने का निश्चय किया। लार्ड हैरिस अपनी सेना लेकर मैसूर की राजधानी की ओर बढ़ा। टीपू ने वीरता के साथ युद्ध किया और श्रीरंगपट्टन के किले की दीवारों के नीचे लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ।

उसके राज्य का बहुत सा भाग अंगरेज और उनके सहायकों ने आपस में बाँट लिया। मैसूर का राज्य उस पुराने वंश के एक व्यक्ति को दिया गया जिसे हैदरअली ने पदच्युत कर दिया था। टीपू के महल लूटे गये और उसका अनुपम पुस्तकालय भी अंगरेजो के हाथ लगा। उसके बेटे कैदकर वैलोर के क़िले में भेज दिये गये।

टीपू ने फ्रांसीसियों से सहायता की आशा की थी। वह फ्रांस के जनतंत्रराष्ट्र का सदस्य भी हो गया था। परन्तु भाग्य ने पलटा खाया। कहीं से उसे सहायता न मिल सकी।

टीपू एक योग्य शासक था। वह कट्टर मुसलमान था। इसलिये प्रजा उससे बहुत प्रसन्न न थी। परन्तु वह बड़ा वीर और आत्माभिमानी था। अंगरेज़ों से दबता नहीं था और न उनकी कुछ पर्वाह करता था।

तत्पश्चात् अँगरेज और मराठों की मुठभेड़ हुई। पेशवा के नेतृत्व में मराठों ने शक्तिशाली राज्य स्थापित कर लिया था। पहले पेशवा सतारा के राजा के मंत्री थे। किन्तु बाद में वे स्वतंत्र हो गये थे। उन्होंने सुदूर उत्तर में अपना साम्राज्य फैलाया, किन्तु उन्हें अफगानों का सामना करना पड़ा। अफगानों का नेता अहमदशाह बहुत बड़ी सेना लेकर आगे बढ़ा और मराठों को पानीपत के युद्ध (१७६१) में उसने पराजित किया। मराठा शक्ति के लिए यह युद्ध बहुत घातक सिद्ध हुआ। इसके बाद उनका उत्तर की ओर बढ़ना बन्द हो गया।

भारतीय राजाओं के झगड़ों से अँगरेजों को अपनी शक्ति बढ़ाने में सहायता मिली।

मराठों के साथ पहली लड़ाई वारेन हेस्टिंग्ज के समय में हुई थी। मराठा संघ बड़ा शक्ति शाली था। इसमें सिन्धिया, होल्कर, भोंसला और गायकवाड़ सम्मिलित थे। पेशवा इन सब का अध्यक्ष था और पूना में रहता था। पेशवा पहले तो छत्रपति मराठा नरेश का मंत्री था परन्तु पीछे से उसने राज्य पर अपना पूर्ण अधिकार स्थापित कर लिया। मराठा सरदार युद्ध क्रिया में कुशल थे। उनके पास बड़ी सेनायें थीं। महादा जी सिन्धिया एक प्रतापी शासक और सेनानायक था। उसने अपना एक विस्तीर्ण राज्य बनालिया था जिसकी राजधानी ग्वालियर में थी। इसी प्रकार अन्य मराठा सरदारों ने भी अपने राज्य स्थापित कर लिये थे। परंतु मराठों में परस्पर बड़ी ईर्ष्या थी और पूना का दरबार षडयंत्रों का केन्द्र था। नाना फडनवीस पेशवा के दरबार में एक चतुर राजनीतिज्ञ था। जबतक वह जीवित रहा मराठा राज्य चलता रहा, परंतु उसकी मृत्यु के बाद पारस्परिक विरोध ने प्रचंड रूप धारण किया।

वारेन हेस्टिंग्ज

जब वेलेजली गवर्नर-जनरल होकर भारत में आया, तो उसने अन्य देशी नरेशों की तरह पेशवा से भी सहायक-सन्धि करने को कहा। जो भारतीय राजा इस सन्धि को स्वीकार करता था उसे कुछ शर्तें माननी पड़ती थीं जो उसके स्वाभिमान और स्वतंत्रता के सर्वथा विरुद्ध थीं। उसे अंगरेजों का आधिपत्य मानना पड़ता था और उनकी सेना रखनी पड़ती थी, जिसका खरचा देना पड़ता था। यदि रुपया न दिया जाता तो राज्य का कुछ भाग देना पड़ता था। यह भी शर्त थी कि सन्धि करने वाला नरेश किसी विदेशी राज्य के साथ किसी प्रकार का सम्पर्क न रक्खेगा। इस सन्धि से अंगरेजों का आधिपत्य देशी राज्यों पर स्थापित हो गया और उनकी शक्ति सर्वोच्च हो गई।

बाजीराव द्वितीय (पेशवा) ने यह संधि स्वीकार कर ली। इस पर मराठे बड़े असंतुष्ट हुये। सिन्धिया ने कहा कि इस सन्धि ने तो मेरी पगड़ी सिर से उतार ली। युद्ध की तैयारी होने लगी। वेलेज़ली तो युद्ध करना चाहता ही था। हैदराबाद का निजाम और अवध का नवाब पहले ही अंगरेज़ों की अधीनता स्वीकार कर चुके थे। इससे उनका उत्साह बहुत बढ़ गया था। परन्तु मराठे ऐसे दुर्बल न थे कि वे वेलेज़ली की धौंस में आ जाते। सिन्धिया के पास एक सुसज्जित सेना थी। उसके यहाँ कुछ यूरोपीय जनरल भी थे, जिन्होंने सेना को अपने ढंग की रण-प्रणाली की शिक्षा दी थी। लार्ड लेक और गवर्नर-जनरल के भाई आर्थर वेलेज़ली ने मराठा सेनाओं का सामना किया। कई स्थानों पर मुठ भेड़ हुई। अन्त में सुर्जी अर्जुन गाँव नामक स्थान पर सन्धि होगयी, जिसके द्वारा सिन्धिया का बहुत सा भू-भाग अंगरेजो के हाथ आ गया। इसी प्रकार अन्य मराठा सरदारों से भी युद्ध हुआ। वे पराजित हो गये और उन्हें सन्धि करनी पड़ी। भोंसले, होल्कर, गायकवाड़ सभी हार गये और उन्हें अंगरज़ों का आधिपत्य स्वीकार करना पड़ा। वेलेज़ली अब इंगलैंड लौट गया। उसके शासन-काल में अँगरेजी राज्य का विस्तार बहुत बढ़ गया।

मराठों ने फिर शक्ति संचय कर लिया। मध्यभारत में अराजकता के लक्षण दिखाई देने लगे। पिंडारी चारों ओर लूट-पाट करने और जनता को घोर कष्ट देने लगे। कहा जाता है कि कुछ मराठा सरदार इन्हें प्रोत्साहित करते थे। जब लार्ड हेस्टिंग्ज़ गवर्नर-जनरल होकर आया तो उसने इस अशान्ति का दमन करना चाहा। पिंडारियों का उसने सर्वनाश किया और मराठों के साथ युद्ध करने की तैयारी की।

पेशवा के साथ युद्ध छिड़ गया। अष्टी और कोरीगाम की लडाई में उसकी हार हुई। पेशवा बाजीराव का राज्य छीन लिया गया और उसे पेन्शन नहीं दी गई। अपना राज पाट खोकर वह बिठूर में रहने लगा।

इस प्रकार मराठों की प्रभुता का अन्त हुआ। मराठे यदि यथोचित रीति से कार्य करते तो भारत में अपनी सत्ता स्थापित कर सकते थे। परन्तु उन्होंने उच्च कोटि की राजनीतिक कुशलता का परिचय नहीं दिया। वे आपस में ही लड़ते थे और प्रजा को लूटते थे। इसलिये जनता उनसे सन्तुष्ट नहीं थी। लूट-मार के आधार पर स्थायी राज्य स्थापित नहीं हो सकता था।

अंगरेजों की विजय होती रही। परन्तु पंजाब में सिक्खों की नई शक्ति उठ खड़ी हुई थी। उनका नेता महाराजा रणजीतसिंह था। उसका पिता महासिंह एक छोटे से कबीले (मिसिल) का नेता था और उसके थोड़े से अनुयायी थे। उसकी मृत्यु के वाद उसके पुत्र रणजीत सिंह ने आस-पास के राजाओं को जीतना प्रारम्भ किया और अपनी शक्ति को वढ़ा लिया। रणजीतसिंह एक योग्य और प्रतिभाशाली शासक था। वचपन में चेचक की बीमारी में उसकी एक आँख जाती रही थी। उसने एक वहुत वड़ी सेना तैयार की और अपने सिपाहियों को सिखलाने के लिए फ्रान्सीसी अफसर नियुक्त किये। ये सैनिक नैपोलियन के नेतृत्व में युद्ध कर चुके थे। इस प्रकार रणजीतसिंह ने एक विशाल राज्य स्थापित किया और लाहौर को अपनी राजधानी वनाया। प्रारम्भ में अंगरेजों को भय था कि नैपोलियन भारत पर आक्रमण करेगा। इसलिए उन्होंने रणजीतसिंह से मित्रता की।

रणजीतसिंह

लार्ड वेंटिङ्क ने, जो उस समय गवर्नर-जनरल था, सिक्ख राजा से भेंट की और उसका वड़ा सत्कार किया। अंगरजों की शक्ति को रणजीत सिंह भी अच्छी तरह समझता था। वह जानता था कि देशी राज्य आपस में झगड़े के कारण ही नष्ट हो जायगा और देश में अंगरजी राज्य स्थापित हो जायगा। भारत के नरेशों को देखकर उसने एक वार कहा था कि कुछ समय के वाद सारा नक्शा लाल हो जायगा।

रणजीत सिंह एक कुशल सेनानायक और शासक था। उसने अपने वहुवल से ही एक विशाल राज्य वनाया था। उसके प्रवन्ध के लिये उसने अनेक अनुभवी कर्मचारी नियुक्त किये। भूमि कर का भी अच्छा प्रवन्ध किया। चोर, डाकू

तथा अन्य उपद्रव करने वालों का दमन कर एक अच्छी शासन व्यवस्था की। सारे राज्य में रणजीत सिंह का आतंक छाया हुआ था। उसके भय से लोग काँपते थे। कहते हैं उसके मुंशी काज़ी अजीजुद्दीन से किसी ने एकबार पूछा कि महाराज की कौन सी आँख कानी है, तो उसने उत्तर दिया कि मैंने कभी उनकी आँखों की ओर देखा ही नहीं है। मैं नहीं बता सकता कौन सी आँख कानी है। महाराजा अपने राज्य में दौरा करता था और प्रजा का हाल जानने का पूर्ण प्रयत्न करता था। सेना का भी संगठन उसने सुचारु रूप से किया था। उसे घोड़ों का बड़ा शौक था। युद्ध में वीरता दिखाने वालों से बहुत प्रसन्न होता था और उन्हें पुरस्कार देता था। खालसा की विजय और कीर्ति के लिए वह निरन्तर प्रयत्न करता था।

रणजीत सिंह की मृत्यु के बाद उसके राज्य की दशा बिगड़ने लगी। सिक्ख सरदार आपस में लड़ने लगे और राजप्रासाद षड्यंत्रों का केन्द्र बन गया। रणजीतसिंह के उत्तराधिकारियों में कोई ऐसा न था जो उसके विस्तीर्ण राज्य को सँभालता और रणपिपासु सरदारों पर नियंत्रण रखता। सेना में भी बड़ी अशान्ति थी। इसलिये उसे युद्ध में लगाना ही उचित समझा गया। अंगरेज़ रणजीत सिंह के मित्र थे परन्तु खालसा के व्यवहार से असन्तुष्ट थे। ऐसी स्थिति में युद्ध अनिवार्य हो गया। जब खालसा की सेना ने सतलज को पार किया तो अंगरजों ने भी युद्ध की तैयारी की। लार्ड गफ़ जो अंग्रजी सेना का अध्यक्ष था बड़ी वीरता से लड़ा। सिक्खों ने भी अपना जौहर दिखाया और कई बार अंगरजी सेना को पीछे खदेड़ दिया। अन्त में सन्धि हो गई जिसके द्वारा रणजीत सिंह का पुत्र दिलीप सिंह पंजाब का राजा स्वीकार किया गया। काश्मीर का सूबा गुलाबसिंह डोगरा सरदार को एक करोड़ रुपये में बेच दिया गया और अंगरेजो का एक रेंज़ीडेंट लाहौर में रहने लगा।

प्रथम युद्ध का इस प्रकार अन्त हुआ, परन्तु खालसा में शान्ति न स्थापित हुई। दिलीप सिंह की मां रानी झिंदन बड़ी महत्वाकाँक्षी थी। वह राज्य की शक्ति को अपने हाथ में लेना चाहती थी और सिक्ख सरदारों का नियंत्रण उसे बिलकुल पसंद न था। सन् १८४९ में फिर अंगरेजों के साथ युद्ध छिड़ गया। चार मुख्य लड़ाइयाँ हुई जिनमें सिक्ख वीरों ने अंगरेजों के छक्के छुड़ा दिये। चिलियाँवाला की लड़ाई में अंगरेज़ों की हार हुई। उनके बहुत से सिपाही मारे गये और तोपें भी सिक्खों ने छीन ली। बहुत घमासान युद्ध के बाद जीत अंग्रेज़ों की हुई। महाराज दिलीप सिंह को गद्दी से उतार कर पेन्शन देकर इंगलैड भेज दिया गया। रानी

भारत में अँगरेज़ी साम्राज्य का विकास
अ फ़ ग़ा नि स्ता
का श्मी र
श्रीनगर
पेशावर
लाहौर
अमृतसर
मुल्तान
ति ब्ब त
दिहली
बरेली
ने पा ल
काठमाँडू
भूटान
लखनऊ
रा ज पू ता ना
जोधपुर
अजमेर
हैदराबाद
इलाहाबाद
बनारस
पटना
आ सा म
गोहाटी
ढाका
कलकत्ता
अहमदाबाद
बड़ोदा
इन्दौर
दामन
नागपुर
औरंगाबाद
माँडले
कटक
गंजाम
बम्बई
पूना
निज़ाम राज्य
हैदराबाद
अरब सागर
बङ्गाल की खाड़ी
रंगून
विज़गापटम्
मछलीपट्टम्
गोआ
मैसूर
मद्रास
अर्काट
पांडीचेरी
माही
त्रावणकोर

झिंडन भी बनारस भेज दी गई और वहाँ से वह नैपाल को चली गई। पंजाब अँगरेजी राज्य में मिला लिया गया और उसके शासन-प्रबन्ध के लिए एक बोर्ड नियुक्त हो गया।

सन् १८५६ तक अँगरेज भारत में सबसे अधिक शक्तिशाली हो गये। किन्तु लार्ड डलहौजी की नीति ने देश में बहुत असन्तोष उत्पन्न कर दिया। उसने बलपूर्वक बहुत से राज्यों को अँगरेजी राज्य में मिला लिया और उनके राजाओं को अपमानित किया। नागपुर, सम्भलपुर, अवध, झाँसी अँगरेजी राज्य में मिला लिये गये। पेशवा के उत्तराधिकारी नाना साहब की पेन्शन बन्द कर दी गई। लार्ड डलहौजी ने कई राज्य में दत्तकपुत्रों को अस्वीकार कर दिया। वह एक साम्राज्यवादी था और हर तरह से अँगरेजी राज्य का विस्तार बढ़ाना चाहता था। उसी के समय में रेल, तार, डाक इत्यादि का श्रीगणेश हुआ। जनता ने समझा इसी प्रकार अँगरेज भारतवासियों का धर्म नष्ट करना चाहते हैं, इन कारणों से देश भर में असंतोष फैल गया। देशी राज्य भयभीत हुए कि डलहौजी ही की नीति चलती रही तो एक दिन वे सब विलीन हो जायेंगे। सन् १८५७ में स्वतंत्रता संग्राम आरम्भ हुआ। अँगरेजी राज्य इस समय बहुत अप्रिय हो गया था। सेना में भी विद्रोह के लक्षण दिखाई देने लगे थे। पेशवा के दत्तकपुत्र नाना साहब ने इस संग्राम में भाग लिया। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई मध्य भारत में विद्रोहियों की प्रमुख नेता बनी। उसने बड़ी वीरता के साथ युद्ध किया, परन्तु अन्त में पराजित हुई। तब भी सन् १८५७ के स्वतंत्रता संग्राम के वीरों में उसका नाम सदैव अग्रगण्य रहेगा। उसके शौर्य, चरित्र तथा नेतृत्व की अँगरेज सेनाध्यक्षों ने भी प्रशंसा की है।
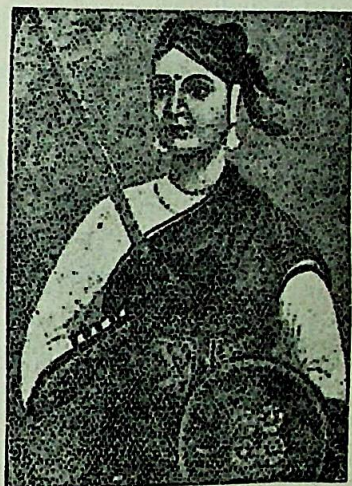
रानी लक्ष्मीबाई

यद्यपि एक वार ऐसा लगा कि अँगरेजी राज्य की भारत में इतिश्री हो गई, परन्तु स्वतंत्रता का यह युद्ध असफल रहा। मुगल सम्राट् का अधिकार थोड़े समय के लिए फिर स्थापित हुआ। किन्तु वह भी गद्दी से उतार दिया गया और वन्दी वनाकर रंगून भेज दिया गया। जिन लोगों ने अँगरेजों से शत्रुता दिखाई थी उनके साथ कठोरता का व्यवहार हुआ। निर्दयतापूर्वक उनकी हत्या हुई और उनकी सम्पत्ति छीन ली गई।

१८५७ के युद्ध ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी का अन्त कर दिया। उसके शासन का अन्त हो गया। अव से भारतीय शासन का उत्तरदायित्व इँगलैंड सरकार ने अपने ऊपर ले लिया। सन् १८५८ में एक घोषणा प्रकाशित करके महारानी विक्टोरिया ने भारतीय लोगों और राजाओं को अश्वासन दिया कि भारत में न्यायपूर्वक शासन होगा, लोगों की धार्मिक भावनाओं की अवहेलना नहीं की जायगी और जो व्यक्ति किसी सरकारी नौकरी की योग्यता रखता है उसे जाति, रंग या धर्म के कारण वंचित नहीं रखा जायगा।

अव भारत अँगरेजी साम्राज्य का भाग हो गया। उसकी गृह और वाह्य नीति इँगलैंड की सरकार के हाथ में आ गई। जितने राजा नवाव थे वे उसके अधीन हो गये। सर्वत्र अँगरेजों का वोलवाला हुआ।

अभ्यास

१. किस प्रकार अँगरेजों ने भारत में अपना अधिकार स्थापित किया?
२. डूप्ले कौन था? उसके विषय में आप क्या जानते हैं?
३. किस प्रकार वंगाल अँगरेजों के हाथ में आया? सिराजुद्दौला के विषय में आप क्या जानते हैं?
४. लार्ड वेलेजली की सहायक-सन्धि क्या थी? उसके क्या परिणाम हुए?
५. रणजीतसिंह कौन था? अँगरेजों के साथ उसका क्या सम्वन्ध था?
६. सिक्ख युद्ध के क्या कारण थे? उनका क्या परिणाम हुआ?
७. १८५७ के स्वतंत्रता संग्राम के विषय में आप क्या जानते हैं?
८. इसके कुछ नेताओं का नाम वताइए।
९. सन् १८५७ में भारत अँगरेजों के विरुद्ध क्यों हो गया था?
१०. इस संग्राम का क्या परिणाम हुआ? इसकी असफलता के क्या कारण थे?

अध्याय ६

अमेरिका की क्रान्ति

अपने धार्मिक विश्वास के कारण जीवन को संकट में देखकर बहुत से अंगरेजों ने १७वीं शताब्दी में इँगलैण्ड को छोड़ दिया था। जहाजों पर चढ़कर वे अटलांटिक महासागर के पार पहुँचे और अमेरिका महाद्वीप में उनको नया घर मिला। अटलांटिक महासागर के तट पर उन्होंने उपनिवेश बनाये। इस क्षेत्र के मूल निवासी रेड इण्डियन थे। किन्तु यूरोप के लोगों के पास अच्छे अस्त्र थे। इसलिए उन्होंने उनके साथ युद्ध किया और उनको पराजित कर दिया। यहाँ के जंगलों को उन्होंने साफ किया और अपने गाँव तथा नगर बसाये। इस तरह के कुल १५ उपनिवेश थे जिनमें यूरोप के लोग बसते थे। उनमें से कुछ अंगरेज और कुछ फ्रान्सीसी थे। फ्रान्सीसी अधिक कर्मठ थे और इसलिए अधिक भू-भाग पर उनका नियंत्रण हो गया। अँगरेजी उपनिवेशों को उन्होंने भीतरी भागों से अलग कर दिया।
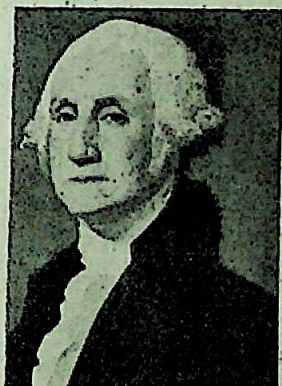
वाशिंगटन

इस कारण अंगरेजों और फ्रान्सीसियों में युद्ध छिड़ गये। इन युद्धों में फ्रान्स हार गया। उसके अधिकांश उपनिवेश हाथ से निकल गये। युद्ध के बाद केवल इँगलैण्ड ही बच गया था जो अमेरिका महाद्वीप में महान् शक्ति रह गया था।

प्रारम्भ में उपनिवेशों को आन्तरिक विषयों में बड़ी स्वतंत्रता थी। मातृ-देश का नियंत्रण अधिक नहीं था। व्यापार और वाणिज्य के नियंत्रण के विषय में कुछ नियम थे। ये नियम भी कठोरतापूर्वक लागू नहीं किये जाते थे। किन्तु १८वीं

शताब्दी में परिस्थिति बदल गई। अँगरेजी सरकार ने सोचा कि अमेरिकी उपनिवेश मातृ-देश के हित की पूर्ति के लिए स्थापित किये गये हैं। उनसे यह आशा की गई कि वे केवल कच्चा माल उत्पन्न करें और इँगलैण्ड का बना हुआ तैयार माल खरीदें। अँगरेजी सरकार ने यह भी सोचा कि उपनिवेशों का यह कर्तव्य है कि उनकी रक्षा के लिए जो रुपया व्यय किया जाता है उसे वे सरकार को दें। इस प्रकार व्यापार और वाणिज्य पर नियंत्रण बढ़ा दिया गया तथा नये कर लगाये गये।

किन्तु अमेरिका के लोग और स्वतंत्रता चाहते थे। उनकी रक्षा के लिए फ्रान्स से अधिक भय था। जब तक यह भय बना रहा, तब तक उन्होंने इँगलैण्ड की आज्ञा मानी। किन्तु फ्रान्स अब हरा दिया गया था। इसलिए अब उन्होंने मातृ-देश की सरकार की आज्ञाओं का उल्लंघन करने का निश्चय किया। वे चाहते थे कि इँगलैण्ड उन्हें समान मान ले। अतः अँगरेजों और उपनिवेशवादियों में संघर्ष अनिवार्य हो गया।

अँगरेजी सरकार उपनिवेशवादियों की माँगों को मानने के लिए किसी भी प्रकार तैयार नहीं थी। उसने एक स्टाम्प एक्ट पास किया जिसके द्वारा सभी प्रमाण-पत्रों पर एक नया कर लगाया गया। इसे स्टाम्प टैक्स कहते थे। अमेरिका के लोगों ने इसका और सरकार की नीति का दृढ़तापूर्वक विरोध किया। अनेक स्थानों पर स्टाम्प ऐक्ट के दाह-प्रदर्शन निकाले गये। एक उपनिवेश के गवर्नर का घर जला दिया गया। अमेरिका के लोगों की माँगों को अँगरेजी सरकार ने माना नहीं, बल्कि अन्य दैनिक प्रयोग की वस्तुओं पर नये टैक्स लगा दिये। उनमें से चाय भी थी। बौस्टन नगर अमेरिकी विरोध का केन्द्र बना। अँगरेज सैनिक वहाँ नियुक्त किये गये। एक दिन अमेरिका के लोगों की भीड़ चिल्ला चिल्लाकर नारे लगा रही थी कि किसी ने चिल्लाकर कहा, "फायर फायर"। अँगरेज सैनिकों ने सोचा कि उनका सेनापति गोली चलाने की आज्ञा दे रहा है। उन्होंने भीड़ पर गोली चलाना प्रारम्भ कर दिया। अनेक निरपराध लोग मारे गये। इस कारण अमेरिका के लोग इतना क्रोधित हो गये जितना पहले कभी नहीं हुए थे।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के पास बहुत चाय पड़ी हुई थी। इसको वे अमेरिका में बेचना चाहते थे। अँगरेजी सरकार ने इसकी आज्ञा दे दी। चाय अँगरेजी जहाज पर

लादकर बौस्टन बन्दरगाह में लाई गई। किन्तु अमेरिका के लोग क्रोधित थे। यद्यपि यह चाय सस्ती थी किन्तु लोगों ने इसे लेने से अस्वीकार कर दिया। पचास या साठ अमेरिकनों ने अपने को रेड इंडियन कहा और जहाज में घुसकर चाय के डब्बों को समुद्र में फेंक दिया। इसे बौस्टन की चाय पार्टी कहते हैं। किनारे पर बहुत से लोग खड़े थे परन्तु किसी ने कुछ न कहा। अँगरेजी सरकार ने इसे अपना भारी अपमान समझा। दोनों ओर उत्तेजना बढ़ गई। अँगरेजी सरकार ने उपनिवेशों को आज्ञा उल्लंघन करने के कारण कठोर दंड देने का निश्चय किया।

उपनिवेशों में भी बड़ा क्षोभ था। उन्होंने वाशिंगटन को संयुक्त सेना का अध्यक्ष बनाया और लड़ाई आरम्भ कर दी। इंगलैंड से अलग होने की इच्छा प्रबल हो गई, परन्तु अधिकांश उपनिवेश अभी इसके लिये तैयार न थे। उन्होंने समझा कि अन्त में इँगलैंड उनके अधिकार को स्वीकार करेगा; परतु जैसे जैसे युद्ध बढ़ता गया इँगलैंड और १३ उपनिवेशों के बीच वैमनस्य बढ़ता गया और स्वतंत्रता की इच्छा प्रबल होती गई। उधर इँगलैंड में सरकार ने अमरीकियों को विद्रोही घोषित कर दिया और पार्लियामेन्ट ने एक एक्ट पास किया जिसके द्वारा व्यापार भी बन्द हो गया।

स्वाधीनता चाहने वालों की संख्या बढ़ गई। उपनिवेशों ने अपना एक सम्मेलन (काँग्रेस) किया जिसमें उनके प्रतिनिधि इकट्ठे हुए। एकता पर बल दिया गया और एक कमेटी स्वाधीनता की घोषणा को लिखने के लिये नियुक्त हुई। ४ जुलाई सन् १७७६ को इस घोषणा को काँग्रेस ने स्वीकार कर लिया। इस घोषणा का हर्ष से स्वागत हुआ। सब उपनिवेशों में घंटे बजे, तोपें छूटीं और अनेक प्रकार से जनता ने अपना संतोष प्रकट किया। इस घोषणा का आशय यह था कि सब मनुष्य समान हैं, उनके अधिकार समान हैं और सरकारों के अधिकार उन्हें जनता की रजामन्दी से प्राप्त होते हैं। इसके बाद उसमें उनकी शिकायतों का उल्लेख था, जिनके आधार पर स्वाधीन होने की इच्छा प्रगट की गई। घोषणा को लिखित करने वालों में जैफ़रसन भी था। वह बड़ा चतुर मनुष्य था। उसने इँगलैंड के विचारों को ओजस्वी भाषा में व्यक्त किया और इस दृष्टि से यह घोषणा साहित्य की एक अनूठी कृति समझी जाती है।

किन्तु कुछ बुद्धिमान् अँगरेज भी थे जिन्होंने उपनिवेशवादियों की माँगों के प्रति सहानुभूति प्रगट की। उन्होंने कुछ माँगों को मान लेने के लिए परामर्श दिया

और शान्तिप्रिय नीति का अनुशीलन करने की सलाह दी। इनमें सबसे प्रसिद्ध देश का प्रमुख वक्ता तथा राजनीतिज्ञ एडमंड बर्क था। उसने सोचा कि अमेरिकी उपनिवेशों पर अंगरेजी सरकार को नये कर नहीं लगाने चाहिएँ। वह चाहता था कि अमेरिका के उपनिवेशों पर प्रभुत्व जमाने की अपेक्षा उनसे मित्रता और सहयोग स्थापित किया जाय। किन्तु जो लोग सरकार में थे, उन्हीं ने इस बात को नहीं माना। अमेरिकी उपनिवेशों और अंगरेजों के बीच स्वतंत्रता का युद्ध होने लगा।

एडमन्ड बर्क

इँगलैंड की जनता अमेरीकन लोगों से लड़ना नहीं चाहती थी। वे सेना में भर्ती होने को भी कठिनाई से आते थे। इसलिए जर्मनी से रंगरूट मंगाये गये। अमेरिका की सेना भी अधिक न थी। परन्तु जार्ज वाशिंगटन के नेतृत्व के कारण अमेरिका के लोगों को यह विजय मिली। कुछ योग्य और वीर लोग उसके सहायक थे। उसकी सेना संख्या में थोड़ी थी। उसके पास यथोचित सामान भी नहीं था। उसके सैनिकों को अच्छी तरह खाने और पहनने को भी नहीं मिलता था। जाड़े से बचने के लिये उनके पास जूते और कोट नहीं थे। अफ़सर भी अच्छे नहीं थे। वाशिंगटन का कहना था कि जो वेतन उन्हें मिलता था वे उसके भी अयोग्य थे। परन्तु जर्मन और फ्रांसीसी सेनानायक कुशल थे। किन्तु इन कठिनाइयों का बिना ध्यान रखे वे अपने अधिकारों के लिए लड़ते रहे। अपने महान् नेता पर उनको पूर्ण विश्वास था। अपनी स्वतंत्रता के लिए वे कोई भी बलिदान करने के लिए तैयार थे।

अंगरेज सेनानायक हो ने न्यूयार्क पर आक्रमण किया और अमेरिकन सेना पर विजय प्राप्त की, परन्तु कुछ समय के बाद वाशिंगटन ने ट्रैंट और प्रिंसटन नामक स्थानों पर विजय प्राप्त की। इसके बाद अंगरेजी सेना ने फिलाडेलफ़िया को जीत लिया, परन्तु बैनिंगटन की लड़ाई में बरगौयनको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उसे हथियार डालने पड़े। अक्टूबर सन् १७७७ में उसकी सेना ने जिसमें १८००० सिपाही थे आत्म-समर्पण कर दिया। यह बड़ी महत्वपूर्ण विजय थी जिसका
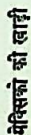
संयुक्तराज्य अमेरिका के मूल १३ उपनिवेश
तथा बाद के अधिकृत प्रदेश

युद्ध पर वहुत प्रभाव पड़ा। इसका एक परिणाम यह हुआ कि फ्रांस के साथ अमेरिका की सन्धि हो गई और उसने मदद का वादा किया।

धीरे-धीरे यह युद्ध समस्त यूरोप में व्याप्त हो गया। इँगलैंड के जहाजी वेड़े की शक्ति भी कम हो गई। सन्धि की वातचीत हुई परन्तु कांग्रेस ने उसे अस्वीकार कर दिया। युद्ध होता रहा। अंगरेज सेनानायक कार्नवालिस को यार्कटाउन नामक स्थान पर आत्म-समर्पण करना पड़ा। फ्रांस और अमेरिका की संयुक्त सेना की यह प्रभावशाली विजय थी।

इसके वाद सन्धि की वातचीत फिर होने लगी। सन् १७८३ में सन्धि हो गई। अमेरिका की स्वाधीनता स्वीकार की गई और संयुक्त राष्ट्र की सीमा पूर्व में अटलांटिक से पश्चिम में मिसिस्पी नदी तक और उत्तर में कनाडा की सरहद से दक्षिण में फ्लौरिडा की उत्तरी सीमा तक निर्धारित की गई।

अमेरिका स्वाधीन हो गया। इसका उसकी आर्थिक दशा पर वड़ा प्रभाव पड़ा। जिस समय युद्ध हो रहा था इँगलैंड के साथ व्यापार वन्द हो गया था। परन्तु कुछ जहाज ऐसा होने पर भी माल लाते रहे। उद्योग-धंधों को भी प्रोत्साहन मिला। युद्ध के कारण जूते, मोजे, ऊनी कपड़े, डेरे, तम्वू, वन्दूक आदि की वड़ी माँग हुई। इनके अतिरिक्त और भी उद्योग आरम्भ हुए। नमक वनने लगा, डाक की एक नई प्रथा जारी हुई। कांग्रेस ने एक कानून पास किया जिसके द्वारा एक डाक विभाग स्थापित हुआ। वेंजमिन फ्रैंकलिन पहला पोस्ट मास्टर जनरल नियुक्त हुआ।

कुछ वर्षों के वाद इन १३ उपनिवेशों ने मिलकर एक संघ वनाया जिसे संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका कहते हैं। एक लोकतंत्रवादी विधान तैयार हुआ जो आज भी वर्तमान है। स्वतंत्रता अमेरिका के लोगों के लिए वहुत वड़ा वरदान प्रमाणित हुई है। इसने उन्हें सुखी और सम्पन्न वनाया है और आज सारे संसार में वे सवसे सम्पत्तिशाली तथा शक्तिशाली हैं।

अमेरिकी क्रान्ति इतिहास की महान् घटनाओं में से है। इसके आदर्शों ने फ्रान्स को प्रेरणा दी और उसमें स्वतंत्रता का भाव आ गया। आज संसार पर अमेरिका का वहुत प्रभाव है। शान्ति से सम्वन्धित सभी विषयों पर उसकी वात निर्णायक है और विना उसकी राय के कुछ भी नहीं किया जा सकता।

अभ्यास

१. अमेरिकी उपनिवेश कैसे और किनके द्वारा स्थापित किये गये ?
२. उनके और मातृ-देश के बीच किस प्रकार झगड़ा प्रारम्भ हुआ ?
३. अमेरिकावालों का महान् नेता कौन था ?
४. इस युद्ध में अँगरेज क्यों पराजित हुए ?
५. अमेरिकी क्रान्ति का क्या परिणाम हुआ ?

अध्याय ७

फ्रांस की क्रांति

१८वीं शताब्दी के अन्त में फ्रान्स सामन्तवादी राज्य था । देश की प्राचीन सभ्यता सारहीन हो गई थी। १४ वें लुई के समय से फ्रान्सीसी राजा निरंकुश शासक बन गये थे। उच्च घराने के लोग पहले शासन-कार्य संभालते थे। राजा की शक्ति के साथ रईस लोगों का अधिकार भी बहुत बढ़ गया था। १४वाँ लूई कहा करता था कि "मैं ही राष्ट्र हूँ"। दरबारियों के लिए वही फ्रान्स था । राज्य कर्मचारी स्वामी बन बैठे थे। दो सौ वर्षों से अधिक दिनों तक फ्रान्स में एकतंत्र शासन रहा। बूरबों राजाओं का निरंकुश शासन दुखदायी था। सन् १६१४ ई० से ही जनप्रिय व्यवस्थापिका (The States-General) की बैठक नहीं बुलाई गई थी। सामान्य जनता के जीवन और सम्पत्ति के साथ राजा मनचाहा व्यवहार करता था ।

उच्चवर्ग के व्यक्ति की वेशभूषा

समाज के सबसे महत्त्वपूर्ण और शक्तिशाली लोग उच्च वंश के थे। सभी प्रकार की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक सुविधाएँ उनको प्राप्त थीं। उस समय कुछ अमीर कृपाण वाले सरदार कहलाते थे। इनके पूर्वजों ने देश की रक्षा के लिए महान् सेवाएँ की थीं। चर्च के उच्च अधिकारी भी इसी वर्ग के होते थे। इन लोगों के पास विस्तृत भूमि थी। इनके घर राजभवन की तरह होते थे। राजा की चापलूसी में आनन्द और मनोरंजन के नये साधनों को निकालना इनका काम था। अपने सुन्दर वस्त्रों, महलों और आमोद प्रमोद में ये सदा व्यस्त रहते थे।

उन्हें राज्य-कर नहीं देने पड़ते थे। देश की सम्पत्ति का अधिक भाग जिनके पास था वे कोई कर नहीं देते थे। निर्धन किसानों पर कर का सारा भार पड़ता था। राजा, रानी और उनके दरवारी वड़े अपव्ययी थे। दरवार का ठाट-वाट वढ़ाने में वहुत अधिक धन व्यय होता था। कर लगा कर निर्धन किसानों से रुपया लिया जाता था और आनन्द तथा विलासिता में पानी की तरह वहाया जाता था।

निर्धन किसान की दुर्दशा

शासन का सारा व्यय सामान्य जनता को देना पड़ता था। किन्तु शासन-प्रवंध में उनका कोई अधिकार नहीं था। किसानों को सभी प्रकार के कष्ट झेलने पड़ते थे। अपने लिए और अपने वच्चों के लिए उन्हें पर्याप्त भोजन नहीं मिलता था। शरीर ढँकने के लिए उनके पास वस्त्र नहीं था। वे अपने भू स्वामियों से भूमि लेकर खेती करते थे। रईस लोग शिकार खेलने के लिए प्रायः देहातों में आया करते थे। उनके घोड़े खड़ी फसलों को नष्ट कर देते थे और किसान साँस लेकर चुप हो जाते थे। परन्तु उनके पास इसका कोई उपाय नहीं था। केवल ईश्वर ही उनकी रक्षा कर सकता था। अमीर लोगों का खेल-कूद इन किसानों की खड़ी फसलों से अधिक आवश्यक था। किसान इन लोगों को तथा उनके सेवकों को सव सामान देते थे, किन्तु कोई मूल्य नहीं पाते थे।

नगरों की दशा भी इससे अच्छी नहीं थी। शिल्पकारों के लिए कोई काम नहीं था। वहुत वड़ी संख्या में लोग खाने विना मर जाते थे। शासन-प्रणाली में वड़ी अव्यवस्था थी। वहुत से नियम और न्यायालय वने हुए थे, किन्तु वे लोगों के कष्ट

लुई सोलहवाँ

मारी आन्त्वानैत
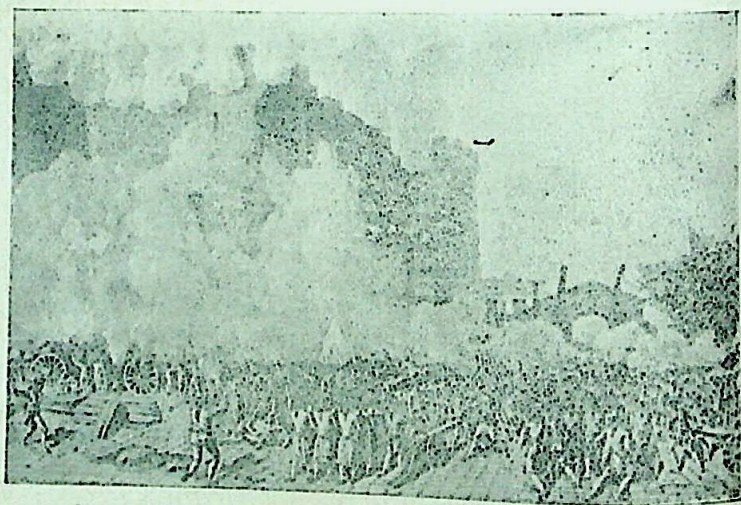
वस्ती का पतन

को बढ़ानेवाले ही थे। कर्मचारी धूर्त थे। लोगों के पास जो कुछ भी थोड़ी सी सम्पत्ति थी उसे भी वे लूट लेना चाहते थे।

किन्तु इस समय एक सम्पत्तिशाली मध्यम वर्ग पैदा हो गया था। इसमें व्यापारी, दूकानदार और वकील थे। ये लोग नहीं चाहते थे कि जिस प्रकार कार्य हो रहा है उसी प्रकार होता रहे। वे शासन में कुछ अधिकार और अपना हाथ चाहते थे। इनमें कुछ बड़े योग्य और बुद्धिमान् व्यक्ति थे। उन्होंने सरकार के विरुद्ध तीव्र शब्दों में भाषण दिये और लिखा। उस काल के महान् दार्शनिकों और लेखकों की पुस्तकों से इस असन्तोष का पता चलता है। वाल्टेअर (Voltaire) और रूसो (Rousseau) सामान्य जनता के समर्थकों में से थे। इस के अतिरिक्त फ्रांसीसी सैनिक जो अमेरिकनों की सहायता के लिए वहाँ गये हुए थे अपने साथ स्वतंत्रता की भावनाएँ लेकर फ्रान्स लौटे थे।
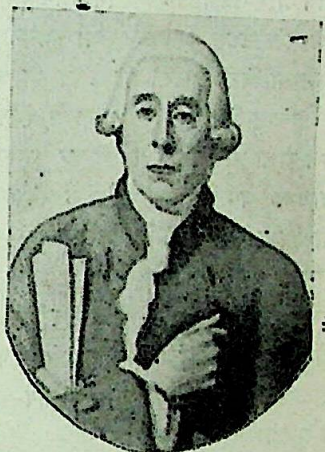
मध्यवर्ग के लोग की वेशभूषा

फ्रान्स का राजा १६वाँ लूई हृदय से बुरा व्यक्ति नहीं था। किन्तु उसकी रानी आस्ट्रिया की सुन्दर और विलासप्रिय राजकुमारी थी। उसका नाम था मारी आँत्वानैत। वह दरबार के अपव्यय को रोकना नहीं चाहती थी। राजा उसके सामने लाचार था। रानी के विषय में सभी प्रकार की बातें सारी जनता में फैली हुई थीं। देश की दशा दिन प्रतिदिन गिरती गई। राजा के मंत्रियों ने सुधार करना चाहा। उन्होंने व्यय में मितव्ययता का सुझाव रखा किन्तु रानी ने सदा रोड़ा अटकाया। क्रमशः राज्य का दीवाला निकल गया। स्टेट्स जनरल को बुलाने की माँग जनता ने की और राजा को इस माँग के सामने झुकना पड़ा।

पिछले २०० वर्षों से स्टेट्स जनरल की बैठक नहीं हुई थी। मध्यम वर्ग और सामान्य जनता के प्रतिनिधि बहुत क्रुद्ध थे। इसलिए राजा उस सभी को समाप्त कर देना चाहता था। जिस हाल में इसकी बैठक होनेवाली थी उसमें ताला लगा दिया गया था। जब प्रतिनिधि वहाँ पहुँचे तो उन्हें पता चला कि नृत्य के लिए हाल

सजाया जा रहा है। प्रतिनिधियों ने राजा की चाल समझ ली। उन्होंने पास ही टेनिस कोर्ट पर जाकर निश्चय किया कि वे जब तक विधान तैयार न कर लेंगे तब तक वहाँ से नहीं हटेंगे। इसको टैनिस कोर्ट की शपथ कहते हैं। राजा चाहता था कि व्यवस्थापिका के सदस्य कुलीन, पादरी तथा सामान्य तीन भागों में विभाजित हो जायँ और उनकी वैठकें अलग अलग हों। किन्तु टैनिस कोर्ट की वैठक में यह निश्चय हुआ कि स्टेट्स जनरल के सभी सदस्य एक साथ वैठेंगे और एक साथ वोट देंगे। राजा में विरोध करने की शक्ति नहीं थी।

किन्तु स्थिति बड़ी शीघ्रता से बदल रही थी। पेरिस के लोग अधीर हो रहे थे। राजा का स्वभाव था कि वह कुसमय में अच्छे कार्य को भी बुरे ढंग से करता था। जब वह जनता की माँगों को स्वीकार करना चाहता था तो उसकी रानी उसे रोक देती थी। रानी ने मंत्रियों को निकाल बाहर किया। वह मूर्ख और अहंकारी स्त्री थी। उसे केवल अपने सुख का ध्यान रहता था। कहा जाता है कि भूखे लोगों ने उसके राजभवन को एक वार चारों ओर से घेर लिया। उसने पूछा कि क्यों हल्ला हो रहा है। उसे वतलाया गया कि लोगों के पास रोटी नहीं है। वे खाने के लिए रोटी माँग रहे हैं। यह सुनकर उसने कहा कि यदि उनके पास रोटी नहीं है तो वे केक क्यों नहीं खाते?

राजा और उसकी रानी मेरी आँत्वानैत (Marie Antoinette) के व्यवहार ने पेरिस निवासियों को मारे क्रोध के पागल बना दिया। १४ जुलाई सन् १७८९ में जनता की भीड़ ने वस्ती (Bastille) नामक दुर्ग को घेर लिया। यह एक प्राचीन दुर्ग था जहाँ राजनैतिक वन्दी रखे जाते थे। इस समय इसमें वहुत वन्दी नहीं थे किन्तु वहुत दिनों से यह किला आतंक का प्रतीक हो गया था। इसमें थोड़े से ही सिपाही थे। जनता ने उस पर अधिकार कर लिया। फाटक तोड़ डाले गये और वन्दी वाहर निकल आये। वहाँ जो अस्त्र-शस्त्र मिले उन्हें लोगों ने आपस में वाँट लिया। यहीं से क्रान्ति का श्रीगणेश होता है।

राजा ने इस कार्य की महत्ता को नहीं समझा। जिस दिन वस्ती का गढ़ टूटा उस दिन वह हिरण का शिकार खेल रहा था। सारा शासन ध्वस्त हो गया। पेरिस में एक जनप्रिय नगर व्यवस्थापिका वनाई गई। इसको कम्यून (Commune) कहते थे। नागरिकों की एक सेना भी संगठित की गई जिसे राष्ट्रीय रक्षक दल कहते थे। अन्य नगरों ने भी पेरिस का अनुसरण किया।
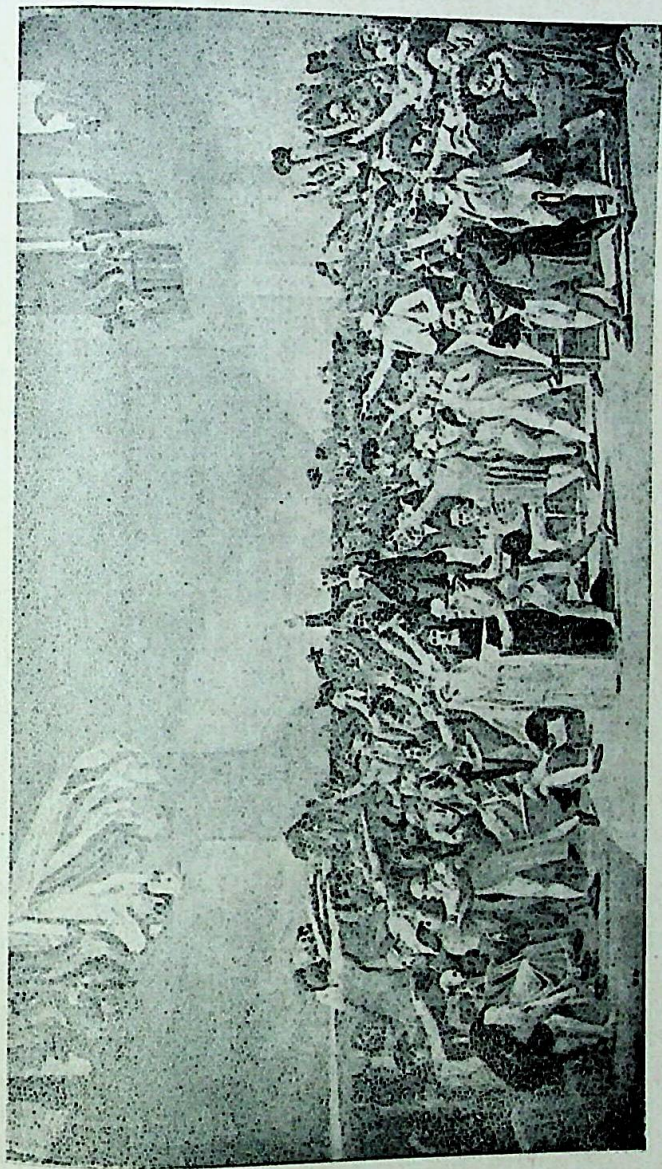
फ्रांस के तृतीय श्रेणी के लोग टैनिस कोर्ट पर शपथ ले रहे हैं।

क्रान्ति का समाचार सारे देश में दावाग्नि की तरह फैल गया। निर्धन किसान बहुत दिनों से दुखी थे। उन्होंने अपने स्वामियों से बदला लेना प्रारम्भ कर दिया। उनके घरों में आग लगा दी और उनके बाल-बच्चों को मार डाला। उनकी सम्पत्ति को लूट लिया। समय बदल गया था। किसानों ने अपनी शक्ति पहचानी और उसका पूरा प्रयोग किया। बहुत से कुलीन लोगों ने भागकर विदेशों में शरण ली। स्त्री-पुरुष स्वतंत्रता और सुख के गीत गाकर नाच उठे। चारों ओर भयंकर दृश्य दिखाई देने लगे और शान्ति स्थापित रखना कठिन हो गया।

राष्ट्रीय व्यवस्थापिका शासन यंत्र को सुधारने के कार्य में व्यस्त थी। उसने मानव अधिकार की एक घोषणा निकाली। घोषणा में प्रमुख बात यह थी कि सभी व्यक्ति समान और स्वतंत्र उत्पन्न हुए हैं और उन्हें अपने विचार प्रगट करने की स्वतंत्रता अवश्य मिलनी चाहिए। रईस लोगों को जो विशेष अधिकार मिले थे समाप्त कर दिये गये। इन लोगों ने स्वयं अपने अधिकारों और सुविधाओं को छोड़ दिया। सामन्तवाद के कारण फ्रान्स में बड़ा कष्ट था। अब उसका अन्त हो गया। लोग मारे प्रसन्नता के पागल हो उठे। स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व क्रान्ति के मूल-मंत्र बने।

इस समय पेरिस में रोटी की बहुत कमी पड़ गई। लोगों ने सोचा कि इस अकाल के लिए राजा उत्तरदायी है। एक बहुत बड़ा जलूस वैरसाई राज-भवन की ओर चला। उसमें सम्मिलित होनेवाले पुरुष-स्त्री सभी ने स्त्री का वेश बना लिया था। बहुत देर तक चिल्लाने और नारे लगाने के बाद राजा पेरिस जाने के लिए तैयार हुआ। राजा अपने परिवार के साथ चला। उसके साथ साथ भीड़ चिल्ला रही थी कि "हम लोग रोटीवाले को, रोटीवाले की स्त्री को और रोटीवाले के बालक को ले जा रहे हैं। अब हम लोगों को रोटी मिलेगी।" राजा पूर्णतया विवश था। क्रान्ति का तिरंगा झब्बा पहनने के लिए वह बाध्य हुआ। अपने राज-भवन में वह बन्दी की तरह रखा गया। जब वह वैरसाई में था तो अपनी सहायता के लिए अपने सम्बन्धियों के यहाँ आस्ट्रिया को पत्र लिखा रहा था। इससे जनता और भी उत्तेजित हो गई।

प्रारम्भ में लोग राजा को सिंहासन पर रखना चाहते थे। राजा और रानी के जीवन का संकट दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था। इसलिए राजा और रानी एक दिन राजभवन से भाग निकले। वे आस्ट्रिया जाना चाहते थे। राजा ने अपना

वेश वदल लिया था और कोई भी न जान सका कि वह कौन है। किन्तु जव वे एक गाँव में पहुँचे तो राष्ट्रीय रक्षा-दल के सैनिकों ने उन्हें रोका। राजा को एक सैनिक ने पहचान लिया। वह पेरिस वापस लाया गया। जनता की भीड़ उसके चारों ओर हल्ला मचा रही थी। अव राजा की सच्चाई पर से लोगों का विश्वास उठ गया। उन्होंने इस वात को समझ लिया कि राजा क्रान्ति के विरुद्ध है।

इस समय तक फ्रान्स के लिए एक नया विधान वन गया था। दूसरी व्यवस्थापिका का निर्वाचन हो गया था। इस नई व्यवस्था में वहुत से पहले के क्रान्तिकारी सदस्य थे। उनको जैकोविन्स कहते थे। ये अधिकतर मध्यम वर्ग के युवक सदस्य थे। उनके भाषण वड़े हिंसात्मक और उत्तेजक होते थे। जव यह समाचार आस्ट्रिया और प्रशा पहुँचा तो वहाँ के शासकों ने फ्रान्स के राजा की सहायता करनी चाही। आस्ट्रिया का सम्राट् फ्रान्स की रानी का भाई था। उसने सहायता के लिए एक सेना फ्रान्स की सीमा पर भेजी।
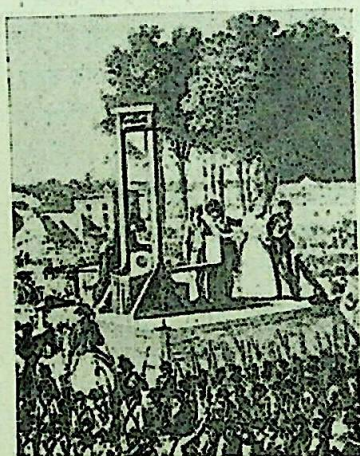
फांसी का दृश्य

यह समाचार पाकर पेरिस की जनता मारे क्रोध के आगवबूला हो गई। उसने राज-भवन को चारों ओर से घेर लिया। स्विटज़रलैंड निवासी पहरेदारों ने अपने स्वामी की रक्षा करनी चाही, किन्तु वे काट डाले गये। जनता की भीड़ राज-भवन में घुसी और उसे लूट लिया। राजा और रानी का अपमान किया गया और उन्हें वन्दी वना लिया गया।

आस्ट्रिया और प्रशा की सेनाएँ वढ़ती आ रही थीं। जनता उतावली हो उठी। कारागार के फाटक तोड़े गये। वन्दी मारे गये। राज्य ने कोई हस्तक्षेप नहीं किया। एक नई सभा वुलाई गई। राजा पर अभियोग चलाया गया और उसे प्राणदंड दिया गया। वड़ी शान्ति और धैर्य के साथ वह फाँसी के तख्ते पर पहुँचा। फ्रान्स प्रजातंत्र घोषित हुआ। कुछ समय के वाद रानी भी सूली पर चढ़ा दी गई।

फ्रान्स के राजा की फाँसी का समाचार सुनकर यूरोप के दूसरे राजा बहुत दुखित हुए। फ्रान्सीसी और यूरोप के अन्य देशों की सेनाओं में युद्ध छिड़ गया। प्रारम्भ में फ्रान्स की सेनाएँ कई स्थानों पर पराजित हो गईं। सारा वातावरण भयग्रस्त हो गया। किन्तु फ्रांसीसी सैनिकों में नया उत्साह भरा हुआ था। वे सोचते थे कि वे स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व भाव के महान् सिद्धान्तों के लिए युद्ध कर रहे हैं। देश के प्रत्येक भाग से स्वयंसेवक सेना में सम्मिलित हुए। वे एक प्रसिद्ध क्रान्तिकारी संगीत गाते थे। इसको सुनकर उनके हृदय में स्वतंत्रता की आग भभक उठती थी। हमारे राष्ट्रीय गान की भाँति आज भी यह संगीत फ्रान्स का राष्ट्रीय गान है।

किन्तु फ्रान्स बड़े संकट में था। सीमा पर शत्रु दवाव डाल रहे थे। इसलिए शासन का कार्य छोटी-छोटी समितियों के हाथ में दे दिया गया था। इनके सदस्य उग्र दल के थे। उन्होंने आतंक का शासन स्थापित कर दिया। प्राचीन ईसाई धर्म समाप्त कर दिया गया। फ्रान्स का महान् चर्च भ्रष्ट कर दिया गया। सैवथ अथवा रविवार समाप्त कर दिया गया। लोगों ने नये नामों और उपाधियों को धारण किया। एक व्यक्ति ने स्वयं अपना नाम 'दस अगस्त' रखा। यह आतंक का समय था। सारा फ्रान्स कसाई-घर वन गया था। प्रत्येक आदमी, जो इन समितियों के काम को नहीं मानता था, मार डाला जाता था। कोई सुरक्षित नहीं वचा। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे पर सन्देह करता था। विना सुनवाई के ही लोगों को प्राणदंड मिल जाता था। रोब्सपियर क्रान्ति का इस समय सबसे प्रसिद्ध नेता था। उसके अधिकांश प्राचीन मित्रों को दंड दिया गया। अंत में उस पर भी अभियोग चला। वह अपराधी प्रमाणित हुआ और फाँसी पर लटका दिया गया। उसकी मृत्यु के वाद आतंक का शासन समाप्त हुआ।

रोब्सपियर

जैकोविन दल के हाथ में इस समय शासन की बागडोर थी। उसे एक बात का श्रेय अवश्य मिलना चाहिए कि उसने युद्ध को भली भाँति चलाया। उसने राष्ट्र-भक्ति का भाव जाग्रत किया। फ्रान्स की सेनाओं ने विदेशी आक्रमणकारियों को पीछे हटाया और महान् विजय प्राप्त की। आतंकवादी शासन के बाद फ्रान्स इस प्रकार क्षीण हो गया जैसे रोगी व्यक्ति क्षीण हो जाता है। फ्रान्स के लिए नया विधान बना, किन्तु उससे काम न चल सका। नई सरकार स्थापित हुई किन्तु वह भ्रष्ट और अयोग्य सिद्ध हुई। सारे देश में अव्यवस्था फैल गई। राज्यकोष में रुपया बिल्कुल नहीं रहा। लोगों को लूटते हुए डकैत घूमने लगे। मार्ग सुरक्षित नहीं थे। उनकी रक्षा का कोई उपाय नहीं था। चारों ओर अराजकता फैल रही थी। लोग एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा नहीं कर सकते थे। प्रत्येक व्यक्ति यह प्रतीत करने लगा था कि एक सशक्त सरकार की आवश्यकता है।

ऐसे शोचनीय समय में नैपोलियन सामने आया। वह जन्म से फ्रान्सीसी नहीं था। उसका जन्म-इटली में कोर्सिका नामक एक टापू में एक साधारण वकील के घर में हुआ था। फ्रान्स में उसको सैनिक-शिक्षा मिली थी। प्रारंभ में वह सेना का एक साधारण अधिकारी था। किन्तु अपनी योग्यता, उत्साह और महत्त्वाकांक्षा के कारण ऊँचे पद पर पहुँचता गया। वह एक कठोर मनुष्य था और अपने मार्ग में किसी को अड़ने नहीं देता था। वह सदा सबसे कठिन कार्य करने के लिए उद्यत रहता था और कहा करता था कि असम्भव शब्द मेरे कोष में नहीं है। संसार के सबसे वीर व्यक्तियों में नैपोलियन का नाम है। वह महान् सेनापतियों में से एक था। शनैः शनैः वह फ्रान्स का सम्राट् बन गया। वह कहता था कि फ्रान्स का राजमुकुट मैंने नाली में पड़ा पाया और उठाकर उसे अपने मस्तक पर रख लिया।

नैपोलियन

उसके नेतृत्व में फ्रान्सीसी सेना ने इँगलैण्ड को छोड़ कर सभी यूरोपीय राज्यों को पराजित किया। उसने एक विशाल साम्राज्य स्थापित किया। उसमें यूरोप का अधिकांश भाग सम्मिलित था। उसके जीवन की कथा उपन्यास से भी अधिक आकर्षक और मनोरंजक है। कई वर्षों तक सारा यूरोप उसके नियंत्रण में रहा। वह स्वयं अपने को क्रान्ति-पुत्र कहता था। जहाँ जहाँ वह गया उसने क्रान्ति के विचारों को फैलाया। किन्तु वह बड़ा महत्त्वाकांक्षी था। उसकी आकांक्षाओं को कोई सन्तुष्ट नहीं कर सकता था। वह आततायी हो गया और यूरोपीय राष्ट्र उसके विरुद्ध संगठित हो गये। उसने रूस पर आक्रमण किया। किन्तु उस देश के कठोर शीत के कारण उसे पीछे हटना पड़ा। रूस में उसकी असफलता से यूरोपीय देशों ने लाभ उठाया और नैपोलियन के विरुद्ध युद्ध करने के लिए उन्होंने संघ वनाया। वह पराजित हुआ और एल्वा द्वीप में भेज दिया गया। किन्तु कुछ समय के वाद वह पुनः फ्रान्स आया। उसको वन्दी वनाने के लिए जो सैनिक भेजे गये थे, उन्होंने उसे देखते ही हथियार रख दिये। एक वार फिर वह फ्रांस का स्वामी वना। किन्तु १०० दिन के वाद वाटरलू नामक स्थान पर वह फिर पराजित हुआ। उसने अपने को अँगरेजों को समर्पित कर दिया। वन्दी बनाकर उसे सेन्ट हेलेना के टापू में भेज दिया गया। वहाँ ६ वर्ष के वाद वह मर गया। सभी युगों में एक महान् सेनापति विजेता और शासक के रूप में लोग उसे स्मरण करेंगे। नैपोलियन केवल एक सेनानायक ही नहीं, वल्कि महान् राजनीतिज्ञ तथा शासक भी था। उसने अव्यवस्था और अनाचार को समाप्त किया और एक संगठित शासन स्थापित किया। उसने फ्रांस को नया विधान दिया और सुशासन की व्यवस्था की। देश का शासन करने के लिए उसने योग्य शासकों को नियुक्त किया और निरंकुश शासन की वहुत सी वातों को पुनः प्रचलित किया।

नैपोलियन की पराजय के वाद प्राचीन राज-वंश पुनः फ्रान्स के राजसिंहासन पर विठाया गया। फ्रान्स की क्रान्ति ने यूरोप की आकृति को परिवर्तित कर दिया। प्राचीन और नवीन व्यवस्था के बीच यह विभाजक रेखा थी। फ्रान्सीसी क्रान्ति का अर्थ उच्चवंशीय शासन का अन्त था। इसने राजाओं के एकछत्र राज्य को समाप्त किया और स्वतंत्रता के युग का आरम्भ किया।

संसार के इतिहास पर फ्रान्स की क्रान्ति का गहरा प्रभाव पड़ा। राजाओं और उच्चवंश के एकछत्र अधिकार पर सामान्य जनता के अधिकारों की यह विजय

थी। नैपोलियन ने क्रान्ति की भूलों को ठीक किया और एक सुसंगठित राज्य की नींव डाली। उसका प्रभाव विदेशों पर भी पड़ा और यूरोप के कई देशों में फ्रान्स के आदर्शों का अनुकरण कर सुशासन की व्यवस्था की गई। वास्तव में नैपोलियन केवल एक महान् सेनानायक ही था। वह शासन की भी अद्भुत योग्यता रखता था।

अभ्यास

१ फ्रान्स की क्रान्ति के क्या कारण थे?
२ दार्शनिक कौन थे? उन्होंने किस बात की शिक्षा दी?
३ १६ वें लूई के चरित्र के विषय में आप क्या जानते हैं?
४ मनुष्य के अधिकारों की घोषणा क्या थी?
५ जैकोबिन कौन थे?
६ आतंक के शासन से आप क्या समझते हैं?
७ रोब्सपियर कौन था? उसके विषय में आप क्या जानते है?
८ फ्रान्स के लिए नैपोलियन ने क्या किया?
९ इतिहास में वह इतना क्यों प्रसिद्ध है?
१० नैपोलियन की नीति का यूरोप पर क्या प्रभाव पड़ा?

अध्याय ८

औद्योगिक क्रान्ति

आधुनिक यूरोपीय सभ्यता का विकास मुख्यतः दो घटनाओं पर निर्भर है। इनमें से प्रथम घटना फ्रान्स की राज्यक्रान्ति है। यूरोपीय शासन-पद्धति के विकास पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ा। दूसरी घटना है औद्योगिक क्रान्ति। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इस क्रान्ति से वहाँ के रहन-सहन, वहाँ की कार्य-प्रणाली तथा संवहन के साधनों में बहुत परिवर्तन हुआ। इस क्रान्ति का परिणाम यह हुआ कि कृषि-पद्धति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। जीवन के लिए अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी नवीन ढंग से बनाई जाने लगीं। कपड़ा बनाने के नयें नये तरीके निकाले गये। इस्पात से बनी वस्तुओं का आविष्कार हुआ। औद्योगिक क्रान्ति से पहले इतनी मशीन तथा कारखाने नहीं थे। रेल तथा मोटर का आविष्कार अभी तक नहीं हुआ था। टेलीफोन का लोग नाम तक नहीं जानते थे। इस प्रकार उस समय के लोग सादगी का जीवन व्यतीत करते थे। किन्तु इस क्रान्ति ने तो सारा ढाँचा ही बदल दिया।

इंगलैंड पहले कृषि प्रधान देश था। लोग छोट छोटे गाँवों में रहते थे। खेती मिल कर होती थी। भूमि सारे गाँव की समझी जाती थी। उपज में से काम करने वाले व्यक्ति अपना भाग पाते थे। सायंस के आविष्कारों के कारण कृषि में कुछ सुधार हुआ। किसानों ने लौट फेर से फसल बोना आरम्भ किया। टाउन शेंड नामक व्यक्ति ने चुकंदर की खेती की और नये प्रयोग किये जिनसे पैदावार में वृद्धि हुई। अन्य लोगों ने भी उसका अनुकरण किया। इसके बाद संयुक्त खेतों को चारों ओर से घेरने की प्रथा आरम्भ हुई। धनाड्य भूपतियों ने किसानों से उनकी भूमि ले कर संयुक्त खेतों को घेर लिया। इस कार्य में पार्लियामेन्ट ने सहायता की। जो मालदार भूमिपति थे वे और सम्पत्तिशाली हो गये और उन्होंने कृषि में बहुत उन्नति की। जिन किसानों की भूमि चली गई वें नगरों में आ गये और नये कारखानों में काम

करने लगे। उनमें से कुछ गाँवों में रह गये और वहीं मेहनत मजदूरी करने लगे। देहाती श्रमिकों की दशा भी खराब हो गई। उनका स्वाभिमान और स्वतंत्रता नष्ट हो गई। कृषि की उन्नति का यह परिणाम हुआ। इसी तरह कारखानों के बनने से गरीबों की जीविका को आघात पहुँचा। जो सूत कात कर या कपड़ा बिन कर अपना पेट पालते थे उनको बड़ी क्षति पहुँची। परन्तु अब इस क्रान्ति को कोई नहीं रोक सकता था।

औद्योगिक क्रान्ति फ्रान्स की राज्यक्रान्ति की तरह एक आकस्मिक घटना नहीं थी। इसके पीछे सदियों पुराना इतिहास है। इसका क्रमिक विकास हुआ। मशीनों के आविष्कार ने उन शक्तियों को बल दिया जो वर्षों से धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी। कोयले से तथा भाप से प्राप्त शक्ति से मशीनों को काम में लाया जाने लगा। गृह उद्योग-धंधों के स्थान पर बड़े-बड़े कारखानों की स्थापना की गई। इन कारखानों में सहस्रों श्रमिक काम करने लगे। अच्छी-अच्छी सड़कों का निर्माण हुआ। फलस्वरूप यात्रा सुविधाजनक हो गई। लोग एक स्थान से दूसरे स्थान तक बिना किसी कठिनाई के आने जाने लगे।

फ्रान्स की राज्यक्रान्ति की तरह औद्योगिक क्रान्ति के भी कई कारण हैं। इस क्रान्ति का मुख्य कारण यह था कि यूरोपीय देशों का व्यापारी वर्ग बहुत मालदार बन बैठा था। इन लोगों को सोलहवीं शताब्दी से ही गहरा लाभ होता आ रहा था। क्योंकि इन लोगों का व्यापार मुख्यतः पराधीन तथा नये खोजे हुए देशों के साथ था। ये व्यापारी अपने उत्पादन की मात्रा कई गुनी करना चाहते थे। इसके लिए अच्छे ढंग खोज निकालना आवश्यक हो गया।

कर्घा

औद्योगिक क्रांति से पहले जीवन की आवश्यक वस्तुएँ मुख्यतः घरेलू उद्योग धंधों से ही प्राप्त होती थी। किंतु अब एक व्यापारी वर्ग का आविर्भाव हुआ। यह व्यापारी वर्ग इन कारीगरों से बड़े बड़े कारखानों में काम कराने लगे। कारीगरों को वेतन मात्र देकर व्यापारी लोग माल स्वयं बेच देते थे जिससे उन्हें खूब लाभ

होने लगा। इस प्रकार उन्होंने बड़े-बड़े कारखानों की स्थापना की। यूरोपियन देशों की जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ने लगी। जन-संख्या के साथ साथ वस्तुओं की माँग भी अधिक हो गई। बढ़ती हुई माँग की पूर्ति के लिए नये नये कारखाने खोले जाने लगे।

अब प्रश्न यह उठता है कि औद्योगिक क्रान्ति का प्रारंभ इंगलैंड से ही क्यों हुआ? यह देश फ्रान्स तथा आस्ट्रिया की तुलना में बहुत छोटा था। किन्तु फिर भी इंगलैंड ने इस क्रान्ति के विकास का बहुत समय तक नेतृत्व किया। इसके अनेक कारण हैं। इंगलैंड ने दूसरे देशों में बहुत से प्रदेश जीत लिये थे, जहाँ से उसे आवश्यक कच्चा माल तथा धन खूब मिलता रहा। फ्रान्स तथा आस्ट्रिया की तरह वहाँ की सरकार भी भ्रष्ट नहीं थी। ब्रिटिश व्यवसायी वर्ग अधिक साधन-संपन्न था, इसलिए उसने नये नये कारखाने स्थापित किये। यहाँ के लोग सेना पर भी बहुत कम व्यय करते थे। यहाँ का व्यापारी वर्ग भी अन्य देशों की अपेक्षा धन धान्य से पूर्ण था। ये ही सब कारण थे जिनके आधार पर इंगलैंड ने औद्योगिक क्रान्ति का नेतृत्व किया।

किन्तु नये आविष्कारों के अभाव में औद्योगिक क्रान्ति संभव नहीं थी। कलें बनाने के लिए इस्पात आवश्यक था। इस्पात बनाने के लिए कोयला आवश्यक था। कोयले को खोदने की नई मशीनों का आविष्कार हुआ। इस्पात बनाने के लिए कोयले की माँग भी कई गुनी बढ़ गई। कोयले की खानों से पानी बाहर निकालने के लिए भाप के इंजिन तैयार किये गये। इसी तरह और भी दूसरे प्रकार की कलों का आविष्कार हुआ।

वस्त्र-व्यवसाय एक महत्त्वपूर्ण उद्योग था। सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दी तक सूती वस्त्र काफी लोकप्रिय हो चुका था। फल यह हुआ कि इसकी माँग भी अधिक हो गई। किन्तु पुरानी विधि से उतना वस्त्र नहीं बनाया जा सकता था कि बढ़ती हुई माँग की पूर्ति की जा सकती। इसलिए नये साधन खोज निकालना आवश्यक हो गया।

इस कार्य के लिए सर्वप्रथम स्पिनिंग जैनी (Spinnig genny) नाम की मशीन का आविष्कार हुआ। जैनी, इस मशीन के आविष्कारक जेम्स हारग्रीव्स (James Hargreaves) की पत्नी का नाम था। इस मशीन से एक बार में ८ सूत काते जा सकते थे। किन्तु इस मशीन से काते हुए सूत अधिक मजबूत नहीं होते थे।

इसके वाद रिचार्ड आर्कराइट (Richard Arkwright) ने ऐसी ही एक दूसरी मशीन खोज निकाली। यह पानी से चलाई जाती थी। कुछ समय पश्चात् एक अँगरेज सज्जन ने, जिसका नाम क्राम्टन (Crompton) था, म्यूल (Mule) नाम की एक ऐसी ही मशीन का आविष्कार किया। कुछ सुधार करने के वाद इस मशीन से श्रेष्ठ ढंग के ४०० सूत काते जाने लगे। किंतु अव लोगों ने इन मशीनों को चलाने के लिए विजली की आवश्यकता अनुभव की। कार्टराइट ने (Cartright) विद्युत् संचालित कर्घे (Power loom) का आविष्कार किया। इस आविष्कार के पश्चात् अनेक कपड़े के कारखाने खोले गये और वस्त्र उत्पादन अधिक मात्रा में होने लगा। इन कारखानों में जेम्स वाट (James Watt) द्वारा वनाये गये भाप के एंजिन काम में लाये जाने लगे।
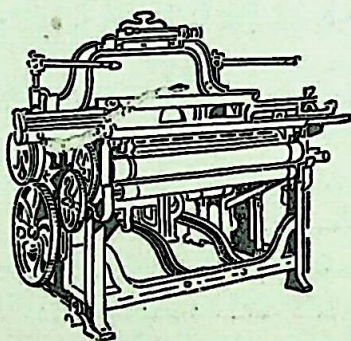
विद्युत् संचालित कर्घा

अव तक कोयले को खानों से खोदने में वड़ी कठिनाई होती थी। इस पर व्यय भी अधिक मात्रा में होता था। वरसात के दिनों में पानी खानों के अन्दर चला जाता था। जिससे कोयले को वड़ी हानि पहुँचती थी। इस पानी को वाहर निकालने के लिए भाप के एंजिन का आविष्कार हुआ। जेम्स वाट ने न्यू कमर (New Comer) के पुराने ढंग के वनाये एंजिन में कुछ संशोधन किये। एक दिन जेम्स वाट, जव वह निरा वालक था, चूल्हे पर खौलते हुए पानी की पतीली का निरीक्षण कर रहा था। उसने भाप के दवाव से उठती हुई पतीली के ढक्कन को देखा और भाप को मशीनों को चलाने के प्रयोग में लाने का निश्चय किया। निःसंदेह भाप के एंजिन के आविष्कार का आधुनिक युग के इतिहास पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। इसके अभाव में वड़े-वड़े कारखानों का चलना अत्यन्त कठिन था। और रेल द्वारा यात्रा करना स्वप्न-मात्र ही होता। किन्तु रेल के एंजिन का आविष्कार स्टीफेन्सन ने किया था। उसने जेम्स वाट के वनाये एंजिन में कुछ सुधार करके उसे अधिक उपयोगी वना दिया। कहा जाता है जव सर्वप्रथम

रेलवे एंजिन काम में लाया गया तो लोगों की धारणा हो गई कि इसे शैतान (Devil) चलाता है।

इतना सब कुछ होने पर भी सव प्रकार के यंत्रों के लिए इस्पात और लोहे की आवश्यकता थी। परिणाम यह हुआ कि इस्पात-उद्योग भी एक महत्त्वपूर्ण समझा जाने लगा। आरंभ में कच्चा लोहा लकड़ी के कोयले से गलाया जाता था। इसी से चाकू और उस्तरे वनते थे। शैफील्ड इस उद्योग का केन्द्र था। कच्चा लोहा इंगलेंड के कई भागों में पाया जाता था। परन्तु यह उन्हीं स्थानों में काम में लाया जाता था—जहाँ कोयला वनाने के लिए जंगल भी थे। कोयला लकड़ी को जलाकर वनाया जाता था। क्रांति के आने पर अधिकाधिक सस्ते लोहे की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। जंगल भी अव खतम होते जाते थे इसलिए लोहे के व्यवसायियों ने देखा कि यदि लकड़ी के कोयले की अपेक्षा पत्थर का कोयला काम में लाया जाय तो अच्छा होगा। जिन जिलों में लोहा और कोयला पाये जाते थे उनमें वड़े कस्वे वन गये। न्यूवसिल में प्राचीन काल से कोयला खोदा जाता था और समुद्र के रास्ते लन्दन में ले जाया जाता था। उद्योगों में पत्थर के कोयले का प्रयोग एक नई चीज थी। इस प्रकार रुई और ऊन के वाद लोहा और कोयला इंगलैंड के मुख्य उद्योग हो गये। लोहे की वड़ी वड़ी चीज़ें जैसे गर्डर और एंजिन के भाग आदि ढलने लगे। लोहे की चादरों से लड़ाई का जहाज वनाया गया जिसका नाम 'वारीअर' (अर्थात् योधा) था। १९वीं शताब्दी में और आविष्कार हुए जिनके द्वारा ईस्पात यानी फौलाद अधिकाधिक मात्रा में वनने लगी। फौलाद से आजकल वहुत सी चीज़ें वनाई जाती हैं जो पहले लोहे से वनती थीं और वहुत मजवूत होती हैं।

इंगलैंड में भी पहले सड़कें नहीं थीं। कच्चे रास्ते थे। पगडंडियाँ थीं जिन पर हो कर आदमी एक जगह से दूसरी जगह जाते थे। सव से महान सड़क बनाने वाला इंगलैंड में एक जेम्स टेलफोर्ड नामक व्यक्ति था जिसकी सड़क सन् १८१७ में समाप्त हुई थी। दो वर्ष वाद स्काटलैंड के एक इंजीनियर ज्ञान मैकेडम ने सड़क वनाने की नई रीति निकाली। इस प्रकार की सड़क गिट्टी को भूमि के धरातल पर कूट कर वनाई जाती थी। अव सड़कें देश में वहुत सी वन गई हैं। डाक वड़ी आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान को जाती है। देश के भिन्न भिन्न भाग सुन्दर पक्की सड़कों से सम्वन्धित हो गये। जनता को इनसे सुख मिला और व्यापार में भी वड़ी सुविधा हुई।

औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व इँगलैंड के कृषक खेती के लिए पुराने ढंग के उपकरण ही काम में लाते थे। हमारे देश में तो सभ्यता के युग में भी वे ही पुराने ढंग के उपकरण काम में लाये जाते हैं। किन्तु प्राचीन ढंग पर्याप्त नहीं थे। फल यह हुआ कि खेती के सुधार के लिए कुछ यंत्रों का आविष्कार आवश्यक समझा जाने लगा। इन यंत्रों के आविष्कार के पश्चात् खेती की उपज कई गुनी अधिक हो गई। यह सच है कि वैज्ञानिक ढंग के उपक्रम खेती के लिए वरदान सिद्ध हुए।

घोड़ों द्वारा खींचे गये तांगों की चाल वहुत धीमी होती थी। वैज्ञानिकों को इसमें भी भाप के एंजिन को काम में लाने की सूझी। जार्ज स्टीफेन्सन को रेल का जन्मदाता कहा जाता है। इसका वनाया हुआ एंजिन सवसे पहले १५ मील प्रतिघंटा की चाल से चला। उस समय यह सवारी सवसे तेज चलनेवाली थी। रेल के सर्व-प्रथम एंजिन का नाम राकेट (Rocket) था।

स्टीम वोट (Steam Boat) के आविष्कार से वहुत सी नहरों का निर्माण हुआ। सन् १७५० और १८३० के वीच में हजारों माल नहरें खोदी गईं। साथ साथ नई तथा सुन्दर सड़कें भी वनवाईं गईं। इसी समय टेलीफोन का
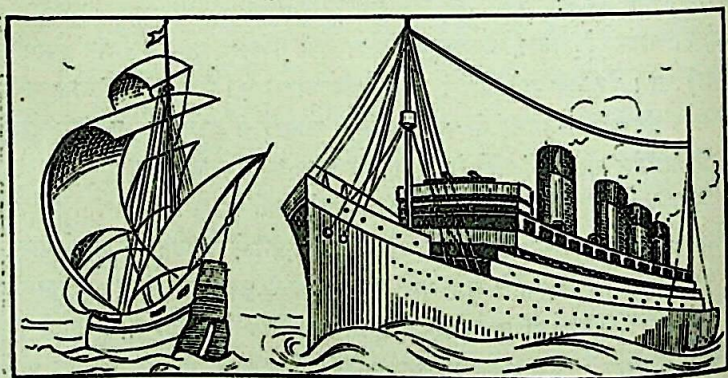
प्राचीन तथा आधुनिक बाष्पीय जहाज

आविष्कार हुआ। एक फ्रान्सीसी वैज्ञानिक ने पता लगाया कि विजली की धारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक समाचार भेजने में काम में लाई जा सकती है।
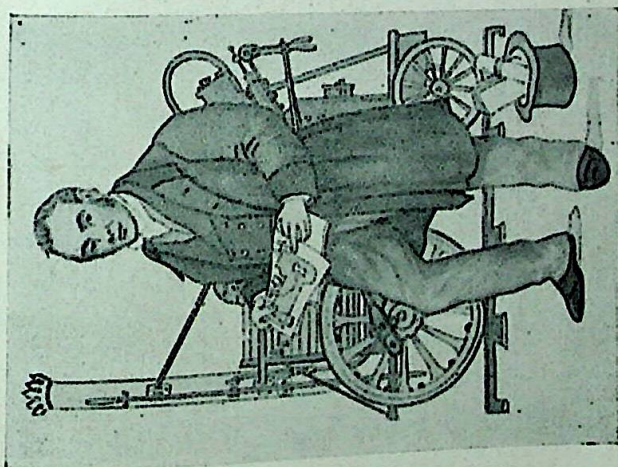
स्टीफेनसन का रॉकेट

जेम्स वाट

टेलीग्राफ के आविष्कार से एक स्थान से दूसरे स्थान तक सरलता से संदेश भेजे जाने लगे। इससे वाणिज्य तथा व्यवसाय में भी खूब उन्नति हुई। कुछ समय बाद अटलांटिक महासागर में समुद्री तार (Cables) बिछाये गये। इससे अमेरिका के लिए संदेश भेजने में बड़ा सुभीता हो गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मशीन के आविष्कार से मनुष्य के जीवन में महान परिवर्तन हुआ। रेडियो तथा टेलीफोन की सहायता से संसार के किसी कोने में बोलते हुए लोगों की बोली अपने घरों में सुनी जा सकती है। हम देख रहे हैं कि दिन-प्रतिदिन नये नये यंत्रों का आविष्कार हो रहा है। औद्योगिक क्रान्ति के कारण व्यवसाय और वाणिज्य में बहुत उन्नति हुई है। अब कहा जा सकता है कि मनुष्य ने प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली है।

औद्योगिक क्रान्ति के कई महत्वपूर्ण परिणाम निकले। इससे उत्पादन की मात्रा बढ़ गई। उद्योगपति अत्यन्त धनवान् बन बैठे। संसार के सभी सभ्य देशों में कारखानों की प्रथा चल पड़ी है। वस्तुओं के उत्पादन के लिए प्रत्येक देश में बड़े-बड़े कारखाने स्थापित किये गये हैं। इन कारखानों से असंख्य लोग अपनी जीविका कमाते हैं। वस्तुएँ बहुत सस्ते दामों में मिलने लगीं। फल यह हुआ कि साधारण व्यक्ति को अधिक से अधिक आराम मिलने लगा।

किन्तु कारखानों की पद्धति के विकास से कुछ बुराइयाँ भी आ गई हैं। मजदूरों की दशा दिन पर दिन बिगड़ती जा रही है। उनके पास रहने के लिए अच्छे मकान नहीं हैं। उनको पर्याप्त मजदूरी नहीं मिलती। इन लोगों की बस्तियाँ घनी बसी हैं। वहाँ पर सफाई का संतोषजनक प्रबन्ध नहीं किया जाता। परिणाम यह होता है कि इन बस्तियों में नाना प्रकार के रोग फैल जाते हैं। पहले मिल-मालिक बच्चों तथा स्त्रियों से खतरनाक काम लेते थे। क्योंकि इनको कम दाम देने से काम चल जाता था। मिल में काम करनेवाले बच्चों की खराब हालत होती थी। किन्तु अब बहुत से देशों में इनकी रक्षा के लिए विभिन्न प्रकार के नियम बनाये हैं। निसंदेह औद्योगक क्रान्ति के कारण ही हम सभ्यता की चरम सीमा पर पहुँचते जा रहे हैं। अमेरिका तथा यूरोप के बहुत से देश धनधान्य से पूर्ण हैं और इसीलिए वे इतने शक्तिशाली बन गये हैं। इस क्रान्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि प्राकृतिक शक्तियों पर मानव का नियंत्रण बढ़ता ही जा रहा है।

अभ्यास

१. औद्योगिक क्रान्ति से आप क्या समझते हैं ?
२. इस क्रान्ति के क्या कारण थे ?
३. औद्योगिक क्रान्ति से पहले इँगलैंड की क्या दशा थी ?
४. किन किन मशीनों का आविष्कार हुआ ? उनके नाम बताइए ।
५. औद्योगिक क्रान्ति ने मनुष्य के जीवन को कैसे प्रभावित किया ?
६. औद्योगिक क्रान्ति का उद्योग और व्यापार पर क्या प्रभाव पड़ा ?
७. 'प्राकृतिक शक्तियों पर मानव का नियंत्रण बढ़ता ही जा रहा है' इस कथन से आप क्या समझते हैं ?

अध्याय ९

इटली तथा जर्मनी का एकीकरण

फ्रान्स की राज्यक्रान्ति ने अनेक नवीन विचारों को जन्म दिया। यूरोप भर में इन विचारों का खूब प्रचार हुआ इनमें राष्ट्रीयता की भावना सबसे महत्त्वपूर्ण थी। संक्षेप में राष्ट्रीयता का अर्थ स्वाधीनता होता है। इसी विचारधारा से प्रभावित होकर बहुत से देशों की निरंकुश सरकार का अंत कर दिया गया।

उन्नीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीयता की भावना यूरोप भर में फैल गई थी। बहुत से देशों में विदेशी शासन का विरोध किया गया। इसके बल पर छोटी-छोटी इकाइयों से राज्यों की स्थापना हुई। जर्मनी तथा इटली ऐसे ही दो महत्त्वपूर्ण देश थे।

आज की तरह जर्मनी तथा इटली कभी इतने संगठित नहीं रहे। सन् १८१५ में मैटरनिश (Metternich) ने इटली के विषय में कहा था—"इटली केवल एक भौगोलिक उक्ति (Geographical expression) है!" जर्मनी की दशा भी इटली से अच्छी नहीं थी। वह लगभग तीन सौ साठ रियासतों का एक समुदाय था। किन्तु नैपोलियन की विजयों के कारण इन देशों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। नैपोलियन की विजयों के फलस्वरूप ही इन देशों में एकीकरण के लिए अनेक आन्दोलन हुए।

फ्रान्स की राज्यक्रान्ति से पहले इटली छोटी-छोटी रियासतों का समुदाय था। इनमें से कुछ रियासतें विदेशी शासकों के हाथ में थीं। ये रियासतें आपस में लड़ाई-झगड़ा किया करती थीं। उनमें किसी प्रकार का आंतरिक लगाव न था। कुछ रियासतें पोप के अधिकार में थीं; जो पोप की रियासतें कहलाती थीं। पोप इटली की दूसरी रियासतों को एक दूसरे के विरुद्ध भड़काया करता था। लोग राष्ट्रीयता का अर्थ अभी तक नहीं समझ पाये थे।

आल्प्स पर्वत को पार करके नैपोलियन ने इटली पर आक्रमण किया था।

आस्ट्रिया तथा विदेशी शासकों को उसने मार भगाया। पोप की रियासतें छीन ली गईं। इससे पहले इन रियासतों में भिन्न भिन्न प्रकार के नियम लागू होते थे। किन्तु नैपोलियन ने पूरे देश के लिए एक से नियम वनाये। योग्य अधिकारियों की नियुक्ति की गई। नैपोलियन के शासन-काल में पहली वार इटली की जनता ने राष्ट्रीयता का अनुभव किया।

नैपोलियन के पतन के वाद इटली की दशा पहले जैसी हो गई। छोटी-छोटी रियासतें फिर से स्वतंत्र वन वैठीं। आस्ट्रिया फिर से इटली का स्वामी वन वैठा, किन्तु स्मरण रहे कि नैपोलियन के राज्यकाल में उन्होंने एकता तथा राष्ट्रीयता का पाठ अच्छी तरह समझ लिया था। परिणाम यह हुआ कि विदेशी शासन की कड़ियों को काट डालने के लिए उन्होंने स्वतंत्रता का झंडा उठाया।

आस्ट्रिया से मुक्ति पाने के अनेक प्रयत्न किये गये। इटलीवासियों ने अपने देश की एकता प्राप्त करने के हेतु अनेक विद्रोह किये। किन्तु खेद का विषय है कि परिणाम कुछ न निकला। आस्ट्रिया की शक्तिशाली सेना के साथ निहत्थी जनता लोहा लेने में असमर्थ थी। किन्तु स्वतंत्रता के वीरों ने हिम्मत न हारी। उनका एक लक्ष्य था और उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने अनेक प्रयत्न किये। वे अपने देश को एक राष्ट्र समझने लगे और उसे स्वतंत्र करने के लिए उन्होंने वड़े से वड़े त्याग का संकल्प किया। इटली के राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में मैट्सिनी, कावूर तथा गैरीवाल्डी का नाम अमर रहेगा।

मैट्सिनी ने इटलीवासियों की नसों में राष्ट्रीयता की भावना कूट-कूटकर भर दी। उसको हम इटली की स्वतंत्रता तथा संगठन का पैगम्वर कह सकते हैं। उसका विश्वास था कि इटली का भविष्य उसके नवयुवकों पर है। इसीलिए राष्ट्रीय विचारों के प्रचार करने के लिए उसने 'यंग इटली' (युनाइटेडइटली) नाम की एक समिति स्थापित की। मैट्सिनी कहा करता था कि नवयुवकों के रक्त में वल तथा प्रभाव होता है। उसका विचार था कि नवयुवकों की एक हुंकार जनता में विजली की लहर की तरह दौड़ जाती है। यही कारण है कि उसने अपने नवयुवक अनुगामियों को देश के एक कोने से दूसरे कोने तक स्वतन्त्रता का संदेश देने को कहा। वह चाहता था कि स्वतन्त्रता की आग प्रज्वलित होकर निर्धन और पीड़ित सभी के हृदयों को प्रभावित करे। इसका फल यह हुआ कि इटलीवासियों के मस्तिष्क में स्वतंत्र इटली की भावना ने दृढ़ स्थान ले लिया। उसने इटलीवासियों के हृदय में

स्वतंत्रता की आग लगा दी थी और उनको अपने देश के लिए मरना सिखा दिया। उसके मस्तिष्क में एकता तथा स्वतंत्रता के विचारों ने घर बना लिया था। वह कहा करता था—'मेरा हृदय चीरकर देखो, उसमें ये ही दो शब्द लिखे मिलेंगे', एकता और स्वाधीनता। उसने इटली की जनता को एकता तथा राष्ट्रीयता का संदेश दिया और अपने स्वाभिमान के लिए मरना सिखाया। आस्ट्रिया की क्रूरता के कारण उसे कई बार इटली से भागना पड़ा। किन्तु जन-समुदाय उसका अनुयायी था। जनता अपने नेता के संकेत मात्र पर देश की भलाई के लिए अपने प्राणों की वलि देने को तैयार थी।

किन्तु यह मानना पड़ेगा कि मैट्सिनी कुशल राजनीतिज्ञ न था। वह आदर्शवादी था। इसीलिए वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति न कर पाया। मैट्सिनी का अधूरा कार्य कावूर द्वारा सम्पन्न हुआ। कावूर पहले कृषि का कार्य करता था। किन्तु बाद में अपनी वहुमुखी प्रतिभा के कारण वह सार्डीनिया का मंत्री चुना गया। वह राजनीति के दावपेचों को खूब समझता था और परिस्थितियों का गहरा अध्ययन करता था। वह स्पष्ट रूप से समझता था कि इटली को स्वतंत्र वनाने तथा उसका एकीकरण करने के इस काम में पीडमंट राज्य का नेतृत्व ग्रहण करना आवश्यक है। और वह यह भी अच्छी तरह समझता था कि इटली को नवजीवन प्रदान करने के लिए विदेशियों से सहायता लेना नितान्त आवश्यक है। उसने अपने महान् उद्देश्य की सफलता के लिए फ्रांस से वातचीत प्रारंभ की। वह अपनी कार्य-कुशलता तथा उच्च-कोटि के कौशल से ही नैपोलियन तृतीय की सहायता प्राप्त करने में सफल हुआ। नैपोलियन तृतीय ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि आस्ट्रिया के साथ लड़ाई छिड़ने पर वह सार्डीनिया की सहायता करेगा। फ्रांस तथा सार्डीनिया की संयुक्त सेनाओं ने आस्ट्रिया की सेना को दो महायुद्धों में हराया। किन्तु इसी समय एक आश्चर्यजनक घटना हुई। लड़ाई समाप्त भी न हुई थी कि नेपोलियन ने सार्डीनिया से परामर्श लिए विना ही आस्ट्रिया से संधि कर ली! यह संधि इटली की आशाओं पर कुठाराघात था। कावूर की आशाएँ चूर चूर हो गईं। किन्तु वीर ऐसे समय पर निराश नहीं होते। उन्हें निराशा में आशा दिखाई देती है। कावूर भी ऐसा ही वीर देशभक्त था। संधि की शर्तें सव लोगों ने मान लीं। किन्तु इस समय मैट्सिनी ने कहा था—"राजतंत्र के लिए मैं अपना मस्तक दुख के साथ झुकाता हूँ, किन्तु मेरी गणना उसके सेवकों और समर्थकों में

नहीं होगी ।" इस समय लोग राष्ट्रीयता की भावना से इतने प्रभावित थे कि बहुत सी रियासतों ने स्वेच्छा से सारडीनिया में मिलाये जाने की इच्छा प्रकट की। इनमें टस्कनी, पारमा, मोडीना तथा रोमैना के नाम प्रमुख हैं। इतने कम समय में उत्तरी इटली का एकीकरण कर लिया गया। केवल रोम और वैनिस को अभी मिलाना शेष था।

मैट्सिनी ने इटली के एकीकरण के विचारों को जन्म दिया। कावूर ने कुशल राजनीतिज्ञ का काम किया और गैरीवाल्डी इसका सेनानायक बना। इतना सब कुछ होने पर भी यह मानना पड़ेगा कि गैरीवाल्डी के सहयोग बिना इटली का एकीकरण होना असंभव था। उसने नेपल्स को विजय करने का बीड़ा उठाया और अपने १००० मात्र सैनिकों से नेपल्स को सार्डीनिया पीडमंट में मिला लिया। निस्संदेह वह निःस्वार्थी महापुरुष था क्योंकि वह अपने लिए कुछ नहीं चाहता था। उसने जीती हुई रियासतें सार्डीनिया के राजा को दे दीं और स्वयं एक साधारण मनुष्य बन गया। इसे कहते हैं महान त्याग। वह तो केवल कृषक बनकर ही अपना जीवन व्यतीत करना चाहता था। यह था गैरीवाल्डी का अद्वितीय देश-प्रेम। उसने अपने देश की भलाई के लिए विश्व के अन्य सब पदार्थों को तुच्छ समझा। सचमुच गैरीवाल्डी की यह भावना राष्ट्रीयता के इतिहास में अमर रहेगी।

कुछ समय पश्चात् इन वीरों के अथक प्रयत्नों के कारण रोम तथा वैनिस को भी इटली में मिला लिया गया और इस प्रकार सन् १८७० में इटली का एकीकरण सम्पन्न हो गया और मैटसिनी का स्वप्न पूरा हो गया।

जर्मनी का एकीकरण

फ्रांस की राज्य-क्रान्ति के पहले जर्मनी की दशा बड़ी शोचनीय होती जा रही थी। यह बहुत सी छोटी-छोटी रियासतों का एक समुदाय था। इन रियासतों में कुछ बड़ी थीं और कुछ छोटे छोटे शहरों के बराबर थीं। यहाँ निरंकुश राजा राज्य करते थे। इन रियासतों को शासन के समस्त अधिकार प्राप्त थे। यह रियासतें सदैव आपस में लड़ाई-झगड़ा किया करती थीं। किन्तु फ्रान्स की राज्य-क्रान्ति के दिनों में जर्मनी की दशा में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। फ्रान्सीसी सेनाओं ने इन रियासतों पर भी आक्रमण किया था। अपनी विजय के पश्चात् नैपोलियन ने इन रियासतों को एक सूत्र में बाँधा और फ्रान्स की तरह वहाँ का शासन साधारण ढंग

गैरी वाल्डी
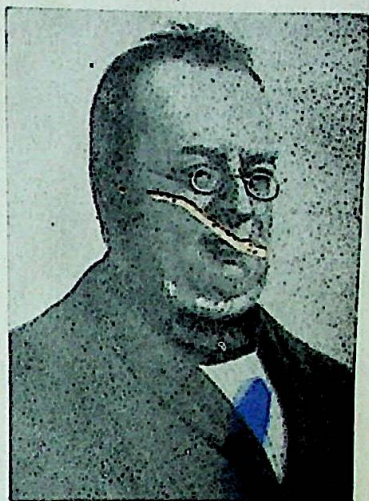
कावूर
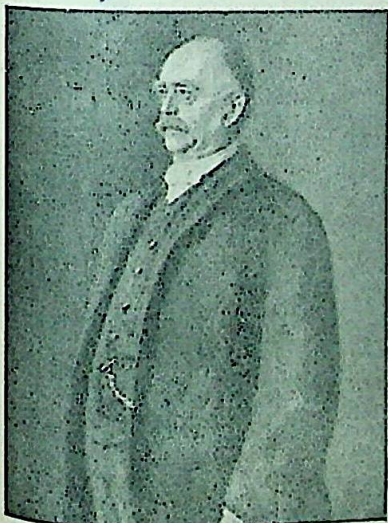
विसमार्क
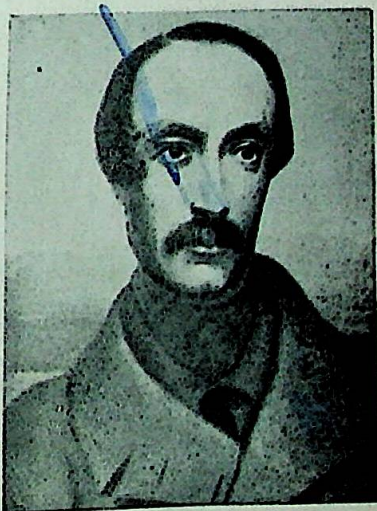
मेजिनी

से होने लगा। किन्तु नैपोलियन की इस नीति का परिणाम जर्मनी के लिए लाभदायक सिद्ध हुआ। नैपोलियन के शासन-काल में जर्मनीवालों ने राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ा और देश की एकता का महत्व समझा। फलस्वरूप उन्होंने नैपोलियन के विरुद्ध झंडा उठाया और लीपज़िग (Leipzig) के युद्ध में नैपोलियन की सेना को राइन नदी तक मार भगाया। यह स्मरण रहे कि नैपोलियन के जीवन में यह सर्व प्रथम हार थी। जर्मनी की जनता का उत्साह बढ़ा और उसने अपने देश की एकता के लिए नई नई योजनाएँ बनाईं। सन् १८१५ में नैपोलियन का पतन हुआ और एक यूरोपीय कांग्रेस के द्वारा देशों की सीमा नये रूप से निर्धारित की गई। इसका प्रभाव यह हुआ कि स्वतंत्र राजनीतिक जीवन दब गया। जर्मनी का शासन आस्ट्रिया को दे दिया गया। आस्ट्रिया एक विदेशी शक्ति थी। आस्ट्रिया को पार्लियामेंट का सभापति बना दिया गया और इसी ने सम्पूर्ण शासन की बागडोर सँभाली।

किन्तु जर्मनवासियों को सदैव पराधीनता की कड़ियों में जकड़े रहना असंभव था। प्रशिया एक शक्तिसम्पन्न रियासत थी। वहाँ के इतिहासकारों ने जनता के हृदय में एक नई भावना का संचार किया था। इतिहासकारों का विश्वास था कि प्रशिया का उद्देश्य जर्मनी की एकता प्राप्त करना है। इतिहास, विज्ञापन और प्रचार का एक साधन बन गया। वहाँ के विश्वविद्यालयों में नियुक्त प्राध्यापकों ने विकसित समाज पर व्यापक प्रभाव डाला। राष्ट्रीय एकीकरण के लिए एक आन्दोलन उठा, जिसका नेतृत्व प्रशिया ने किया। १८४८ में क्रान्ति की आग भड़की पर यह क्रान्ति सफल न हो सकी।

जर्मनी का एकीकरण बिस्मार्क (Bismarck) के अथक प्रयत्नों का फल था। उसका जन्म जमींदार परिवार में हुआ था और उसका स्वभाव तथा रहन-सहन के ढंग भी वैसे ही थे। उसके बाप ने उसे कानून पढ़ने के लिए यूनिवर्सिटी में भेजा।

परन्तु वह मद्य-पान में मस्त रहता और पढ़ाई में उसका चित्त नहीं लगता था। विश्वविद्यालय से निकलने के पश्चात् उसको राज्य में एक नौकरी मिल गई थी। किन्तु यह उसे अच्छी न लगी। उसने नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और अपनी रियासत में रहने लगा। वहाँ पर वह बहुत लोकप्रिय हो गया। वह प्रजातंत्र का विरोधी था। उसका उद्देश्य था जर्मनी की समस्त रियासतों का संगठन करना। उसका विश्वास था कि भाषणों तथा प्रस्तावों द्वारा यह कार्य पूरा नहीं हो सकता था, इसको पूर्ण करने के लिए तो 'रक्तपिपासु एवं कठोर' (Blood and iron)

नीति का सहारा लेने से काम चलेगा। वह यह भी अच्छी तरह समझता था कि प्रशिया के नेतृत्व के विना एकता उत्पन्न करना असंभव कार्य है।

विस्मार्क विशालकाय था। वह ६ फीट से भी अधिक लम्वा था। उसके वाल सुन्दर थे और उसका चेहरा रूखा तथा रोवदार था, वह एक कुशल वक्ता नहीं था। वह कटुभाषी था और शिष्टाचार में विश्वास नहीं रखता था। आस्ट्रिया-वालों का सामना करने के लिए वह एक उपयुक्त पुरुष था। वहाँ की धारासभा में केवल आस्ट्रिया के लोग ही धूम्रपान कर सकते थे। किन्तु विस्मार्क अपना सिगार जलाकर उस धुएँ को आस्ट्रियावालों के मुँह की ओर उड़ाया करता था। प्रशिया का मंत्री वन जाने के वाद उसने प्रशिया को जर्मनी का नेतृत्व कराने की ठान ली थी। वह मनुष्य की प्रकृति का गहरा निरीक्षण करता था। अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वह खूव झूठ वोलता था और लोगों को खूव धोखा भी देता था। गणतंत्र तथा प्रजातंत्र राज्य में उसकी किंचित्-मात्र भी श्रद्धा नहीं थी। यह हैं उस कूटनीतिज्ञ के चरित्र की कुछ विशेषताएँ।

अव विस्मार्क ने अपनी कार्य-प्रणाली निश्चय की। उसका उद्देश्य था—प्रशिया को अत्यन्त शक्तिशाली राज्य वनाना। उसने डेनमार्क के विरुद्ध युद्ध शुरू कर दिया और उसे हरा दिया। फिर उसने आस्ट्रिया से लोहा लिया और १८६६ में सैडोवा के युद्ध में उसे मार भगाया। इस युद्ध को सात सप्ताह का युद्ध कहते हैं। अव प्रशिया जर्मनी का नेतृत्व कर सकता था किन्तु उसके रास्ते में फ्रांस वाधा वना हुआ था। विस्मार्क ने उसे भी दूर कर दिया।

अपनी कुशल राजनीति तथा प्रौढ़ कूटनीति के कारण विस्मार्क ने फ्रांस तथा प्रशिया में झगड़ा करा दिया। नैपोलियन तृतीय को वन्दी कर लिया गया। फ्रान्स पर आक्रमण हुआ। कुछ समय तक घमासान युद्ध के पश्चात् फ्रांस ने हथियार डाल दिये।

प्रशिया की छत्रछाया में जर्मनी ने एक सुसंगठित राष्ट्र का रूप धारण किया। विस्मार्क प्रशिया का महामंत्री वना। उसकी कठोर नीति के कारण वहाँ के वादशाह (Kaiser) से उसका भेदभाव उत्पन्न हो गया। इस नीति का अंतिम परिणाम यह हुआ कि विस्मार्क को पदच्युत कर दिया गया। विस्मार्क के पतन के वाद जर्मनी की राजनीति में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुआ।

प्रशिया के नेतृत्व में जर्मनी को एक सुसंगठित राष्ट्र का रूप देना, विस्मार्क

की एक महान् सफलता थी। यह उसी की शक्ति तथा योग्यता का परिणाम था कि उसने आस्ट्रिया को जर्मनी से निकाल बाहर किया। जब तक देश की बागडोर उसके हाथों में रही, जर्मनी यूरोप में सबसे शक्तिशाली देश समझा जाता रहा।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि इटली तथा जर्मनी का एकीकरण राष्ट्रीयता के बल पर हुआ और इस भावना का उदय नैपोलियन के युद्धों से हुआ।

अभ्यास

१. नैपोलियन के युद्धों का इटली पर क्या प्रभाव पड़ा?
२. मैट्सिनी कौन था? उसके क्या विचार थे?
३. कावूर के चरित्र का संक्षेप में वर्णन कीजिए। उसने इटली के एकीकरण के लिए क्या प्रयत्न किये?
४. गैरीवाल्डी कौन था? उसने अपने देश की क्या सेवाएँ कीं?
५. नैपोलियन के पतन के बाद जर्मनी की क्या दशा थी?
६. बिस्मार्क कौन था?
७. उसके क्या सिद्धान्त थे? उसके चरित्र का वर्णन करिये।
८. बिस्मार्क ने जर्मनी का एकीकरण किस प्रकार किया?
९. आस्ट्रिया के प्रति उसकी बैर की भावना क्यों थी?

अध्याय १०

अमेरिका में दास-प्रथा का अंत

दास-प्रथा का इतिहास शताब्दियों पुराना है। इस प्रथा का जन्म भी मानव-समाज के आदिकाल में हुआ समझा जाता है। प्राचीन प्रथा के अनुसार विजयी देश पराजित सेना को अपना दास बना लेता था। कितनी लज्जा की बात है कि उनका क्रय-विक्रय पशुओं की तरह होता था। मानव होने पर भी उनको मानव की श्रेणी में नहीं रखा ज़ाता था। ग्रीक-समाज में दास प्रथा व्यापक रूप से प्रचलित थी। कितने आश्चर्य का विषय है कि ग्रीस के कुछ महान् विद्वानों तक की धारणा थी कि कुछ मनुष्य प्राकृतिक रूप से दास बनने को जन्म लेते हैं। रोम साम्राज्य में भी इस प्रथा का बोल-बाला था। ये दास रोमवासियों के जीवन को सुविधाजनक बनाने के लिए कठिन परिश्रम करते थे। इन दासों के स्वामी इनके साथ मनचाहा व्यवहार करते थे। किन्तु रोम के पतन के पश्चात् दास प्रथा का यूरोप से धीरे धीरे अंत हो गया। ईसाई धर्म के आविर्भाव से इनकी दशा में कुछ सुधार हुए।

किन्तु अभी दास प्रथा का अंत होना इतना सरल नहीं था। नये प्रदेशों की खोज के पश्चात् दास-प्रथा फिर चल पड़ी थी। इसके कई कारण हैं। व्यापारी लोग सस्ते दाम देकर काम करवाना चाहते थे। इस कार्य के लिए वे अफ्रीका से बहुत से दास पकड़ लाते थे। इन लोगों को यह सब अमानुषिक व्यवहार सहन करना पड़ता था। क्योंकि सभ्य यूरोपीय लोगों से लोहा लेना कठिन कार्य था। परिणाम यह होता था कि इनको वे लोग सरलता से हरा देते थे और उन्हें जीवन भर दास बनाये रखते थे। हृष्टपुष्ट दासों को बाजार में ले जाकर बेच दिया जाता था। स्त्री-बच्चे तथा वृद्ध दासों को मार डाला जाता था। अफ्रीका से इन लोगों को पकड़कर जहाज पर लाया जाता था। इनकी दशा बड़ी दयनीय थी। इनकी गर्दन में रस्सी बाँधकर ऊँट घोड़े की तरह एक पंक्ति में चलाया जाता था। तनिक सी सुस्ती करने पर इन को कोड़ों से मार लगाई जाती थी। ऐसी थी मानव की दशा उस समय!

जहाजों में भरकर इन दासों को अमेरिका के नये खोजे हुए स्थानों में लाया जाता था। अमेरिका के कुछ विभाग इतने उष्ण थे कि यूरोपीय वहाँ पर सुविधा पूर्वक कार्य नहीं कर सकते थे। दासों को उचित मूल्य देकर खरीद लिया जाता था और खेती के काम में लगा दिया जाता था। जिससे तम्बाकू, चीनी तथा रुई आदि का उत्पादन होता था। दास का उचित मूल्य चुका देने पर वह उसका पूर्णरूप से स्वामी बन जाता था। यह सब कुछ स्वामी की इच्छा पर निर्भर रहता था कि वह अपने दास के साथ कैसा व्यवहार करे। इसमें किसी भी व्यक्ति को हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं था। इस प्रकार दास-प्रथा का खूब प्रचार हुआ और यूरोप-वासी इसको अत्यन्त लाभदायक व्यापार समझने लगे। ये लोग अफ्रीका से दासों को पकड़कर अमेरिकावासियों को बेच देते थे। इससे उन्हें गहरा लाभ होता था।

दासों के प्रति अमानुषिक व्यवहार की भावना तो आज भी विद्रोह की भावना उत्तेजित करती है। इनके स्वामी इन्हें डंडों से मार सकते थे, किसी प्रकार की सजा दे सकते थे और यहाँ तक कि उनको जान से मार डाल सकते थे। मानवता अन्याय के चंगुल में फँसी थी। स्वामी के घर से चोरी से भाग जाने पर और फिर पकड़े जाने पर इनको प्राणदण्ड मिलता था। 'अंकिल टोम्स केबिन' Uncle Tom's Cabin नामक पुस्तक में नीग्रो दासों की दशा का नग्न चित्र मिलता है। आश्चर्य की बात है कि अमेरिकावासी ईसाई धर्म के माननेवाले हैं और उनके विधान में समानता का सिद्धान्त माना गया है। फिर भी इन धार्मिक व्यक्तियों को अपने दासों की दयनीय दशा पर तरस नहीं आया।

अमेरिका महाद्वीप में दास प्रथा का श्रीगणेश 'डब्लू स्पेनिआर्डस' (W. Spaniards) ने किया। इन्होंने भारतीयों से श्रमिकों का काम लेना चाहा। पर इतने दुरूह कार्यों को वे लोग नहीं कर पाते थे और मर जाते थे। फिर इन कार्यों के लिए अफ्रीका से नीग्रो पकड़कर लाये जाने लगे। ये लोग बलशाली होते थे इसलिए मारपीट को सहन कर लेते थे। इसके साथ-साथ गोरे लोगों ने यह भी सोचा कि इस माध्यम से उनके धर्म का भी खूब प्रचार होगा। मशीन युग के उदय के साथ परिस्थितियाँ बदलीं। रुई की माँग बढ़ गई। नीग्रो लोगों से भरपूर काम लिया जाने लगा। इनका क्रूर व्यवहार असह्य हो गया। परिणाम यह हुआ कि भारतीयों की तरह ये लोग भी तड़प तड़पकर मरने लगे।

समय परिवर्तनशील है। समय के साथ-साथ मनुष्य की विचार-धारा भी

वदलती रहती है। यहाँ भी लोगों के विचारों में परिवर्तन हुआ और एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। इँग्लैंड ने दास-प्रथा के प्रचार में प्रमुख भाग लिया था। पर कितने आश्चर्य की वात है कि सर्वप्रथम ब्रिटिश साम्राज्य में ही दास-प्रथा नष्ट की गई। सन् १८४० के पश्चात् ब्रिटिश साम्राज्य के किसी भाग में एक दास खोज निकालना असंभव हो गया। दूसरे देशों ने इँग्लैंड का अनुकरण किया। अव दासों का पकड़ना प्रायः समाप्त सा हो गया, पर पुराने दासों की दशा नहीं वदली।

अमेरिकन स्वतंत्रता के पश्चात् उत्तरी राज्यों के लोगों ने व्यापार की मात्रा कई गुनी अधिक कर दी। नये नये धंधे प्रारंभ किये गये। वड़े वड़े कारखानों की स्थापना हुई। इन राज्यों की जलवायु उष्ण नहीं थी। इसलिए यूरोपियन विना किसी असुविधा के काम कर सकते थे। धीरे धीरे दासों की आवश्यकता कम अनुभव होने लगी। किन्तु दक्षिणी राज्य मुख्यतः खेती पर ही निर्भर थे। वहाँ की जलवायु भी उष्ण थी। ऐसी परिस्थितियों में यूरोपियन अपने खेतों में कार्य नहीं करना चाहते थे और उनका मत था कि उनका काम दासों द्वारा होना चाहिए। इस प्रकार अमेरिका के राज्य दो भागों में विभाजित हो गये। उत्तरी राज्य इस अमानुषिक व्यापार का नाश कर देना चाहते थे। परन्तु दक्षिणी राज्य चाहते थे कि निर्धन और वलहीन सदैव के लिए दास वने रहें। अमेरिका वासियों ने पश्चिम की ओर प्रस्थान किया। इन भागों में दोनों दल अपना अपना स्वामित्व स्थापित करना चाहते थे। वैमनस्य वढ़ता ही गया। विरोध की भावना सजग हो उठी। मानव, मानव के रक्त का प्यासा वन वैठा; और एक दिन दो दलों में युद्ध छिड़ गया।

किसी ने सच कहा है कि प्रकृति ने मानव की आवश्यकता के अनुकूल महापुरुषों को जन्म दिया है। यह कहावत लिंकन के विषय में भी अक्षरशः सत्य है। संयोग की वात थी कि अब्राहम लिंकन (Abraham Lincoln) इस समय अमेरिका का सभापति चुना गया। वह दास प्रथा को नष्ट करने के पक्ष में था। विश्व-इतिहास में लिंकन का नाम अमर रहेगा। क्योंकि उसने दास प्रथा के नाश के लिए अपने प्राणों तक की वलि दे दी।

लिंकन एक निर्धन कृषक का पुत्र था। उसके पिता पढ़े लिखे नहीं थे। किन्तु उसकी माँ असाधारण योग्य तथा वुद्धिमान् स्त्री थी। लिंकन का घर, जहाँ
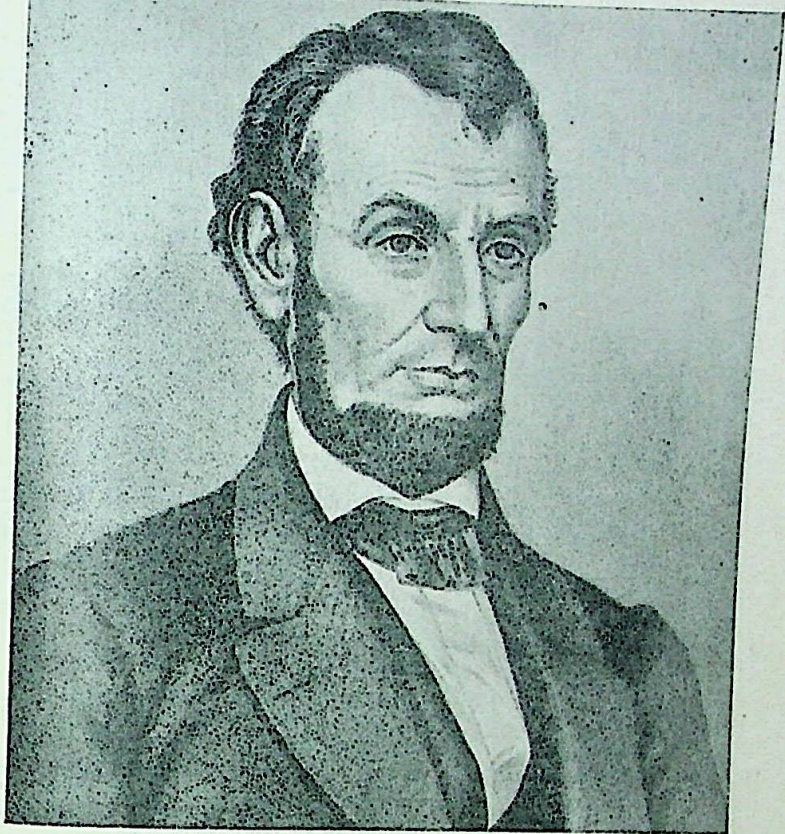
अब्राहम लिंकन

उसने जन्म लिया था, लकड़ी की बनी एक झोपड़ी थी। युवावस्था में उसने पढ़ना आरंभ किया। किन्तु पाठशाला की पढ़ाई से अधिक उसकी माँ घर पर पढ़ाती थी। पुस्तकों से उसे विशेष प्रेम था। कहा जाता है कि किताबों की खोज में वह मीलों निकल जाता था। वह एक कुशल पहलवान था और दौड़ने की विद्या में भी बड़ा प्रवीण था। प्रारंभ में कुछ समय तक उसने क्लर्क का काम किया। तत्पश्चात अपनी बहुमुखी प्रतिभा के कारण वह वकील हो गया। किसी ने सच कहा है 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात'।

लिंकन संघ सभापति चुन लिया गया। पर उसके चुनाव का प्रभाव यह पड़ा कि दक्षिणी राज्य संघ से अपना नाता तोड़ना चाहते थे और अपना अलग संघ बनाकर रहना चाहते थे। लेकिन लिंकन नहीं चाहता था कि यह संघ किसी प्रकार छिन्न-भिन्न हो। इसलिए उसने उनके इस कार्य का कड़ा विरोध किया। फल यह हुआ कि अमेरिका में गृहयुद्ध हो गया और दिन-प्रतिदिन यह भीषण रूप धारण करता गया। ५ वर्ष के बाद इसका अन्त हुआ। सन् १८६३ में लिंकन ने एक आज्ञा निकाली (Emancipation Proclamation) जिसके द्वारा सम्पूर्ण दासवर्ग को मुक्त कर दिया गया। इस युद्ध में लिंकन विजयी हुआ और उसकी विजय के साथ दास-प्रथा का अन्त हो गया। दक्षिणी राज्यों को लिंकन की आज्ञा को शिरोधार्य करना पड़ा। थोड़े दिनों बाद ही इस महापुरुष की किसी पागल ने हत्या कर दी। पर उसका उद्देश्य पूरा हो चुका था। लिंकन का भौतिक शरीर मर गया, पर उसका नाम मानव-इतिहास में अमर हो गया। सब राज्यों में दास प्रथा का अंत कर दिया गया। केवल क्यूबा में यह प्रचलित रही क्योंकि वह देश स्पेन के अधिकार में था।

देश में एकता स्थापित हो गई थी। दासों को मुक्त कर दिया गया। उनको नागरिकता के समान अधिकार दिये गये। यद्यपि दक्षिणी राज्यों को करारी हार मिली थी फिर भी उनकी विचारधारा में विशेष अन्तर नहीं आया। उन्होंने गुप्त सम्मतियों का संगठन करना प्रारंभ कर दिया। ऐसी एक सम्मति कु क्लक्स क्लान (Ku Klux Klan) है जो आज भी सभ्यता के युग में जीवित है। आज भी जब हम सभ्यता की चरम सीमा पर पहुँच गये हैं, दक्षिणी राज्यों में नीग्रो जाति के साथ क्रूर व्यवहार किया जाता है। समानता के युग में भी उनके बच्चों को स्कूलों में नहीं पढ़ने दिया जाता।

यद्यपि लिंकन ने एक निर्धन घर में जन्म लिया था, किन्तु वह अपनी अद्वितीय प्रतिभा और असाधारण बुद्धि के कारण अपने देश के सर्वोच्च पद पर पहुँच गया। उसने दास-प्रथा का नाश कराके ही चैन लिया। यही कारण है कि संसार में उसका नाम अमर हो गया है।

अभ्यास

१. अमेरिका में दास प्रथा कैसे प्रारंभ हुई ?
२. स्वामी अपने दास के प्रति कैसा व्यवहार करते थे ?
३. लिंकन के प्रारंभिक जीवन के विषय में आप क्या जानते हैं ?
४. लिंकन ने अमेरिका से दास-प्रथा का नाश करने के लिए क्या-क्या प्रयत्न किये ?
५. कु क्लुक्स क्लान (Ku Klux Klan) से आप क्या समझते हैं ?

दास व्यापार से तुम क्या समझते हो एवं इसका प्रादुर्भाव और अंत किस प्रकार हुआ ?

अध्याय ११

साम्राज्यवाद

हम पहले कह आये हैं कि स्पेन, पुर्तगाल तथा इँगलैण्ड के वीर नाविकों ने किस प्रकार नये नये प्रदेशों को खोज निकाला। उत्तरी अमेरिका का पता कोलम्बस को लगा। अमेरीगो (Amerigo) तथा मैगलैन ने (Magallen) दक्षिणी अमेरिका की खोज की। वास्कोडिगामा (Vasco-Da-Gama) ने हमारे देश का पता लगाया। यूरोप के शक्तिशाली देशों ने यहाँ उपनिवेशों की स्थापना की। ये लोग यहाँ की जनता पर विजय प्राप्त करके उसे हमेशा के लिए दास बना लेते थे। इस परम्परा का फल यह हुआ कि उत्तरी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया पर भी यूरोपीय वातावरण का रंग चढ़ गया।

साम्राज्यवाद की इस दौड़ के आरम्भ में ही अँगरेजों ने हमारे देश में अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया था। डचों ने इंडोनेशिया को पराधीनता की वेड़ियों में जकड़ लिया था। रूसी-साम्राज्य का विस्तार मुख्यत: एशिया में हुआ। रूस प्रशान्त महासागर की ओर बढ़ता ही गया। इस समय ऐसे अनेक राजा थे जिन पर सुगमता से विजय प्राप्त की जा सकती थी। इसीलिए साम्राज्यवादी देशों में वैर-भावना की मात्रा अधिक न थी। १९वीं शताब्दी में यूरोपीय साम्राज्यवाद की लहर लगभग समस्त विश्व में फैल चुकी थी। किन्तु १९वीं शताब्दी से समय बदला। संसार के पराधीन देशों को जीतना तथा उपनिवेश वसाना इस शताब्दी की एक मुख्य विशेषता हो गई। अँगरेजों ने अनेक प्रदेश जीते और एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की। कहा जाता है कि इनका साम्राज्य इतना विशाल था कि यहाँ कभी सूर्यास्त नहीं होता था। उपनिवेशों की इस छीना-झपटी में भला फ्रांस कैसे पीछे रह सकता था। उसने मरते गिरते अँगरेजों की तरह एक विशाल साम्राज्य स्थापित कर लिया। अँगरेजों ने अनेक प्रदेश जीते पर वे उत्तरी अमेरिका पर अपना स्वामित्व न जमा सके।

नये प्रदेशों की खोज के पीछे एक रोचक कहानी है । कुछ देश ऐसे थे जिनमें प्रधानतया मसालों की उपज खूब होती थी । इन देशों का सीधा मार्ग खोज निकालने के साथ साथ नये नये देश भी खोजे गये । धीरे धीरे व्यापार बढ़ता गया । यूरोप के देश पूर्वी देशों की उपज को खरीद लेते थे । किन्तु १९वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही इस परम्परा को बल मिला । इस समय तक औद्योगिक क्रान्ति इंगलैण्ड तथा यूरोप के अन्य देशों को व्यापक रूप से प्रभावित कर रही थी । समुद्रों को पार करने के नये-नये साधन ढूंढ़ निकाले गये थे ।

भाप के एंजिन का आविष्कार हुआ । फलतः विशाल और शक्तिशाली जहाज बनने लगे । यातायात के अन्य साधनों की भी वृद्धि हुई । इन आविष्कारों के साथ नई सभ्यता का जन्म हुआ । विश्व के एक कोने से दूसरे कोने तक पहुँचना अत्यन्त सरल हो गया । यात्रा सुविधाजनक हो गई और समय की भी बचत होने लगी ।

फ्रान्स तथा इंगलैंड में बड़े बड़े कारखानों की स्थापना की जा रही थी । आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन बढ़ा । अधिक उत्पादन के लिए अधिक कच्चे पदार्थों की आवश्यकता हुई । यह याद रखना चाहिए कि कच्चे पदार्थों की आवश्यकता के कारण ही साम्राज्यवाद का जन्म हुआ ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि, १९वीं शताब्दी के प्रारंभ में यूरोप के सभी देश उपनिवेश स्थापित करने को पागल हो उठे थे । प्रत्येक देश कुछ न कुछ पा जाने को लालायित था । असभ्य देशों पर आक्रमण किया जाता था । किन्तु निहत्थी जनता यूरोप के बलशाली देशों के सामने कैसे ठहर सकती थी । कुछ चालाक गोरों ने इस समय एक नारा लगाया था । इस नारे का अर्थ था 'गोरी जाति का बोझ' । इस नारे का आशय था कि गोरी जाति धर्म, संस्कृति और सभ्यता की अग्रदूत हैं । एशिया तथा अफ्रीका के असभ्य लोगों को सभ्य बना देने का कार्य उन्हीं को सौंपा गया है । यह कार्य उनको ईश्वर ने सौंपा है । इसलिए असभ्य देशों पर अधिकार जमाना आवश्यक हो गया ।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में अफ्रीका एक 'अन्धकारमय महाद्वीप' समझा जाता था । लोग उसके विषय में अधिक नहीं जानते थे । उसके समुद्र तट पर अनेक बस्तियां बसी थीं और भीतरी भाग से लोग प्रायः अनभिज्ञ थे । किन्तु धीरे धीरे इन लोगों ने अफ्रीका के भीतरी भागों से भी सम्बन्ध स्थापित कर लिए । इस कार्य की सफलता में वहाँ के धर्मावलंबियों ने बड़ा सहयोग दिया । इनमें दो के नाम

विशेष उल्लेखनीय हैं। उनके नाम हैं लिविंगस्टन (Livingstone) तथा स्टैनले (Stanley)। लिविंगस्टन धार्मिक विचारों में बड़ा विश्वास करता था। उसका मत था कि अफ्रीका के लोग नर्क की ओर जा रहे हैं। उन्हें ईसाई धर्म का संदेश सुनाकर बचाया जा सकता है। इस कार्य के लिए, उसने सम्पूर्ण अफ्रीका का भ्रमण किया। उसे अनेक घने तथा भयानक जंगलों को पार करना पड़ा। जहाँ उसका जीवन भी सुरक्षित नहीं था। कभी कभी तो ऐसा हुआ कि इन लोगों को मार्ग के वृक्षों तक को काटना पड़ा। क्योंकि रास्ता साफ न था। उन्हें छोटी छोटी नावों से विशाल नदियों को पार करना पड़ा। परिणाम यह हुआ कि लिविंगस्टन बीमार पड़ गया। किन्तु उसने साहस न छोड़ा और यात्रा करता ही गया। जब वर्षों लिविंगस्टन का कोई समाचार न मिला, तो स्टैनले उसका पता लगाने चला। उसने कांगो नदी के मुहाने से अपनी यात्रा प्रारंभ की। वह दृढ़ विचारों का व्यक्ति था। उसको भी अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। वहाँ के लोगों ने उस पर आक्रमण कर दिया। इस समय वहाँ भीषण गर्मी पड़ रही थी। किन्तु उस वीर ने साहस के साथ इन कठिनाइयों का सामना किया। उसने मध्य अफ्रीका के बहुत से स्थानों को खोज निकाला।

इस प्रकार अफ्रीका अब अंधकारमय महाद्वीप न रह गया था; और उन्नीसवीं शताब्दी के चौथे चतुर्थांश में अफ्रीका का विभाजन हुआ। इस विभाजन में अँगरेज बड़े भाग्यशाली रहे। उत्तर में उन्हें मिस्र मिला तथा दक्षिण में दक्षिणी अफ्रीका। यह दोनों देश बड़े उपजाऊ थे। इनके अतिरिक्त अँगरेजों को कुछ और अच्छे प्रदेश भी मिले। फ्रांस को भी अफ्रीका का बहुत सा भाग मिला।

पहले भारत और प्रशान्त महासागर के अन्य देशों को जाने के लिए लम्बी दूरी पार करनी पड़ती थी। क्योंकि उस समय तक स्वेज नहर से जाने का मार्ग नहीं था। पर स्वेज नहर के खुल जाने से यूरोप और एशिया के बीच की दूरी समुद्री मार्ग से बहुत कम हो गई। स्वेज नहर पर अपना नियंत्रण रखने के लिए इंगलैंड ने मिस्र तथा नील नदी की घाटी के समस्त भू-भाग पर अपना अधिकार जमाया। भारत आने के लिए स्वेज नहर के मार्ग से बहुत कम दूरी पार करनी पड़ती थी।

अंगरेज़ों ने मिस्र पर अपना अधिकार तो जमा लिया परन्तु वहाँ पूर्णतया शान्ति नहीं स्थापित हुई। लार्ड क्रोमर ने बहुत काल तक शासन किया और अनेक

सुधार किये। उसने वेगार वन्द कर दी और निर्दयी कानून रद्द कर दिये। परन्तु कुछ समय के वाद एक धार्मिक नेता ने जो अपने को महदी कहता था विद्रोह का झंडा खड़ा किया। हज़ारों कट्टर अरव और मुलसमान नांग्रो उसके झंडे के नीचे आ गये। ऐसा प्रतीत होने लगा कि शीघ्र ही महदी कैरो और अलेक्ज़ेड्रिया को जीत लेगा। सूडान में महदी के अनुयायी वहुत थे क्योंकि मिस्र के शासकों का व्यवहार उनके प्रति अच्छा न था। इंगलैंड की सरकार ने गार्डन नामक जनरल को महदी को दवाने के लिये सूडान भेजा। परन्तु थोड़े दिन के वाद वह सहायता न मिलने के कारण मारा गया। १२ वर्ष तक दरवेशों का सूडान पर अधिकार रहा। महदी की मृत्यु के वाद खलीफ़ा ने उसका स्थान लिया। उसकी अध्यक्षता में दरवेश आन्दोलन शिथिल पड़ गया।

मिस्र अंगरेज़ों के अधीन रहा। किचनर ने एक सेना वनाई, जिसने फिर सूडान को जीत लिया। किचनर ने खलीफ़ा को पराजित किया और सूडान पर आधिपत्य स्थापित किया। इंगलैंड को मिस्र से वहुत लाभ हुआ। स्वेज़ नहर पर अधिकार होने के कारण रुपया भी वहुत मिला। प्रथम विश्व युद्ध के होने पर टर्की और मिस्र का सम्वन्ध टूट गया। मिस्र इंगलैंड के अधीन रहा। सन् १९२२ में लार्डएलेनवी ने मिस्र को उसकी स्वतंत्रता फिर से दे दी। नहर की रक्षा के लिए एक सेना रहती थी। परन्तु जंव राष्ट्रीय विचार जनता में फैले यह सेना भी हटा ली गई। मिस्र में हाल में वड़े परिवर्तन हुए हैं। भिन्न भिन्न दलों में संघर्ष हो रहा है। अभी स्थायी सरकार नहीं वन पाई है।

पहले दक्षिणी अफ्रीका पर बुअर लोगों का अधिकार था। अँगरेजों ने वुअर लोगों से लड़ाई ठान दी। वे बुरी तरह हरा दिये गये और केप कोलोनी (Cape colony) व्रिटिश-साम्राज्य में मिला लिया गया। अफ्रीका के इस भाग में सोना तथा जवाहरात वहुतायत में मिलता है।

अफ्रीका के विभाजन से ट्रांसवाल और आरैंज फ्री स्टेट चारों ओर से घिर गये। दक्षिण में केप कालोनी थी जहाँ सेसिल रोड्स प्रधान मंत्री था। पूर्व में नेटाल था जो अंगरेज़ो को दूसरा उपनिवेश था। उत्तर पश्चिम में अन्य अंगरेज़ी भू भाग थे। ट्रांसवाल में सोने की खानें थीं। इन पर अधिकार करने के लिए अंगरेज़ भी लालायित थे। बूअर जाति के लोग विदेशियों से घृणा करते थे और विदेशी पूंजीपतियों के आक्रमण को वड़ी शंका की दृष्टि से देखते थे। ट्रांसवाल का प्रेसीडेंट एक बूअर था जिसका

अफ्रीका और एशिया में उपनिवेशों की स्थापना

नाम था पाल क्रूगर। वह एक वृद्ध पुरुष था परन्तु वड़ा वीर, महत्वाकांक्षी तथा देशभक्त था। वह नहीं चाहता था कि अँगरेज या कोई भी विदेशी उसके देश में रहे। सेंसिल रोड सम्पूर्ण दक्षिणी अफ्रीका को एक अंगरज़ी अधीन राज्य वनाना चाहता था जिसमें वूअर और अंगरेज़ों के समान अधिकार हों। इसको क्रूगर ने फँसाने के लिए एक जाल समझा। क्रूगर चाहता था कि सव वूअर मिल कर अंगरेज़ों को समुद्र में ढकेल दें और अपने देश की उनसे रक्षा करें। उसने युद्ध की तैयारी की और ३० हजार सिपाही इकट्ठ कर लिये। सन् १८९९ में युद्ध आरम्भ हो गया। क्रूगर ने नेटाल पर चढ़ाई कर दी। वूअरों ने अंगरेज़ों को कई वार हराया। भयभीत हो कर सारे साम्राज्य से सेनायें भेजी गईं और लगभग २॥ लाख सैनिक क्रूगर के तीस हज़ार सैनिकों से लड़ने के लिये रणक्षेत्र में उपस्थित हुए। लार्ड किचनर, लार्ड रोवर्टस, आदि वड़े वड़े अनुभवी सेनाध्यक्ष भी वहाँ पहुँचे। वूअरों ने गुरीला युद्ध किया परन्तु अन्त में उन्हें पीछे हटना पड़ा। अंगरेज़ो ने उन्हें स्वतंत्रता देने का वचन दिया। चार वर्ष वाद ट्राँसवाल को स्वराज्य मिला और कुछ समय के वाद सम्पूर्ण दक्षिण अफ्रीका का एक संघ वन गया और उसे स्वराज्य का अधिकार प्राप्त हुआ। वोथा इस राज्य का प्रधान मंत्री हुआ। वूअरों ने एक वार फिर सन् १९१४ में विद्रोह किया, परन्तु वह दवा दिया गया। प्रथम युद्ध के वाद वूअर सेनापति स्मट्स इंगलैंड की केवीनेट का सदस्य हो गया और लीग आफ़ नेशन्स के निर्माण में उसने वहुत धन दिया।

फ्रांस ने अपना साम्राज्य मुख्यतः उत्तरी पश्चिमी तथा मध्य अफ्रीका में स्थापित किया। मोरोक्को, टयूनिस तथा सहारा का वहुत वड़ा भाग फ्रांस के अधिकार में आ गये। जर्मनी ने इस क्षेत्र में देरी से पदार्पण किया। इससे पहले ही अफ्रीका के अच्छे भागों पर स्वामित्व स्थापित हो चुका था। फिर भी पश्चिमी, दक्षिण-पश्चिम तथा पूर्वी अफ्रीका में कुछ भाग जर्मनी के हाथ लग गये। कैसर विलियम ने मोरोक्को लेने की चेष्टा भी की परन्तु निष्फल हुआ। प्रथम विश्वयुद्ध के वाद जर्मनी के सारे उपनिवेश छीन लिये गये और भिन्न राज्यों के अधीन कर दिये गये। जर्मनी के लिए पृथ्वी मंडल पर अव कोई जगह न रही। यूरोप के मान-चित्र को देखने से पता लगता है कि वेल्जियम एक छोटा सा देश है किन्तु आश्चर्य की वात है कि वहाँ के राजा ने अनेक भागों पर अधिकार स्थापित कर लिया। और १८८० में वहाँ के राजा लियोपोल्ड ने 'कांगो फ्री स्टेट' (Congo Free

State) की स्थापना कर ली। इटली भी पीछे न रहा और उसके हाथ भी कुछ भाग लग ही गये। इस प्रकार के अध्ययन के पश्चात् हम देखते हैं कि उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक अफ्रीका विभाजन सम्पन्न हो चुका था।

एशिया में रूस ने इस परम्परा को अपनाया और वह मध्य-एशिया तथा साइबीरिया को हड़प बैठा। उसने अपना साम्राज्य प्रशान्त महासागर तक बढ़ा लिया था। दक्षिण में उसकी सीमा अफगानिस्तान तथा फारस तक पहुँच गई थी। किन्तु रूस की यह प्रगति अँगरेजों के लिये हानिकारक थी। क्योंकि रूस कभी भी भारतवर्ष पर अपना अधिकार जमा सकता था। कुछ वर्षों के वाद दोनों देशों में एक संधि हुई और यह तय हुआ कि वे आपस में एक दूसरे के प्रदेशों पर आक्रमण न करेंगे।

इस समय चीन की दशा अच्छी न थी। उसका साम्राज्य शक्तिशाली न था। चीन के साथ अनेक युद्ध हुए जिनमें उसे करारी हार खानी पड़ी। परिणाम यह हुआ कि चीन को भी यूरोपीय देश के भागों को स्वीकार करना पड़ा। चीन को छोटे-छोटे भागों में विभाजित कर दिया गया और विजयी देशों ने इन भागों को अपने अधिकार में कर लिया। फ्रान्स ने इन्डोचाइना अर्थात् हिन्द-चीन पर प्रभुत्व जमा लिया। वर्मा में अँगरेज जम गये। इन शक्तियों ने प्रशान्त महासागर में छोटे छोटे द्वीपों को आपस में बाँट लिया। इनमें प्रमुख हैं—जावा, सुमात्रा, सेलीबेस आदि आदि। प्रशान्त महासागर में एक अ-यूरोपीय शक्ति का आविर्भाव हुआ। इस शक्ति का नाम था अमेरिका। उसने स्पेन के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। फलस्वरूप अमेरिका को भी फिलिपाइन तथा हवाई द्वीप मिल गये। जापान भी साम्राज्यवाद की लड़ाई में अछूता न रहा।

इस प्रकार साम्राज्यवाद की परम्परा चल निकली थी। इसके कई परिणाम हुए। पहला परिणाम तो यह हुआ कि आपस में झगड़े पैदा हुए और कूटनीतिसम्बन्धी उलझनें पैदा हुईं। इस भेद-भाव तथा झगड़ों के परिणाम ने भयंकर रूप धारण किया और मानव समाज का सर्वनाश होते होते बचा। वह था विश्व का प्रथम महायुद्ध।

दूसरा परिणाम यह हुआ कि इन पराधीन लोगों को अपनी अवस्था का ज्ञान हुआ। वे समझने लगे कि हमारी हीन अवस्था का कारण केवल बलहीनता है। वे समझने लगे कि इन साम्राज्यवादी शक्तियों के सामने वे असहाय थे। इसलिए उनके मन में इन लोगों के प्रति विद्रोह करने की भावना जागृत हुई। वे चाहने लगे

कि पराधीनता की कड़ियाँ हमेशा के लिए काट दी जायें। इस महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे अपने प्राणों की आहुति देने तक को तैयार थे। इन्हीं भावनाओं से उत्तेजित होकर उन्होंने इन देशों के रहस्य को जानने का प्रयत्न किया। जिसके कारण वे इतने शक्तिशाली तथा धन-धान्य से पूर्ण बन् बैठे थे। राष्ट्रीयता की भावना आंधी की तरह बढ़ रही थी। आन्दोलनों की तैयारियां की जा रही थीं। इन देशों के नेतागण विद्रोह की आग भड़का रहे थे। उनका एक उद्देश्य था—केवल एक उद्देश्य, वह था साम्राज्यवाद की जड़ काटकर फेंक देना। भारतवर्ष तथा हिन्द-चीन आदि देशों में राष्ट्रीय आन्दोलनों ने उग्र रूप धारण कर लिया था। कालान्तर में राष्ट्रीय भावना ने इतना प्रबल रूप धारण किया कि साम्राज्यवादियों को अंत में झुकना पड़ा।

इन आन्दोलनों का परिणाम यह हुआ कि बर्मा तथा भारत स्वतंत्र हो गये। हिन्द चीन वर्षों से फ्रांस के प्रति विद्रोह कर रहा है। राष्ट्रीयता की आग कोने-कोने तक पहुंच गई है। स्वतंत्रता के लिए लोग पागल हो उठे हैं। चीन में साम्यवाद ने घर कर लिया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि चीन आज एक बहुत बड़ी शक्ति है। साम्राज्यवादियों की आशाएँ मिट्टी में मिलती जा रही हैं। उनके सुन्दर स्वप्न निरर्थक होते जा रहे हैं। यह आशा की जाती है कि एशिया तथा अफ्रीका किसी दिन पूर्ण रूप से स्वतंत्र हो जायेंगे। हम उस समय की कामना करते हैं जब साम्राज्यवाद का अन्त होगा और प्रत्येक देश स्वाधीन हो जायगा।

अभ्यास

१. साम्राज्यवाद का प्रारंभ कैसे हुआ?
२. सबसे पहले किस देश ने इस 'वाद' का प्रारंभ किया?
३. उपनिवेश स्थापित करने का प्रारंभ उन्नीसवीं शताब्दी में क्यों हुआ?
४. अफ्रीका को 'अंधकारमय महाद्वीप' क्यों कहते थे?
५. अफ्रीका की खोज सबसे पहले किसने की?
६. अफ्रीका का विभाजन कैसे हुआ?
७. एशिया साम्राज्यवाद की कैसी प्रगति हुई।
८. यूरोप और अमेरिका ने किन किन क्षेत्रों पर अधिकार जमाया?
९. साम्राज्यवाद के प्रतिकूल कौन-कौन भावनाएं कार्यान्वित हैं?
१०. उदाहरण देकर समझाइए कि साम्राज्यवाद का पतन हो रहा है।

Ratnakar

अध्याय १२

चीन तथा जापान में जागृति

चीन तथा जापान बहुत प्राचीन देश हैं। इनके इतिहास को पढ़ने से पता लगता है कि ये दोनों देश एक दूसरे से बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक संसार के अन्य देशों से इनका किसी प्रकार का सम्बन्ध न था। दूसरे देशों में होनेवाली घटनाओं का इन पर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ता था। धीरे धीरे सभ्यता का विकास हुआ। सभ्यता के युग में कोई देश सर्वथा अलग नहीं रह सकता था। पश्चिम के शक्तिशाली राष्ट्रों ने चीन तथा जापान के प्रवेश-मार्ग खोल दिये। इस कार्य में विदेशियों को बल से काम लेना पड़ा। इन देशों के द्वार खुल जाने से विदेशियों का वहाँ आना जाना प्रारंभ हो गया। प्रवेश द्वार खोलने में अँगरेजों ने महत्त्वपूर्ण भाग लिया। पश्चिमी देशों में सबसे पहले साम्राज्यवादी अमेरिका इन देशों में घुसा। इन्होंने इसका विरोध किया। परन्तु परिणाम कुछ न निकला।

हम पहले कह आये हैं कि चीन तथा जापान की परिस्थितियाँ तथा रीति-रिवाज एक दूसरे से बहुत कुछ मिलते जुलते थे। पर इसका आशय यह नहीं कि दोनों देशों ने विदेशियों के विरुद्ध प्रतिक्रिया भी समान रूप से की। विदेशियों के साथ इन लोगों ने भिन्न भिन्न ढंग से व्यवहार किया। इस भिन्नता का परिणाम यह निकला कि आगे चलकर उनकी परिस्थिति में महान् अन्तर आ गया।

चीन और जापान के द्वार खुलने से पहले विदेशियों का चीन से बहुत कम व्यापार होता था, क्योंकि विदेशी इन देशों में घुस नहीं सकते थे। केवल कुछ इने-गिने बन्दरगाहों तक ही जाने की आज्ञा थी। विदेशी व्यापारी चीन में बाहर से अफीम लाते थे। इसका परिणाम यह निकला कि चीनी लोग बुरी तरह से अफीम का धूम्रपान करने लगे। किन्तु परिस्थितियाँ सदैव एक सी नहीं रहतीं। चीन सरकार के एक उच्च अधिकारी ने यह अनुभव किया कि अफीम एक हानिकारक

पदार्थ है। वह चाहता था कि किसी तरह इस व्यापार का अन्त हो। कैन्टन में उसने अँगरेज व्यापारियों को आज्ञा दी कि वे अफीम का व्यापार बन्द कर दें और सारी अफीम लाकर उसके सामने रख दें। अंगरेज व्यापारियों ने इस आज्ञा का उल्लंघन किया। परिणाम यह हुआ कि विदेशी व्यापारियों को सब प्रकार का खाद्य पदार्थ देना बन्द कर दिया गया। इससे दोनों दलों में ईर्षा तथा कलह की भावना उग्र रूप धारण करती गई। इसका परिणाम अच्छा न हुआ। युद्ध प्रारंभ हुआ। इस युद्ध को 'अफीम का युद्ध' (Opium war) कहते हैं। काफी रक्तपात हुआ। अन्त में अँगरेजों ने चीन को हरा दिया और चीन को अँगरेजों की माँगों को स्वीकार करना पड़ा। कुछ और बन्दरगाह अँगरेजों के लिये खोलने पड़े। चीन के साथ अन्य देशों के स्थापित व्यापारिक सम्बन्ध पर भी इन लोगों ने अधिकार जमा लिया। इस प्रकार चीन विदेशियों को नये नये विशेष अधिकार देने को बाध्य हुआ।

जापान भी इस लूट में भाग लेना चाहता था। उसने भी कोरिया के ऊपर अपना स्वामित्व स्थापित कर लिया था। वैसे कोरिया चीन के अधिकार में था। चीन ने जापान की कोरिया में बढ़ती हुई शक्ति का प्रबल विरोध किया। परिणाम यह हुआ कि चीन तथा जापान आपस में लड़ बैठे। जापान विजयी हुआ। इन हारों का चीनी लोगों के मस्तिष्क पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। वे समझने लगे कि हमारा देश बल-हीन है। इस कमजोरी का परिणाम अच्छा न निकला। विदेशियों ने चीन से दिन-प्रतिदिन नई नई मांगे कीं। चीन में इतनी शक्ति नहीं थी कि इन मांगों का विरोध कर सके। हारकर सभी मांगें स्वीकार करनी पड़ती थीं।

चीन में जागृति पैदा हुई। चीनी लोग अपने देश की शोचनीय अवस्था को अच्छी तरह समझने लगे। इस कमजोरी को दूर करने के लिए उन्होंने सरकार तथा फौज में बहुत से सुधार किये। इन सुधारों के कारण उनका देश शक्तिशाली बन जायेगा, ऐसी उनकी धारणा थी। किन्तु सफलता के मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ थीं। चीनी लोग पुराने रीति-रिवाज मानते थे और वे इन रीति-रिवाजों में किसी प्रकार का परिवर्तन करना भी नहीं चाहते थे। राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत कुछ नवयुवकों ने विदेशियों को भगाने का एक आन्दोलन प्रारंभ किया। किन्तु परिणाम अच्छा न हुआ। विदेशी शक्तियाँ एक हो गईं और चीन को बुरी तरह से हरा दिया। इन वीरों के सब प्रयत्न असफल होते गये और विदेशियों का

अधिकार दिन दूना रात चौगुना वढ़ता गया। वीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में फिर एक राष्ट्रीय आन्दोलन उठा, पर वह कुचल दिया गया।

'मन्चू' राजाओं की भ्रष्ट तथा वल-हीन सरकार से लोग घृणा करने लगे। पश्चिमी देशों में शिक्षित नवयुवक संगठित हुए। सनयाटसेन इनमें से प्रमुख व्यक्ति था। विद्रोह की भावना ने प्रवल रूप धारण कर लिया। सन् १९११ में एक राष्ट्रीय आन्दोलन उठा, जिसने मन्चू सरकार की जड़ काटकर फेंक दी। चीन साम्राज्य का अन्त हुआ और गणतंत्र राज की स्थापना हुई।

किन्तु चीन के दिन अच्छे न थे। नई सरकार की स्थापना के पश्चात् भी देश में शान्ति स्थापित न हो सकी। नई सरकार को चारों ओर से धमकाया जाने लगा। स्वयं देशवासियों में एकता न थी। विदेशी शक्ति चीन के पीछे पड़ी थीं और जापान भी चीन पर आँख लगाये वैठा था। जापान वलपूर्वक चीन के कुछ भागों को अपने राज्य में मिला लेने को उतावला हो रहा था। देश में घोर अव्यवस्था थी। चोर-लुटेरों के झुंड के झुंड देश में घूमते थे। यात्रियों का जीवन संकटमय हो गया था।

सन् १९१४ में प्रथम विश्वयुद्ध प्रारंभ हुआ। चीन ने इस युद्ध में मित्रराष्ट्रों का साथ दिया। इस प्रकार की सहायता से चीन को कोई लाभ न हुआ। जापान चीन से नई-नई माँगें करता गया। अन्त में चीन को जापान की कुछ माँगों को स्वीकार करना ही पड़ा।

डाक्टर सनयाट सेन ने चीनी राष्ट्रीय दल का संगठन किया। इसको कोमिन टाँग कहते हैं। डाक्टर सन ही जन-तंत्र का निर्माता था। वह एक सुशिक्षित व्यक्ति था और विविध विपयों का ज्ञान रखता था। चिकित्सक होने के कारण उसे सायंस से प्रेम था और उसकी उन्नति में उसकी वड़ी दिलचस्पी थी। वह रूढ़िवादी नहीं था। पुरानी विचार धारा को न वदलने के पक्ष में था और नये विचारों को व्यावहारिक रूप देने में उसे किसी प्रकार का संकोच नहीं था। उसने सारे संसार में कई वार भ्रमण किया था। वास्तव में उसके समान पढ़ने वाला और यात्रा करने वाला दूसरा व्यक्ति चीन में नहीं था। विचार और कार्यक्रम दोनो में परिवर्तन करने की उसकी प्रवल इच्छा थी। मंचू राज्य दुर्वल था। उसमें भ्रष्टाचार अपनी पराकाष्ठा को पहुँच गया था। विदेशियों के साथ युद्धों में चीन की वरावर हार होती थी। चोन को विदेशों के लोग 'सुदूर पूर्व का अस्वस्थ मनुष्य' कह कर पुकारते थे। ऐसी स्थिति मे सनयाट सेन ने राज्य की शक्ति को अपने हाथ में लिया था।

उसके तीन सिद्धान्त थे—(१) प्रजातंत्र राज्य, (२) राष्ट्रीयता, (३) जन साधारण की जीविका। राष्ट्रीयता का विकास तो काफी हो रहा था। परन्तु प्रजातंत्र राज्य तभी हो सकता था जब जनता का सरकार पर पूरा नियंत्रण होता। जीविका का अर्थ था भूमि की समानता या समान विभाजन और पूंजीपतियों का नियंत्रण। सनयाट सेन का कहना था कि विना नियंत्रण के पूंजीवाद देश के लिए अनिष्टकारी है।

राष्ट्रीय दल ने पुर्ननिमाण का कार्य बड़े उत्साह के साथ आरम्भ किया। शासन को मजबूत बनाने की चेष्टा की गई। सरकारी नौकरियों से सम्मलित परीक्षाओं की फिर से व्यवस्था की गई। उद्योग-धंधों की उन्नति के लिये अनेक प्रयत्न किये गये और नये कारखानों को प्रोत्साहन दिया गया। शिक्षा के दोषों को दूर करने के लिए एक योजना बनाई गई जिसमें प्रारंभिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा का सुधार ही लक्ष्य रक्खा गया। देहातों की उन्नति की ओर भी सरकार ने ध्यान दिया और इसके लिये कई केन्द्र स्थापित किये जहां काम करने वालों को शिक्षा दी जाती थी। सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिये संस्थायें बनाई गईं। सड़क, रेल, तार, टेलीफ़ोन को भी उन्नति हुई और जनता को प्रत्येक प्रकार की सुविधा देने की व्यवस्था हुई। सेना में भी सुधार किया गया। हवाई जहाज़ खरीदे गये और कुशल चलाने वालों के सुपुर्द किये गये। चीनी सैनिकों की दशा पहले की अपेक्षा बहुत सुधर गई। उनकी वर्दी, उनकी चेष्टा, उनकी शिक्षा पर पर्याप्त ध्यान दिया गया। परन्तु यह सब होते हुए भी किसानों और श्रमजीवियों के श्रम निवारण करने का काफी उपाय नहीं हुआ।

कोमिंनटांग दल में सब लोग एक विचार के नहीं थे। उसमे साम्यवादी भी थे जिनकी विचारधारा बहुमत से भिन्न थी। वे किसानों और मजदूरों के पक्ष में थे और उनके हित के लिये बहुत से काम करना चाहते थे। धीरे धीरे विरोध बढ़ता गया। साम्यवादियों के विरुद्ध कई कानून बनाये गये जिनके द्वारा उन पर रोक लगाई गई और श्रमजीवियों को उनके चंगुल से निकालने का प्रयत्न किया गया। इस दशा को देख कर श्रीमती सनयाट-सेन ने एक विज्ञप्ति निकाली जिसमें उन्होंने कहा कि दल ने उनके स्वर्गीय पति के सिद्धान्तों का परित्याग कर दिया है। डाक्टर सनयाट सेन की मृत्यु के बाद चाँगकाई शेक ने सम्पूर्ण देश के लिये पूरी सरकार बनाई थी परन्तु विरोध चलता ही रहा। चाँग ने विदेशी राज्यों से मेल किया जिससे उनकी लोकप्रियता कम हो गई।

कुछ लोग ऐसे थे जिन्हें भविष्य का आभास हो रहा था। किसान और मजदूर बुरी दशा में थे। सैनिकों और पूंजीपतियों का प्रभाव अधिक था। साम्यवादियों से जनता प्रसन्न थी क्योंकि वे बड़े उत्साह के साथ सार्वजनिक हित करने का उपाय करते थे। कोमिन टाँग को बचाने का उपाय यही था कि साम्यवादियों की अध्यक्षता में शासन-सुधार का कार्य किया जाता। ऐसा प्रतीत होता था कि केवल वामपक्ष ही देश को बचा सकता है।

चीन की ऐसी शोचनीय दशा थी। साम्यवादी और चाँग के समर्थकों में गृह-युद्ध की ज्वाला धधक उठी। चांग का विदेशों में मान था परन्तु चीन में उसका प्रभाव कम हो रहा था। तूफान की आवाज़ कानों को सुनाई दे रही थी।

चीन की दुर्बल अवस्था से जापान ने अनुचित लाभ उठाया। उसने मंचूरिया पर आक्रमण किया और वहाँ अपनी विजय का झंडा गाड़ दिया। सन् १९३७ में चीन और जापान आपस में लड़ बैठे। यह युद्ध द्वितीय महायुद्ध के प्रारंभ तक चलता रहा। द्वितीय महायुद्ध में जापान ने इटली तथा जर्मनी का साथ दिया। चीन ने मित्रराष्ट्रों का पक्ष लिया। जापान के आक्रमणों ने चीन की जनता में सुप्तावस्था में व्याप्त राष्ट्रीय भावना को जागृत किया। राष्ट्रीयता की लहर देश भर में फैल गई और कुछ समय तक दोनों दलों ने मिलकर जापान का प्रबल विरोध किया।

जापान

जापानियों का विश्वास है कि वे सूर्य देवता की संतान हैं। विदेशियों के आने से पहले उनका समाज जमींदारों तथा सैनिकों का समाज था। ये लोग सामुराई (Samurai) कहलाते थे। देश की अधिकतर भूमि पर जमींदारों का अधिकार था। सामान्य व्यक्ति धनहीन थे। किन्तु जापानियों की विशेषता है कि वे अपने को एक परिवार के सदस्य समझते थे। ये लोग बुद्ध धर्म को मानते थे।

जापान का राजा निरुद्योगी था। फलतः उसे देश के शासन से कोई रुचि नहीं थी। एक जमींदार जिसका नाम शोगन (Shogun) था, देश के शासन की देख-भाल करता था।

सन् १८५३ में एक अमेरिकन व्यक्ति जिसका नाम कोमोडोर पैरी (Commodore Perry) था, जापान में आया। वह अमेरिका के सभापति से जापान के राजा के नाम एक पत्र लाया था। किन्तु जापानी अधिकारियों ने उसे देश में

जापान का सम्राट्

सामूराई

चियांग-काई-शेक

सन याट सेन
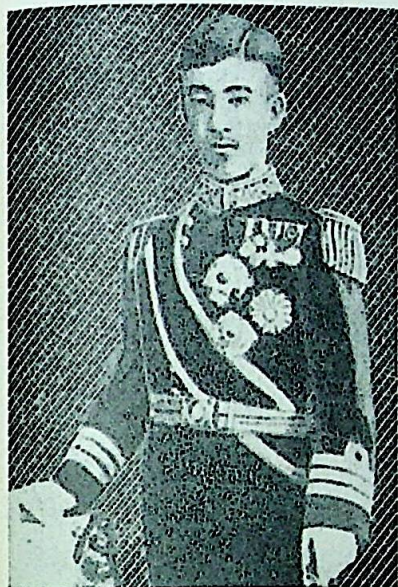
प्रवेश करने की आज्ञा न दी। पैरी को क्रोध आया। वह उस पत्र को जापानी अधिकारियों को देकर चला गया। जाते समय वह कह गया था कि अब की वार वह इसका वदला लेने आयेगा। असल वात यह थी कि जापानी विदेशियों से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं जोड़ना चाहते थ। दूसरे वर्ष पैरी सुसज्जित सेना के साथ आया। जापानी अधिकारियों को पैरी के प्रवेश की आज्ञा देनी पड़ी। इसके अतिरिक्त कुछ वन्दरगाहों को भी विदेशी व्यापारियों के लिए खोल देना पड़ा। इस प्रकार चीन की तरह जापान का प्रवेश-मार्ग भी विदेशियों के लिए खुल गया। अमेरिका की तरह अन्य विदेशियों ने भी अपने अपने प्रतिनिधि भेजे। धीरे-धीरे विदेशियों से व्यापार वढ़ता गया। चीन की तरह जापान भी विदेशियों को कुछ मुख्य अधिकार देने के लिए वाध्य हुआ।

प्रारंभ में जापानी विदेशी व्यापारियों से घृणा करते थे। वे उन्हें अपने देश से मार भगाना चाहते थे। किन्तु जापानियों ने इस कार्य में विशेष वुद्धि का परिचय दिया। चीनवासी अपने पुराने रीति-रिवाजों को त्यागने को तैयार न हुए। परिणाम यह हुआ कि चीन विदेशियों से लोहा न ले सका। किन्तु जापानियों ने शीघ्र अनुभव किया कि विदेशियों की जड़ काटने में उनके निजी ढंग ही काम दे सकते थे।

इसका फल यह हुआ कि जापानियों ने प्रत्येक क्षेत्र में यूरोपियन ढंग सीखने प्रारंभ कर दिये। इसके लिए राजनैतिक एकता आवश्यक थी। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक राजनैतिक आन्दोलन प्रारंभ हुआ जिसे मैगी रेस्टोरेशन अर्थात् मैगी का पुनःस्थापन (Meigi Restoration) कहा जाता है। राजा को प्राचीन अधिकार फिर से दे दिये गये। शोगन ने अपने सव अधिकार त्याग दिये। देश में एक संगठित शक्ति की स्थापना हुई। जापान का राजनैतिक ढांचा देखते-देखते वदल गया। वड़े-वड़े जमींदारों ने अपनी भूमि का किसानों में विभाजन कर दिया। इस प्रकार जापानी समाज से इस बुराई का नाश हुआ।

सेना में भी सुधार किये गये। पुराने ढंगों को त्याग दिया गया। जापानियों ने पश्चिमी देशों के ढंगों का अध्ययन किया और अपनी सेना के लिए वे पश्चिमी ढंग के हथियार वनाने लगे। नये नये उद्योग-धंधों का श्रीगणेश हुआ। संक्षेप में कहा जा सकता है कि जापानी जनता ने अपने देश को चीन की तरह आधुनिक वनाने के लिए वड़े प्रयत्न किये। चीनवाले अपने पुराने रीति-रिवाजों को त्यागने को

तैयार न थे। इसीलिए वे इतनी उन्नति नहीं कर पाये। किन्तु जापानियों का लक्ष्य था भविष्य में उनका देश एक शक्तिशाली देश हो। इसके लिए उन्होंने अनेक प्रकार के साधन जुटाये।

शासन में भी आधुनिक ढंग के सुधार हुए। किन्तु इतना याद रखना चाहिए कि उन्नति के साधनों के साथ-साथ जापान ने साम्राज्यवाद का महत्व भी समझा। और देशों की तरह जापान ने भी अपने साम्राज्य का विस्तार करने का दृढ़ निश्चय किया। इस समय चीन ही एक ऐसा देश था जिस पर सुविधा से आक्रमण किया जा सकता था। इस प्रकार जापान भी चीन की लूट में यूरोप के देशों का साथी वन गया।

जापान की निगाहें कोरिया तथा मंचूरिया पर लगी थीं। अवसर हाथ आते ही उसने चीन पर आक्रमण कर दिया। इस युद्ध में चीन की हार हुई। जापान ने कोरिया को अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया।

इस क्षेत्र में जापान के रास्ते में एक कांटा था। जापान की वढ़ती हुई शक्ति रूस की इच्छा के प्रतिकूल थी। दोनों में विरोध की भावना प्रवल हो उठी और एक दिन रूस और जापान आपस में लड़ ही वैठे। इस युद्ध में रूस को करारी हार मिली। जापान संसार में एक शक्तिशाली राष्ट्र समझा जाने लगा। यह इस विजय का फल था। इसमें कोई संदेह नहीं कि जापान की विजय का रहस्य पश्चिमी ढंगों के अपनाने में था।

प्रथम महायुद्ध में जापान ने मित्रराष्ट्रों का साथ दिया। वड़ी वड़ी शक्तियां जर्मनी को हराने का प्रयत्न कर रही थीं। जापान, चीन से नई नई मांग कर रहा था। चीन असहाय था। अपनी इस शोचनीय अवस्था में उसे जापान की मांगों को स्वीकार करना पड़ा।

किन्तु जापान की वढ़ती हुई शक्ति अमेरिका के लिए आँख में काँटे के समान थी। सैनफ्रांसिसको कान्फ्रेंस के द्वारा जापान की वढ़ती हुई शक्ति को रोक दिया गया। उसकी आशाओं पर पानी फिर गया। चीन के जीते हुए भाग उससे छीन लिये गये।

पर जापान हतोत्साहित न हुआ। अवसर पाते ही उसने फिर चीन के भागों पर आक्रमण किया। उसने मंचूरिया को जीत लिया और वहाँ अपना शासन जमा दिया। मंचूरिया पूर्ण रूप से जापान के अधिकार में आ गया। कुछ समय पश्चात्

जापान ने फिर आक्रमण किया। इस प्रकार चीन और जापान में युद्ध प्रारंभ हो गया जो द्वितीय महायुद्ध का एक भाग था।

जापान के आक्रमणों ने चीनी लोगों के मस्तिष्क में विरोध की प्रबल भावना को जन्म दिया। वे संगठित होकर जापान से भिड़ गये। परिणाम यह निकला कि जापान को चीन को जीतने की सारी आशाओं पर पानी फिर गया।

अभ्यास

१. यूरोप के लोगों ने चीन में किस प्रकार प्रवेश किया?
२. चीनी लोग विदेशियों के विरुद्ध किस प्रकार संगठित हुए?
३. सनयाट सेन कौन था? उसके तीन सिद्धान्त क्या थे?
४. उसने चीन के लिए क्या किया?
५. चीन की नई सरकार को क्या-क्या भय थे?
६. चांगकाई शेक के विषय में आप क्या जानते हैं?
७. जापान किस प्रकार एक शक्तिशाली देश बना?
८. शत्रु को हराने के लिए जापानियों ने क्या कार्य किये?
९. जापान का रूस से क्या सम्बन्ध था?
१०. अमेरिका ने जापान की बढ़ती हुई शक्ति को किस प्रकार रोका?

अध्याय १३

रूस की राज्य-क्रान्ति

रूस संसार में एक शक्तिशाली देश माना जाता है। पहले यह एक असभ्य देश था। यहाँ की जनता सभ्यता का नाम तक न जानती थी। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में रूस में एक क्रान्ति हुई जिससे वहाँ का पूरा ढाँचा ही बदल गया। इस क्रांति से रूस में ही परिवर्तन नहीं हुआ, परन्तु सारी मानव सभ्यता पर व्यापक प्रभाव पड़ा। रूस की राज्य-क्रान्ति के इस अंश की तुलना फ्रांस की राज्य-क्रान्ति से की जा सकती है।

फ्रांस की राज्य-क्रान्ति ने वोलटेर तथा रूसो आदि दार्शनिकों के विचारों का प्रचार किया। रूस की राज्य-क्रान्ति ने कार्ल मार्क्स के विचारों को फैलाया। कार्ल मार्क्स का जन्म जर्मनी में एक यहूदी परिवार में हुआ था। वह एक योग्य व्यक्ति था, पर उसे सरकार ने देश निकाले की आज्ञा दी थी। इसका कारण यह था कि वह क्रान्तिकारी विचारोंवाला व्यक्ति था। वह इंगलैंड चला गया। वहाँ पर उसने श्रमिकों की क्षोभनीय दशा का गूढ़ अध्ययन किया। आज भी ब्रिटिश म्यूजियम में उसके कार्य करने के स्थान पर एक कुर्सी रखी गई है। इससे यह जाना जा सकता है कि वह इंगलैंड में किस स्थान पर कार्य किया करता था। कार्ल मार्क्स के विचार बड़े क्रान्तिकारी थे। उसका विचार था कि नये नये कारखानों की उन्नति के साथ-साथ श्रमिकों की संख्या भी बढ़ेगी और धीरे धीरे ये लोग समाज में एक महत्त्वपूर्ण वर्ग स्थापित करेंगे। आज श्रमिकों को अनादर की दृष्टि से देखा जाता है। लेकिन यह निश्चय है कि भविष्य में उनका समाज में एक महत्त्वपूर्ण स्थान होगा और शासन की बागडोर उनके हाथ में होगी। इस समय पूंजीपति इनको बहुत थोड़ा वेतन देकर काम कराते हैं, किन्तु भविष्य में वे इस वर्ग को नष्ट कर देंगे। पूंजीपतियों का सारा धन छीन लिया जायगा। कारखाने, भूमि और हर प्रकार के धन पर समाज का अधिकार होगा। किसी मनुष्य को अधिक न

कार्ल मार्क्स

लैनिन

स्टालिन

ट्रौस्की
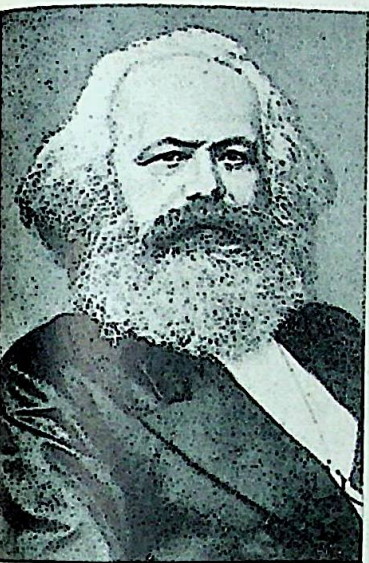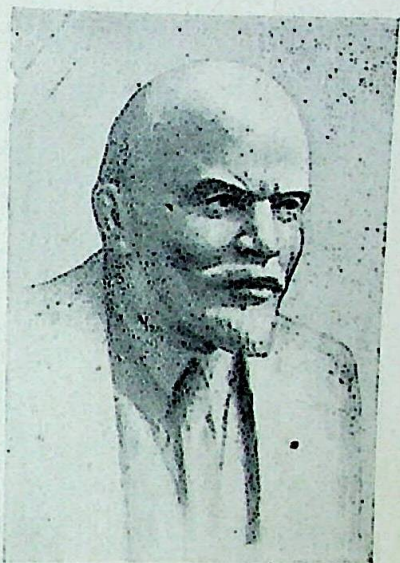
रखने की आज्ञा न होगी। इस विचारधारा पर श्रमिकों की आशाएँ निर्भर थीं। इस विचारधारा का परिणाम यह निकला कि रूस में किसान तथा श्रमिकों के हृदय में विद्रोह की भावना का जन्म हुआ। इस विचारधारा को साम्यवाद कहा जाता है।

रूस यूरोप में एक पिछड़ा हुआ देश था। यूरोप के प्रायः सभी देशों में नये नये उद्योगों का जन्म हो रहा था और नये नये कारखानों की स्थापना की जा रही थी। समाज में पूर्ण शक्ति मध्यम वर्ग के हाथों में थी। किन्तु रूस में परिस्थितियाँ भिन्न थीं। इस समय भी रूसी समाज वड़े-वड़े जमींदारों का था। निर्धन किसानों की दशा दास जैसी थी। इन जमींदारों का मुखिया राजा होता था जिसे जार कहते थे। देश की सम्पूर्ण सत्ता उसके हाथ में होती थी। देश की खुफिया पुलिस तथा सेना शासन के कार्यों में उसका हाथ बटाते थे। आधुनिक युग की तरह वैधानिक नियम धारासभा द्वारा नहीं वनाये जाते थे। किन्तु जार का प्रत्येक शब्द ही वैधानिक नियम था। उसकी आज्ञाओं का उल्लंघन करने का कोई साहस तक न कर सकता था। रूस की जनता अधिकतर निर्धन, अशिक्षित किसान थी। उनका जीवन शोचनीय था।

उस समय रूस में उद्योगों की संख्या अधिक न थी और कारखाने भी वहुत कम थे। प्रायः सभी उद्योगों में विदेशियों का पैसा लगा था। श्रमिकों की दशा शोचनीय थी। रूस में कुछ पढ़े-लिखे लोग थे जो जार के निरंकुश शासन के विरोधी थे। वे सरकार के अत्याचारों का अन्त कर देना चाहते थे। उन्होंने जनता से जार के विरुद्ध विद्रोह करने की प्रार्थना की। परिणामस्वरूप कई राजनैतिक दलों का जन्म हुआ। इनमें से एक दल का नेतृत्व लेनिन ने किया। इस दल ने कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों को अपनाया।

लेनिन वड़ा बुद्धिमान् नेता था। जव वह केवल १७ वर्ष का था, उस समय उसके वड़े भाई के विरुद्ध जार का विरोध करने के अपराध में अभियोग लगाया गया था। लेनिन को साइवेरिया भेज दिया गया था। कुछ वर्षों के वाद उसने रूस को छोड़ दिया और दूसरे देशों में रहने लगा। उसने अपने विचारों को प्रकाशित करवाया और यह पुस्तकें रूस में गुप्त रूप से लाई गईं।

वीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में रूस ने जापान के विरुद्ध लड़ाई प्रारंभ की थी। इस लड़ाई के कारण रूस की जनता असंतुष्ट थी। जापान ने रूस को बुरी तरह

हराया। इतने छोटे देश से हार जाने के कारण जार की सरकार की शक्ति कम हो गई थी। लोगों ने सुधार की माँग की। अन्त में जार को सुधार करने पड़े। जनता के प्रतिनिधियों की असेम्वली स्थापित की गई। इनको ड्यूमा (Duma) कहा जाता था। किन्तु ये सुधार करने में असफल हुईं क्योंकि इनके अधिकार वड़े संकुचित थे। समाज में अव्यवस्था फैल गई और दिन-प्रतिदिन ज़ार की शक्ति क्षीण होती गई। अव इसका सुवार करना असंभव हो गया था। इसका पतन स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा था।

राजधानी में जुलूस निकलने लगे। सैनिकोंने उन्हें रोका और गोली चलाई। विरोध वढ़ने लगा। १३ रेल की लाइनें वन्द हो गईं। कहीं कहीं पर पुलिस के अफ़सर मारे गये और उनकी हत्या करने वालों का पता भी न लगा। जार का चचा जो मास्को का गवर्नर-जनरल था दिन दहाड़े मार डाला गया। किसानों ने भी विरोध किया। उन्होंने 'सारी जमीन किसानों की है'—यह नारा लगाया। किसानों ने अपना संघ वनाया। उन्होंने भू-पतियों पर हमला किया और उनकी सम्पत्ति लूट ली। वहुत से स्थानों में पुलिस चुपचाप खडी रही। कुछ समय के वाद रेलवे में हड़ताल हुई। कारखाने वन्द हो गए। देशभर में हड़ताल अपने आप हो गई। स्टौलीपिन नामक मन्त्री ने कई सुधार किये। परन्तु वह थोड़े दिन वाद मारा गया। उसके उत्तराधिकारी ने भी सुधार की आवश्यकता का अनुमान किया, परन्तु उसका राजदर्वार में अधिक प्रभाव न था और वह रैसप्यूटिन का विरोधी था इसलिये वह शीघ्र ही पदच्युत कर दिया गया। रैसप्यूटिन की इस समय सर्वत्र निन्दा हो रही थी। ड्यूमा में भी उसके दुश्चरित्र पर टीका टिप्पणी हुई थी। कई सदस्यों नें कहा था कि ऐसे व्यक्ति का राजप्रासाद में प्रवेश होना ही राष्ट्र के लिये अत्यन्त अनिष्ट कारक है। ड्यूमा को अव जार नहीं रोक सकता था। देश उसे चाहता था और इस वात की प्रतीक्षा कर रहा था कि वैधानिक सुधार होना चाहिये।

प्रथम महायुद्ध में रूस ने मित्र राष्ट्रों का साथ दिया था। किन्तु रूसी सेनाओं को कई हारों को सहन करना पड़ा। इसका कारण यह था कि सेना के अधिकारी वेईमान थे। कभी कभी सैनिकों को विना जूतों के युद्ध में जाना पड़ता था। क्योंकि वेईमान अधिकारी उस धन को स्वयं खा जाते थे। रूसी जनता में जागृति हुई और उसने युद्ध वन्द करने की इच्छा प्रकट की। विरोध की भावना वढ़ती गई।
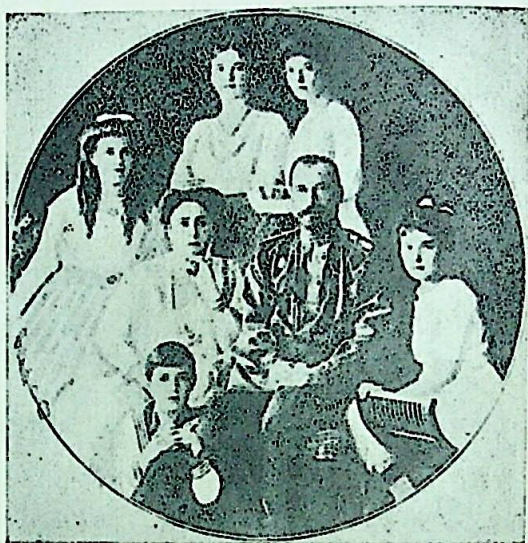
जार निकोलस का परिवार

सुप्रीम सोवियट का अधिवेशन

जगह जगह झगड़े हुए। इन लोगों को दबाने के लिए सेना भेजी गई। किन्तु सैनिकों ने उन पर गोली चलाने से इन्कार कर दिया। सैनिक जनता के साथ हो गये। इस प्रकार ज़ार की सैनिक शक्ति जाती रही।

जार अपनी पत्नी अर्थात् जारीना की इच्छानुसार कार्य करता था। जब उसके पुत्र उत्पन्न हुआ तो प्रसन्नता तो हुई परन्तु शीघ्र ही प्रसन्नता एक भयंकर आपत्ति में परिणित हो गई। बच्चा बहुत ही कमजोर हुआ था और उसे एक ऐसी बीमारी थी कि जिसके कारण उसकी मृत्यु किसी समय हो सकती थी। यदि उसके कहीं भी जरासीं चोट लग जाती तो खून ऐसे वेग से बहता था। ऐसा मालूम होता था कि वह मरने ही वाला है। रैसप्यूटीन साइबेरिया निवासी महन्त था। जैसा पहले कह चुके हैं धूर्त विलासप्रिय और दुश्चरित्र व्यक्ति था। जारीना पर उसने अपना प्रभाव डाला और उसे अपने वश में कर लिया। इसका कारण यह था कि दो एकबार राजकुमार को भयंकर बीमारी हुई। रैसप्यूटीन नें उसकी चिकित्सा की और उसे अच्छा कर दिया। जरीना बहुत प्रभावित हुई और उसी के कहने में चलने लगी परन्तु देश भर में इस बात की चर्चा थी और बड़े अमीर लोग रैसप्यूटीन को मार डालना चाहते थे। एकबार उसे राजवंश के किसी व्यक्ति ने भोज में आमन्त्रित किया। उसे खूब मदिरा पान कराया और भोजन की सामग्री में विष मिला दिया। परन्तु विष का कोई असर होते न दिखाई पड़ा। तब षड़यन्त्रकारियों में से एक ने उसे गोली से मार दिया। जारीना रंज के मारे पागल सी हो गई। जार लड़ाई के मैदान से शीघ्र लौट कर आया और उसने रैसप्यूटीन की अन्त्येष्टि क्रिया में भाग लिया।

क्रान्ति रूस में किस प्रकार हुई? यों तो जार की प्रजा बहुत दिन से असन्तुष्ट थी परन्तु इस समय क्रान्ति चाहने वालों को एक अवसर मिल गया। सेन्टपीटर्सबर्ग में एक दिन रोटी की दूकान पर कुछ स्त्री-पुरुष क्यू बनाकर खड़े हुए थे। औरतों ने इतना उपद्रव किया कि सैनिक बुलाने पड़े और जब उनसे गोली चलाने को कहा गया तो इन्होंने इनकार कर दिया। रक्षादल के भी कुछलोग विद्रोहियों से मिल गये। इस तरह नगर में बड़ी सनसनी फैल गयी।

कुछ समय पश्चात् देश की दशा बड़ी खराब हो गई। जनता ने जार के पदच्युत करने की माँग की। उसे जनता की माँग को मानना पड़ा। अन्त में बोलशेविकों की हत्या कर डाली। नई सरकार की स्थापना की गई जो मध्यम श्रेणी के लोगों के हाथ

में आ गई। यह भी जनता के लिए सुधार न कर सकी। जनता शान्ति, भोजन और भूमि चाहती थी। देश भर में झगड़े हो रहे थे। मजदूर तथा सैनिकों ने बहुत से शहरों में छोटी-छोटी कौंसिल बनाईं। उनको सोवियट कहा जाने लगा। इन सोवियटों में बलशाली दल बोलशेविक कहा जाता था। बाद में बोलशेविक साम्यवादी बन गये। ये लोग नई सरकार से संतुष्ट नहीं थे। वे जनता की माँगों के समर्थक बन बैठे। अंत में नई सरकार का पतन हुआ और लेनिन तथा स्टालिन के दल ने शासन अपने हाथों में ले लिया।

सत्ता अपने हाथ में लेने के पश्चात् बोलशेविकों ने युद्ध समाप्त कर दिया। उन्होंने एक नई प्रकार की सरकार बनाई। रूसी समाज में वे क्रान्तिकारी परिवर्तन करना चाहते थे। किन्तु नई सरकार की स्थापना के थोड़े दिन बाद ही इसे अनेक कठिनाइयों ने आ घेरा। विदेशी शक्तियों ने देश पर आक्रमण किये। गृह-युद्ध प्रारंभ हो गया। किन्तु इन्होंने साहस के साथ विपक्षियों का सामना किया। विदेशियों को मुँह की खानी पड़ी।

रूसी राज्य-क्रान्ति का आशय एक समाज का निर्माण करना था, जिसमें समाज वर्गों में विभाजित न होगा। समाज में कोई भूखा न रहेगा। पूँजीपतियों को नष्ट कर दिया जायगा। समाज में समानता होगी और प्रत्येक आदमी काम करेगा। कोई मनुष्य दूसरे के परिश्रम से विलासिता का जीवन व्यतीत नहीं कर सकेगा। किसान आपस में मिलकर बड़े-बड़े खेत बनायेंगे। ऐसे समाज में लोगों की शिक्षा तथा चिकित्सा के लिए सरकार व्यय करती है। लोगों को सुखी तथा प्रसन्न बनाने के लिए और भी बहुत परिवर्तन किये गये। सब प्रकार की असमानता समाप्त कर दी गई। जमीन के स्वामी तथा किसान में कोई भेद-भाव नहीं है। कितने आश्चर्य की बात है कि ज़ार के समय में रूस एक असभ्य देश था किन्तु आज वह एक प्रगतिवादी देश है। रूस पश्चिमी देशों का महान् शत्रु समझा जाता है।

रूस का घरेलू जीवन साधारण है। कपडे सादा पहने जाते हैं। हृष्टपुष्ट आदमी सिपाही देखने में आते हैं। इस बात का ध्यान रक्खा जाता है कि प्रत्येक मनुष्य को खानेपीने की चीजें मिलें, शिक्षा मिलें, उसकी चिकित्सा ठीक तरह से हो उसके मनोविनोद के साधन भी प्रस्तुत किये जायें। भोजन रूसियों का सादा है। अमीरों के विशाल भवन अब राज्य के हो गये हैं और सार्वजनिक हित के लिये काम में लाये जाते हैं। चिकित्सा और शिक्षा के लिये कोई फीस नहीं ली जाती

यू० एस० एस० आर० का मानचित्र
उ त्त री
नोवाया ज़ेमलया
मरमान्स्क
फि न
बाल्टिक सागर
पोलैण्ड
विलना
रीगा
लेनिनग्राड
पेट्रोज़ेवोडस्क
आर्केंजल
सो वि य ट सो श लि स्ट
मिन्स्क
मास्को
तुला
गोर्की
ओरेल
कीव
यू क्रे न
ओडेसा
खार्कोव
कज़ान
मोलोटोव
कुइबिशेव
रस्टोव
वोल्गा नदी
साराटोव
काला सागर
स्टेलिनग्राड
ओमस्क
क ज़ा कि स्ता न
ट र्की
कैस्पियन सागर
अरल सागर
सेमीपैलटिन्स्क
बाल्कश झील
बाकू
तुर्कमान
अलमा अता
बुखारा
ताशकन्द
फ्रुंज़े
आशलाबाद
समरकन्द
स्तालिनाबाद
सि क्यां
अफ़गानिस्तान
भारत

बेरिंग जल प्रणाली
बेरिंग सागर
लीना नदी
याकुटस्क
ओखोटस्क सागर
साखालिन
कोमसोमोलस्क
खैबारोवस्क
अमूर नदी
नीना
इरकुटस्क
बैकाल झील
ब्लाडीवोस्टक
ची न
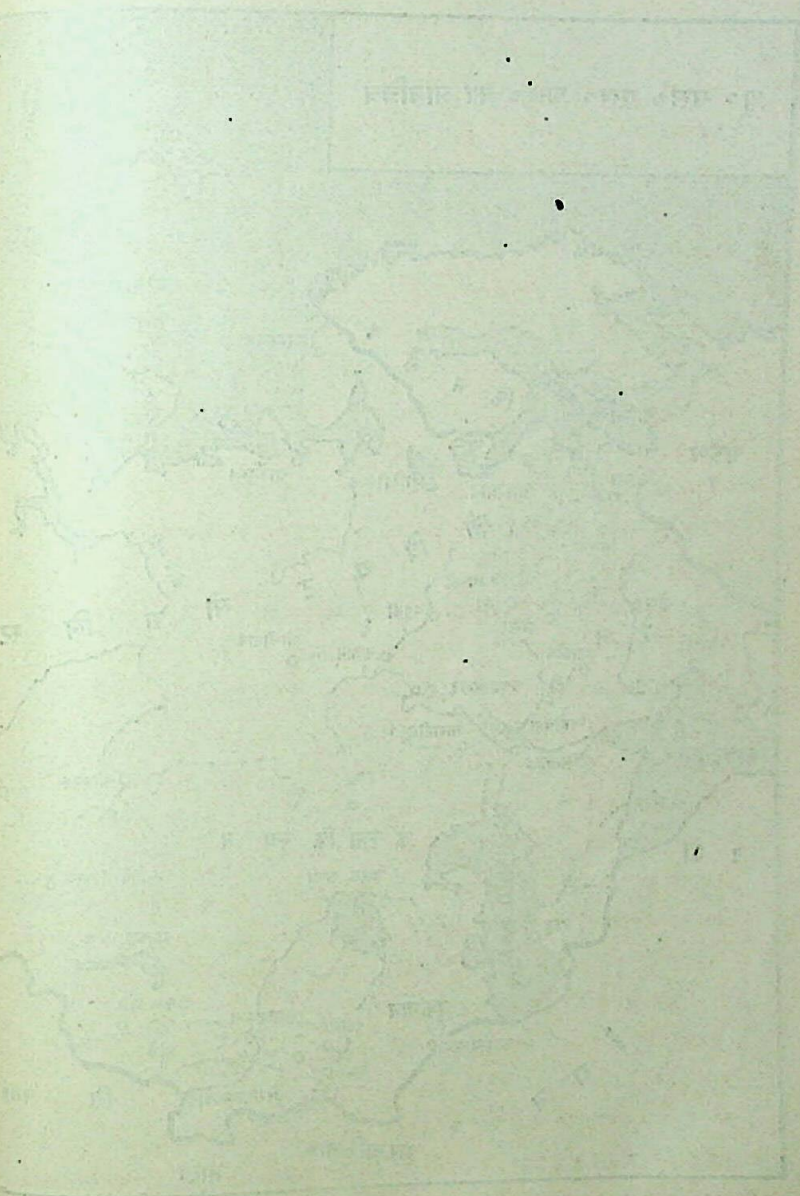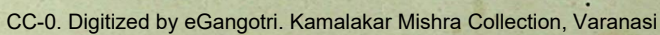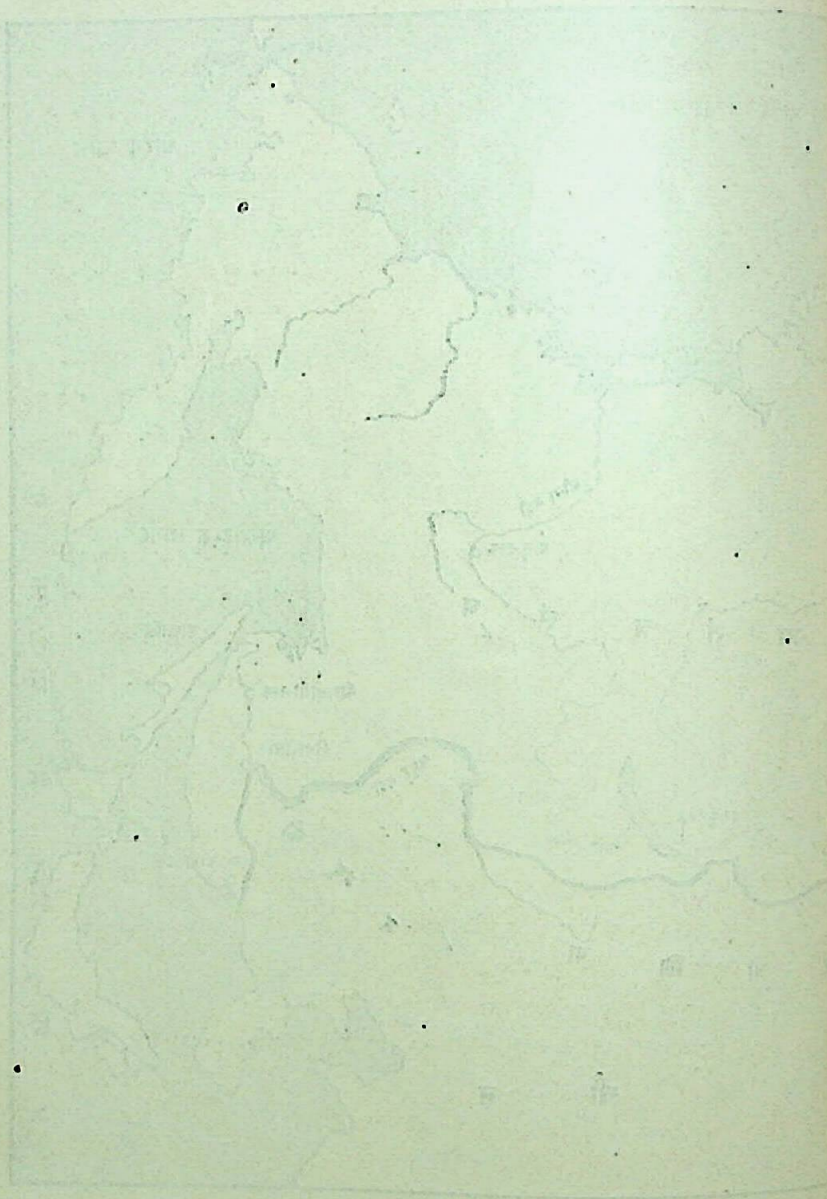
डाक्टर, धाय, दन्त वनाने वाले निःशुल्क सेवा करते हैं। अस्पतालों में रोगियों से कुछ नहीं लिया जाता। शारीरिक व्यायाम पर अधिक जोर दिया जाता है। सायंस की उन्नति के लिए भी वहुत प्रयत्न किया जाता है। विद्वानों का देश में आदर है। अध्यापकों को अच्छा वेतन दिया जाता है। सामाजिक जीवन में भी परिवर्तन हुए हैं। तलाक देना पहले वहुत सरल था अव ऐसा नहीं है। पहले धर्म की अवहेलना की जाती थी, परन्तु अव अनेक स्त्री-पुरुष गिरजे में जाकर उपासना करते हैं। राष्ट्र सुखी तथा सम्पन्न है। दिन पर दिन हर तरह की उन्नति होती जाती है। सैनिक शक्ति आजकल रूस की वहुत वढ़ गई है। अव वह पश्चिम के वड़े वड़े देशों का सामना कर सकता है। विश्व में रूसका उतना ही प्रभाव है जितना अमेरिका और इंग्लेंड का। द्वितीय विश्वयुद्ध में रूस ने दिखा दिया था कि उसकी सेना क्या कर सकती है।

रूसी शासन-पद्धति पूर्णतया नवीन है। राज्य का शासन सोवियटों द्वारा होता है और ये सोवियट केन्द्रीय सरकार का चुनाव करते हैं। समाज में सव प्रकार का अधिकार कम्युनिस्ट पार्टी को है। पहले रूस में भिन्न-भिन्न नसलों के लोग रहते थे। इनको अव स्वतंत्र वना दिया गया है। इन सवको मिलाकर रूस को यू० एस० एस० आर० (Union of Soviet Socialist Republics) कहा जाता है।

अभ्यास

१. कार्ल मार्क्स कौन था? रूसी क्रान्ति से उसका क्या सम्बन्ध था?
२. रूसी क्रान्ति से पहले वहाँ की सरकार की क्या दशा थी?
३. क्रान्ति के कुछ नेताओं के नाम वताइए?
४. क्रान्ति का श्रीगणेश कैसे हुआ?
५. क्रान्ति के वाद वहाँ क्या-क्या परिवर्तन हुए?
६. क्रान्ति के अनुसार रूसी लोग किस प्रकार के समाज की स्थापना करना चाहते थे?
७. रूसी राज्य को किस नाम से पुकारा जाता है?

अध्याय १४

विश्व-युद्ध; राष्ट्रसंघ तथा संयुक्तराष्ट्र संघ

बीसवीं शताब्दी में प्रारंभ से ही कुछ अप्रिय घटनाएँ घटी हैं। इस शताब्दी के प्रथम ५० वर्षों में दो महायुद्ध हुए। ये युद्ध पिछले युद्धों से अधिक भयानक थे। इन युद्धों के कारण सम्पूर्ण मानव जाति को अगणित दुःख झेलने पड़े। इनके कारण मानव-इतिहास की प्रगति रुक गई थी।

दोनों युद्धों का प्रारंभ जर्मनी ने किया था। किन्तु अकेले जर्मनी को इन युद्धों का जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। इन युद्धों के और भी अनेक कारण थे। इस समय राष्ट्रीयता की भावना व्यापक रूप से फैल चुकी थी। इस भावना का जन्म फ्रान्स की राज्यक्रान्ति तथा नैपोलियन के युद्धों के कारण हुआ था। राष्ट्रीयता के रँग में रँगी जनता अपने देश को सबसे शक्तिशाली बनाना चाहती थी। इसका परिणाम यह हुआ कि आपस में द्वेष की भावना उत्पन्न हो गई। इन युद्धों का दूसरा कारण यह था कि उपनिवेशों की छीन-झपट के कारण एक देश दूसरे का शत्रु बन बैठा था। प्रत्येक देश यही चाहता था कि वह दूसरे के उपनिवेशों को हड़प जाय। व्यापारिक क्षेत्र में भी ये लोग एक-दूसरे के प्रतिद्वन्दी थे।

जर्मनी का एकीकरण विस्मार्क की कार्य-कुशलता के कारण सम्पन्न हो चुका था। उसको अनेक युद्ध लड़ने पड़े, जिससे प्रशिया का सम्मान बहुत बढ़ गया था। किन्तु जर्मनी का एकीकरण ही उसका अन्तिम लक्ष्य न था। उसने शासन केन्द्रीभूत किया और घोषणा की कि उसका उद्देश्य उपनिवेश प्राप्त करना नहीं है। वह कहा करता था "मुझे उपनिवेश नहीं चाहिएं। मैं बार-बार यही कहूंगा कि मुझे उपनिवेश प्राप्त करने की किंचित् मात्र भी इच्छा नहीं है। उपनिवेशों से बड़े-बड़े पदो की संख्या अवश्य बढ़ जाती है, इन पदों पर वेतन अधिक मिलता है और काम कुछ नहीं करना पड़ता।" एक बार विस्मार्क का चर्च से झगड़ा हो गया। जिसमें उसने चर्च की आन्तरिक व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर दिया। सेना का संगठन

नयें रूप से हुआ। असंतोष को दूर करने के लिए सामाजिक सुधार किये गये। उद्योग उन्नति कर रहे थे। किन्तु जर्मनी के भाग्य में तो एक सैनिक देश होना लिखा था। वहाँ का राजा क़ैजर द्वितीय युद्ध चाहता था, शान्ति नहीं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए जर्मनी ने आस्ट्रिया हंगरी से सम्बन्ध स्थापित किये।

दूसरे देशों के साथ जर्मनी के सम्बन्ध अच्छे न थे। विरोध की भावना शीघ्रता से वढ़ रही थी। पहले जर्मनी का सम्बन्ध इँगलेंड के साथ अच्छा था। किन्तु वाद में जर्मनी तथा इँगलैंड व्यापार और उपनिवेशों के क्षेत्रों में एक दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी वन गये। जर्मनी ने अपनी जलसेना वढ़ाना प्रारंभ किया। प्रारम्भ से ही विश्व में इंगलैंड की जल-सेना सवसे शक्तिशाली रही है। अतः जर्मनी का यह कार्य इँगलैंड की इच्छा के विरुद्ध था। फ्रान्स को जर्मनी पहले ही हरा चुका था, जिसमें फ्रान्स को कठोर व अपमानजनक शर्तें माननी पड़ी थीं। इसलिए फ्रान्स भी जर्मनी के विरुद्ध था। दूसरी ओर जर्मनी पूर्व में भी अपना प्रभाव वढ़ाने का प्रयत्न कर रहा था। इस क्षेत्र पर रूस की टकटकी लगी थी। अतः रूस भी जर्मनी के विरुद्ध हो गया। इस प्रकार इँगलैंड, फ्रान्स तथा रूस तीनों जर्मनी के शत्रु वन गये। इस तरह हम देखते हैं कि युद्ध के पहले यूरोप दो दलों में विभाजित था। एक दल में जर्मनी, आस्ट्रिया और उसके साथी थे; दूसरा दल इँगलैंड, फ्रान्स तथा रूस का था। ये दोनों दल अपनी सैनिक शक्ति वढ़ाने लगे। इस तरह प्रत्येक देश अधिक से अधिक शस्त्र वनाने में संलग्न हो गया। इसका फल यह हुआ कि यूरोप में युद्ध के काले वादल छा गये।

किन्तु युद्ध का तुरन्त कारण कुछ और ही था। एक सर्विया निवासी ने आस्ट्रिया राज्य के उत्तराधिकारी की हत्या कर दी थी। हत्या का समाचार पाकर संसार चौंक उठा। आस्ट्रिया ने सर्विया के पास अपना अंतिम निर्णय भेजा। किन्तु ये माँगें न्यायसंगत न थीं। सर्विया ने उन माँगों को ठुकरा दिया। कहा जाता है कि इस समय रूस ने सर्विया को ऐसा करने में उत्साहित किया था। परिणाम अच्छा न निकला। आस्ट्रिया ने सर्विया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। जर्मनी ने आस्ट्रिया का पक्ष लिया। इँगलैंड, फ्रान्स तथा रूस तीनों जर्मनी के विपक्ष में हो गये। प्रथम विश्वयुद्ध सन् १९१४ में प्रारंभ हुआ था और लगभग चार वर्ष तक चलता रहा। इसे विश्वयुद्ध कहा जाता है क्योंकि संसार की प्रायः सभी वड़ी शक्तियों ने इस युद्ध में भाग लिया था। रूस तथा तुर्की एक दूसरे के कट्टर शत्रु

थे। इसलिए तुर्की ने जर्मनी तथा आस्ट्रिया का साथ दिया। इटली, अमेरिका, जापान तथा चीन, इँगलैंड और फ्रान्स की ओर से लड़े। सन् १९१७ की बोलशेविक क्रान्ति के पश्चात् रूस युद्ध से अलग हो गया।

यह युद्ध पुराने युद्धों से पूर्णतया भिन्न था। विश्व-इतिहास में पहली बार युद्ध की लपटों ने सारे संसार को जलाया। सब देशों ने भयानक हथियारों का प्रयोग किया। ये हथियार उन देशों के वैज्ञानिकों की देन थी। इन हथियारों के कारण महानाश होने लगा। पनडुब्बी, टैंक, नावों, जहरीली तरल अग्नियाँ आदि का प्रयोग इस युद्ध की विशेषता थी। असंख्य व्यक्तियों का जीवन नष्ट कर दिया गया। धन तथा मानव-जीवन की हानि हुई। परिणाम यह हुआ कि जर्मनी हार गया। इसका कारण यह था कि युद्ध के अंतिम दिनों में जर्मनी अकेला रह गया था। नवम्बर ११ सन् १९१८ में संधि की गई और युद्ध समाप्त हो गया।

वैरसाई की संधि के अनुसार यूरोप का नकशा ही बदल गया। यह कुछ सिद्धान्तों पर निर्भर थी। सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह था कि प्रत्येक मनुष्य स्वतंत्र है। प्रत्येक जाति के मनुष्य अपनी अलग सरकार बनाने में स्वतंत्र हैं। इसी सिद्धान्त के अनुसार आस्ट्रिया के साम्राज्य के, जिसमें अनेक जातियों के लोग रहते थे, टुकड़े कर दिये गये। हंगरी, चैकोस्लोवेकिया आदि नये राज्यों का जन्म हुआ। परन्तु इस सिद्धान्त का पालन हर जगह न हो सका। इस युद्ध में जर्मनी को महान् क्षति उठानी पड़ी थी। उसके सारे उपनिवेश उससे छीन लिये गये थे। युद्ध में जर्मनी ने बहुत से देशों को बड़ी हानि पहुँचाई थी। इसका परिणाम यह हुआ कि युद्ध के बाद उसे भारी मूल्य चुकाना पड़ा।

इतना मानना पड़ेगा कि इस संधि की शर्तें बड़ी कठोर थीं। जर्मनों को इन शर्तों को मानने को बाध्य किया गया। जर्मनी के लोग कुछ न कर सके, क्योंकि वे असहाय थे। यह अपमान उनको असह्य हो उठा और उन्होंने बदला लेने की ठान ली। इस संधि द्वारा की गई व्यवस्था का अंत कर देने का उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया था। वहाँ के राजनीतिज्ञ तथा जनता असंतोष की आग से जल रहे थे। द्वितीय महायुद्ध के अनेक कारणों में से एक कारण यह भी था।

प्रथम महायुद्ध के परिणामस्वरूप राष्ट्र-संघ (League of Nations) की स्थापना हुई। यह एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। अमेरिका के राष्ट्रपति विलसन के मस्तिष्क में यह विचार आया। उनका उद्देश्य था कि देशों के आपसी झगडों को

तय करने के लिए राष्ट्रों का एक संगठन किया जाय। यह एक महान् भावना थी जिसके लिए विलसन सम्पूर्ण मानव जाति के बधाई के पात्र हैं। पहले लीग के सदस्य जीते हुए तथा तटस्थ देश ही थे। कुछ समय पश्चात् हारे हुए देश जैसे जर्मनी आदि को भी इसमें सम्मिलित कर लिया गया। अमेरिका इसमें कभी सम्मिलित नहीं हुआ। इससे विलसन की भावना को गहरी चोट लगी थी। कई वर्षों के पश्चात् रूस को भी मिला लिया गया।

लीग का उद्देश्य विश्व में शान्ति और सहयोग स्थापित करना था। आरम्भ में जिन राष्ट्रों ने संधिपत्र पर हस्ताक्षर किये थे वे सब इसके सदस्य थे। लीग का कार्य असम्बली और कौंसिल के द्वारा होता था। उसका कार्यालय जैनेवा में था। इसके अतिरिक्त एक अन्तर्राष्ट्रीय मन्त्रालय भी हैग में था जहाँ राष्ट्रों में झगड़ों का जजों द्वारा निर्णय होता था। अन्तर्राष्ट्रीय श्रमसंघ भी था और लीग के साथ उसका गहरा सम्बन्ध था। असेम्बली भिन्न भिन्न राष्ट्रों के प्रतिनिधि आते थे। इसका अधिवेशन जैनेवा में होता था। ऐसम्वली के अधिकार बहुत थे। वह किसी भी प्रश्न पर जो विश्वशान्ति से सम्बन्ध रखता हो विचार कर सकती थी। नये सदस्यों का प्रवेश असम्बली द्वारा ही हो सकता था। लीग का बजट भी वही पास करती थी। उसका कार्य ६ कमेटियों द्वारा होता था। प्रत्येक कमेटी निर्दिष्ट विषयों पर वाद-विवाद करती थी और अपनी रिपोर्ट असम्बली के पास भेजती थी। असम्बली के निर्णय बहुधा एकमत से होते थे। कौंसिल में तीन प्रकार के मेम्बर होते थे—स्थायी, अस्थायी और अल्पकालीन। फ्रांस, इंग्लैंड, इटली, जापान जर्मनी (सन् १९२६ से) स्थायी सदस्य थे। कौंसिल के अधिकार विस्तृत थे। इसलिये सभी राष्ट्र उसके सदस्य होने की इच्छा करते थे। कार्यालय का अध्यक्ष सेक्रेटरी जनरल होता था। कार्यालय में अनेक प्रकार की सूचनायें तैयार की जाती थी। अन्तर्राष्ट्रीय मन्त्रालय में १५ जज होते थे। इनकी नियुक्ति ९ वर्ष के लिये होती थी। यह मन्त्रालय अपना अध्यक्ष और उपाध्यक्ष चुनता था। इस मन्त्रालय का कार्य असम्बली और कौंसिल को परामर्श देना था। राष्ट्रों के झगड़ों का भी निर्णय यहाँ होता था।

लीग ने विश्वशान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के लिये प्रशंसनीय कार्य किया। उसने राष्ट्रों में सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न किया और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये कमेटियां स्थापित कीं, जिन्होंने भिन्न भिन्न देशों के बारे में

जांच परताल की। भारतवर्ष भी लीग का सदस्य रहा और उसके प्रतिनिधियों ने वाद-विवाद में भाग लिया। सर अली इमाम, वी० एल० मित्तर और श्रीनिवास शास्त्री के भाषण असवली में आदर से सुने जाते थे।

निःसंदेह लीग ने वहुत काम किया जो वड़ा लाभदायक सिद्ध हुआ। लीग ने वहुत से पेचीदे झगड़ों का अंत किया। देशों के आपसी झगड़ों में कई वार लीग ने अपना निर्णय दिया। किन्तु दोष यह था कि इन निर्णयों को कार्य रूप में परिणत किये जाने के लिए लीग के पीछे कोई शक्ति नहीं थी। इसी अभाव में लीग पूर्ण रूप से संसार का भला न कर सकी। शान्ति की स्थापना के लिए वड़े-वड़े देश अपने स्वार्थ का त्याग करने को उद्यत न थे। जव जापान ने चीन पर आक्रमण किया तो उसने लोगों से सहायता माँगी। किन्तु लीग चीन की अधिक सहायता न कर सकी। इसी तरह इटली ने अवीसीनिया पर आक्रमण किया। लीग असहाय थी। इसलिए इन साम्राज्यवादियों को कोई रोक न सका। लीग की स्थापना के कुछ वर्ष पश्चात् ही धीरे-धीरे लोग इसे अनुपयोगी समझने लगे। धीरे-धीरे इसकी शक्ति का लोप होता गया और युद्ध प्रारंभ होने से पहले लीग मर चुकी थी।

सन् १९१८ की शान्ति-संधि से अनेक समस्या पैदा हो गईं। जर्मनी तथा इटली में सामान्य मनुष्यों की अवस्था शोचनीय होती जा रही थी। उन्होंने वड़े-वड़े अत्याचार सहे। ऐसी अवस्था में वे किसी भी ऐसे व्यक्ति के अनुगामी वन सकते थे जो देश में भाँति-भाँति के सुधार करे। मुसोलिनी एक ऐसा ही व्यक्ति था। वह फासिस्ट पार्टी (Fascist Party) का नेता था। उसने इटलीवासियों को वचन दिया कि वह उनकी स्थिति में सुधार करेगा। इटली के लोग उससे प्रभावित हुए। उसकी पार्टी ने राज्यसत्ता अपने हाथ में ले ली और मुसोलिनी इटली का अनन्य शासक वन वैठा। मुसोलिनी ने सुधार भी किये। वेकारों को काम भी मिलने लगा, लोगों की आर्थिक दशा पहले से वहुत अच्छी हो गई। इस समय ऐसा लगता था कि इटली की समस्याओं का अंत हो गया। किन्तु सच तो यह है कि इन सुधारों से कोई उन्नति नहीं हुई। उसने देश के तमाम साधनों को सुसंगठित सेना के निर्माण में नहीं लगाया। उसने अपने विरोधियों को कुचलने में उन साधनों का प्रयोग किया। कुछ समय पश्चात् इटली में केवल एक पार्टी रह गई। यह मुसोलिनी की फासिस्ट पार्टी थी।

कैजर विलियम द्वितीय

मुसोलिनी और हिटलर

रूजवेल्ट और चर्चिल

जर्मनी में भी स्थिति अच्छी न थी। कुछ समय तक देश में बड़ी अव्यवस्था रही और १९३४ में हिटलर ने राजसत्ता अपने हाथ में ले ली। बहुत सी बातों में उसने मुसोलिनी का अनुकरण किया। उसने जर्मनी को शक्तिशाली बनाना प्रारंभ किया क्योंकि वह प्रथम महायुद्ध की हार का बदला लेना चाहता था। उसकी इच्छा थी कि जर्मनी संसार का स्वामी बन जाय। विशाल सेना का संगठन किया गया। जिस किसी ने भी उसका विरोध किया उसे बुरी तरह दबा दिया गया। हिटलर की नाज़ी पार्टी बहुत शक्तिशाली थी। उसने मनुष्यों को राष्ट्र का दास बना दिया और विचार स्वातंत्र्य को बिलकुल कुचल दिया। शिक्षा पर भी उन्होंने अपना पूर्ण अधिकार कर लिया। शिक्षा का उद्देश्य सैनिक बनाना बताया गया। स्त्री शिक्षा का भी उद्देश्य यह था कि उनमें शारिरिक बल हो और वे हृष्ट पुष्ट सन्तान उत्पन्न करें जिससे सैनिक शक्ति की वृद्धि हो। नाज़ी पार्टी ने अपने ही अध्यापक रक्खे और अपना ही पठयक्रम स्कूलों में चलाया। बाल्यावस्था ही से जर्मन लोगों को पार्टी की आज्ञा मानना परम कर्तव्य बताया गया। बच्चो को हिटलर के लिये प्राण तक देने को तैयार किया गया। जर्मन युवकों को इस प्रकार की एक प्रार्थना सिखाई गई; "अडोल्फ हिटलर ! हम तुमपर विश्वास करते हैं। तेरे बिना हम अकेले रह जायँगे। तेरी ही कृपा से हम एक जाति बने हुए हैं। तुमने हमें युवावस्था का महान अनुभव दिया है। तेरे नाम को हम सादर लेते हैं। हमारा तुझ पर पूर्ण विश्वास है।" देशभर में सैनिक शिक्षा का प्रबन्ध किया गया और युद्ध की लिप्सा द्रुतगति से बढ़ गई। चारों ओर सैनिक वातावरण हो गया। पूर्व में जापान भी इसी नीति को अपना रहा था। वह चीन के कुछ भागों को हड़प जाना चाहता था। कुछ समय के पश्चात् जर्मनी तथा इटली एक दूसरे के मित्र बन गये।

पूर्ण रूप से साधन जुटाने के पश्चात्, हिटलर को अपनी विजय का पूरा विश्वास हो गया। उसने आस्ट्रिया पर अपना अधिकार जमा लिया। चैकोस्लोवेकिया को विभाजित कर दिया गया और उसके कई भाग जर्मनी में मिला लिये गये। रूस चाहता था कि फ्रान्स और इंगलैंड हिटलर के द्वारा यूरोप में आनेवाली आपत्ति का अनुभव करें। किन्तु मजे की बात तो यह है कि इंगलैंड और फ्रान्स जर्मनी की अपेक्षा रूस पर संदेह करने लगे। इसीलिए वे रूस के सुझावों को मानने के लिए कभी तैयार नहीं हुए। परिणाम यह हुआ कि रूस ने जर्मनी के साथ एक

समझौता किया। इस समझौते के अनुसार यह निश्चय हुआ कि वे आपस में एक दूसरे पर आक्रमण नहीं करेंगे।

इस प्रकार रूस को मित्र बनाकर, जर्मनी ने पोलैंड पर आक्रमण किया। इसकी प्रतिक्रिया यह हुई कि इंगलैंड तथा फ्रान्स ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। इस प्रकार द्वितीय महायुद्ध का श्रीगणेश ३ सितम्बर सन् १९३९ को हुआ।

प्रथम महायुद्ध की अपेक्षा द्वितीय महायुद्ध अधिक नाशकारी सिद्ध हुआ। यह युद्ध अधिक समय तक चलता रहा। जर्मनी, इटली तथा जापान एक पक्ष में थे और दूसरे पक्ष में फ्रान्स, इंगलैंड तथा अमेरिका (जो युद्ध में कुछ समय पश्चात् सम्मिलित हुआ) थे। जर्मनी ने रूस पर धावा बोल दिया। परिणामस्वरूप रूस भी इंगलैंड तथा फ्रान्स के पक्ष में मिल गया। यह युद्ध पूरे यूरोप, उत्तरी अमेरिका, पूर्वी एशिया तथा प्रशान्त महासागर के टापुओं में लड़ा गया। इस युद्ध में विज्ञान का व्यापक प्रयोग किया गया। प्रथम महायुद्ध में यह बात न थी। इस युद्ध में वायुसेना का महत्वपूर्ण स्थान है। जर्मनी ने उड़नेवाले बम्ब (Flying Bombs) तथा राकेट (Rocket) का प्रयोग किया। दोनों पक्षों ने एक दूसरे पर विजय प्राप्त करने के लिए अपने सम्पूर्ण साधनों का प्रयोग किया। पराजित देशों के निवासियों के साथ जर्मनी ने निर्दयता तथा क्रूरता का व्यवहार किया और बहुत से लोगों को कनसेन्ट्रेशन कैम्प (Concentration Camps) में बन्दी बना दिया गया। यहाँ तक कि तटस्थ लोगों को भी अनेक प्रकार के दुख सहने पड़े।

पहले तो जर्मनी ने प्रायः सम्पूर्ण यूरोप को जीत लिया। जापान ने दक्षिणी-पूर्वी एशिया पर अधिकार जमा लिया और वह भारत की सीमा तक आ गया। जर्मनी ने रूस के साथ हुए समझौते को व्यर्थ समझा और उसने रूस पर भी धावा बोल दिया। रूस ने शत्रु का साहस और वीरता के साथ विरोध किया और जर्मनी को पीछे भागना पड़ा। उत्तरी अफ्रीका में भी जर्मन-सेनाएँ बुरी तरह से हार रही थीं। अब इटली की बारी थी। जर्मनी के बाद इटली पर आक्रमण हुआ। जापान को जीते हुए द्वीपों में ही धर दबाया गया। इटली के निवासियों ने मुसोलिनी को मौत के घाट उतार दिया। रोम उसक चंगुल से मुक्त हुआ। जापान ने भारत में युद्ध आरम्भ कर दिया और सिंगापुर पर आक्रमण किया। मित्र सेनाओं ने बर्लिन पर धावा कर दिया और हिटलर को पराजित किया। उसकी तानाशाही को कठोर धक्का पहुँचा। उसके सहयोगियों ने पागल की तरह युद्ध किया, परन्तु
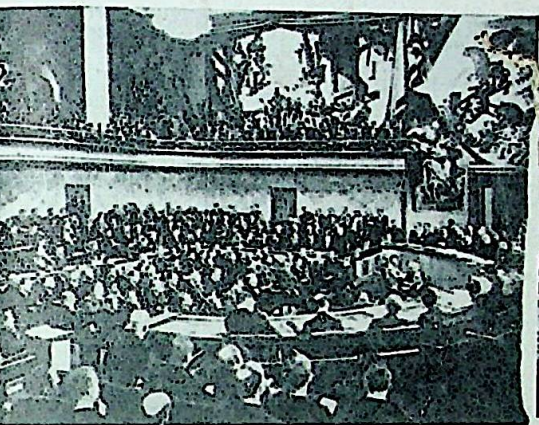
लीग आफ नेशन्स का अधिवेशन

मिलिटरी टैंक

सशस्त्र टैंक

यू बोट
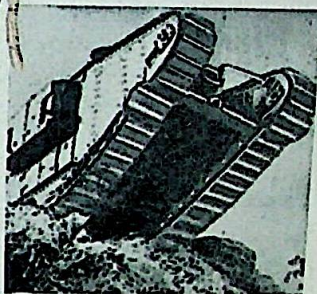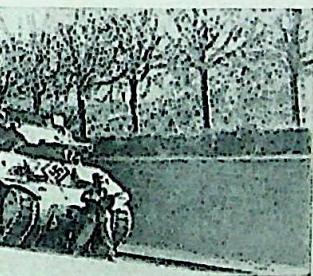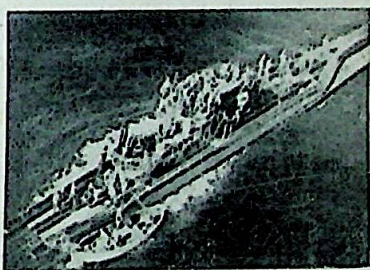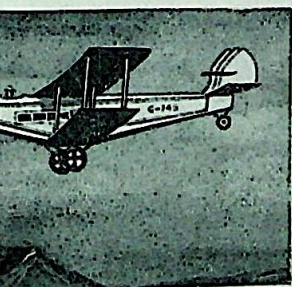
यु-यान——प्रथम विश्वयद्ध
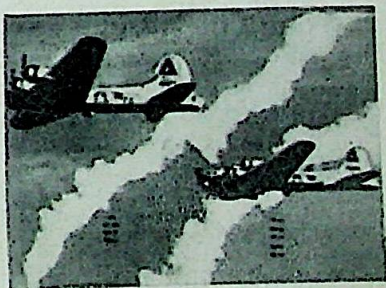
वायु-यान——द्वितीय विश्वयुद्ध

उनके भाग्य का निर्णय हो चुका था। अन्त म निराश होकर हिटलर ने अपने को गोली से मरवाया। इटली को भी आत्मसमर्पण करना पड़ा। प्रशान्त महासागर में युद्ध होता रहा जापानी साम्राज्य डगमगाने लगा। ओकीनावा की लड़ाई में जापान की करारी हार हुई। मैकआर्थर ने जापान में प्रवेश किया और उसके योद्धाओं तथा सेनानायकों को अत्मसमर्पण करने पर विवश किया। जापान की पराजय हुई और अमेरिका का वोलवाला हुआ। अमेरिका ने परमाणु-वम (Atom Bomb) का प्रयोग किया जिससे लाखों मनुष्यों की जानें गई और देश उजड़ गये। इस प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध का अन्त हुआ।

किन्तु युद्ध के पश्चात् भी शान्ति स्थापित न हो सकी। विजयी देश आपस में लड़ने-झगड़ने लगे। यह सच है कि सभी देश जो जर्मनी के विरुद्ध लड़े थे, युद्धपर्यंत एक दूसरे के मित्र बने रहे। किन्तु यह भी सच है कि युद्ध समाप्त होने पर वे एक दूसरे के कट्टर विरोधी वन गये। आज संसार दो गुटों में विभाजित हो गया है। इनमें से एक गुट का नेता रूस है तथा दूसरे का अमेरिका। भारत तथा वर्मा की तरह कुछ तटस्थ देश भी हैं। ये देश विश्व-राजनीति में भाग नहीं लेना चाहते। किन्तु इस नीति के अपनाने में उनके मार्ग में अनेक वाधाएँ आती जा रही हैं।

कार्ल मार्क्स (Karl Marx) के सिद्धान्तों के आधार पर ये लोग संसार में नवीन समाज की स्थापना करना चाहते हैं। किन्तु अमेरिकन गुट इन सिद्धान्तों का कट्टर विरोधी है। अमेरिका और उसके साथी देशों के अनुसार रूसी पद्धति एक प्रकार की दास-पद्धति पर निर्भर है। उनका मत है कि रूस में लोगों को किसी प्रकार की स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है।

इन दोनों दलों के नेता संसार में अपना अधिकार जमाना चाहते हैं। चीन के मिल जाने से रूस की शक्ति पहले से वहुत वढ़ गई है। किन्तु अमेरिकन गुट सैनिक शक्ति तथा आर्थिक साधनों में रूस से वहुत बढ़-चढ़कर है और रूसी गुट जनसंख्या में वढ़ा-चढ़ा है। खेद की वात है कि इनके आपसी झगड़ों ने विश्व-शान्ति को खतरे में डाल दिया है।

युद्ध के दिनों में ही अमेरिका, रूस, इंगलैंड, फ्रान्स तथा चीन ने लीग के स्थान पर एक और अन्तर्देशीय संघ को जन्म देने का निश्चय किया था। यह संयुक्तराष्ट्र-संघ के नाम से संसार में विख्यात है। संसार के प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण देश इस संघ के सदस्य हैं। इसका संघठन लीग की तुलना में अच्छे ढंग से किया गया है। लीग

के हाथों में ऐसी शक्ति न थी जिससे उसके निर्णय कार्यरूप में परिणत कराये जा सकते थे। किन्तु संयुक्तराष्ट्र-संघ को ऐसी शक्ति प्रत्यक्ष रूप से दी गई है। इस प्रकार लीग की तरह संयुक्तराष्ट्र-संघ एक वलहीन संघ नहीं है। हर्ष का विषय है कि हमारा देश भी संयुक्तराष्ट्र-संघ के मुख्य कार्यों में भाग ले रहा है। इस संघ का मुख्य उद्देश्य मानव जाति के अधिकारों की रक्षा करना है। यह कार्य उसी समय संभव हो सकता है, जब सब देश अपने झगड़ों को तय करें और युद्ध का सदैव के लिए वहिष्कार कर दें।

संयुक्तराष्ट्र-संघ के अधिकारपत्र में कुछ अधिकारों की घोषणा की गई है और यह प्रयत्न किया गया है कि युद्ध हमेशा के लिए त्याग दिया जाय। संसार में वहुत से देश युद्ध को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। वे संसार में शान्ति चाहते हैं। यह संघ इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सतत् प्रयत्न कर रहा है।

संघ का मन्तव्य इस प्रकार अधिकार-पत्र में वर्णित है:—

'हम संयुक्त राष्ट्रों के लोग युद्ध का अन्त करना चाहते हैं, जिसने दो वार मानव जाति को घोर कष्ट पहुँचाया है। हमारा मनुष्य के मौलिक अधिकारों और स्त्री पुरुषों तथा छोटे वड़े राष्ट्रों के अधिकारों मे पूर्ण विश्वास है। विश्व में ऐसी स्थिति उत्पन्न करना चाहते हैं जिसमें सन्धि पत्रों का आदर हो, अन्तर्राष्ट्रीय कानून की अवहेलना न हो। और जिसमे सामाजिक उन्नति हो और मनुष्य मात्र के जीवन का स्तर ऊंचा हो।"

संघ के चार मुख्य उद्देश्य हैं:—

१ विश्व में शान्ति रखना

२ राष्ट्रों में परस्पर मित्रता स्थापित करना और समान अधिकारों का आदर करना।

३ आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्यायों के हल करने में सहयोग करना।

४ इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये केन्द्र का काम करना।

संयुक्त राष्ट्र संघ के मुख्य अंग हैं—असेम्बली, सुरक्षा परिषद, आर्थिक और सामाजिक परिषद और ट्रस्टीशिप परिषद। इनके अतिरिक्त एक अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय भी है। संघ का अपना कार्यालय है। इसका पहला सेक्रेटरी जनरल ट्रिगवीली था।

जनरल असेम्बली में किसी भी विषय पर वाद-विवाद हो सकता है। उसका मुख्य कर्त्तव्य है विश्व-शान्ति के लिये उपाय करना। सुरक्षा परिषद में ११ सदस्य होते हैं। विश्व शान्ति की रक्षा करने की जिम्मेदारी इसी की है। इसके अधिकार बहुत हैं; आर्थिक तथा सामाजिक परिषद् में १८ सदस्य होते हैं और असेम्बली द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं। इसका कर्त्तव्य है राष्ट्रों के जीवन-स्तर को ऊंचा करना और आर्थिक तथा सामाजिक उन्नति के लिये उपाय करना; ट्रस्टी शिक्षा परिषद का कर्त्तव्य ऐसे देशों की उन्नति का उपाय करना है जो पिछड़े हुए हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ प्रशंसनीय कार्य कर रहा है। जब से वह स्थापित हुआ है तब से बराबर वह विश्व-शान्ति के लिये उद्योग कर रहा है। इसमे संदेह नहीं कि उसे अपना कार्य करने में बड़ी कठिनाई होती है क्योंकि कभी कभी राष्ट्रों का मत-भेद प्रबल हो जाता है। उदाहरण के तौर पर काश्मीर का प्रश्न है। इसको अभी तक संघ हल नही कर सका है। इसी प्रकार और भी प्रश्न उसके सम्मुख आये हैं जिनको हल करने में उसे बड़ी कठिनाई हुई है। परन्तु संघ के आदर्श उत्तम हैं। प्रत्येक शान्ति-प्रिय नागरिक का कर्त्तव्य है कि उसके सिद्धान्तों का प्रचार करे और मनुष्यों में शान्ति की ओर प्रवृति उत्पन्न करे। प्रत्येक राष्ट्र को अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए और अन्य राष्ट्रों के साथ न्याय पूर्ण वर्ताव करना चाहिये; तभी हमारे लक्ष्य की पूर्ति हो सकती है।

किन्तु युद्ध के अतिरिक्त मानव-जाति के और भी अनेक शत्रु हैं। गरीबी, भुखमरी और भाँति-भाँति की बीमारियों ने मनुष्य जाति को उसके उत्थान काल से ही तंग किया है। इसलिए इन दोनों दोषों को दूर किये विना सच्ची शांति स्थापित नहीं हो सकती। इस उद्देश्य की पूर्ति के हेतु संयुक्तराष्ट्र-संघ से और कई संघों को मिला दिया गया है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण यू० एन० ई० एस० सी० ओ० (U. N. E. S. C. O.) है। उसका उद्देश्य मनुष्य का बौद्धिक तथा सांस्कृतिक विकास करना है। ये संघ संसार के असभ्य भागों में से ग़रीबी और भुखमरी का अंत कर देने की ओर अग्रसर हो रहे हैं। कुछ संघ अशिक्षित जनता को शिक्षा देना चाहते हैं। इसी प्रकार का एक और संघ है जिसे स्वास्थ्य संघ (World Health Organization) कहते हैं। इसके द्वारा मनुष्यों को विभिन्न प्रकार के रोगों से बचाया जाता है। इन संघों की शाखाएँ संसार के प्रत्येक महत्वपूर्ण स्थान पर फैल गई हैं। यह जानकर बड़ा

हर्ष होता है कि हमारा देश संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रत्येक कार्य-क्षेत्र में भाग ले रहा है।

अभ्यास

१. प्रथम महायुद्ध के क्या कारण थे ?
२. सबसे पहले आक्रमण किसने किया ?
३. इस युद्ध में युरोप किस प्रकार विभाजित था ?
४. वैरसाई की संधि के बारे में आप क्या जानते हैं ?
५. लीग आफ नेशन्स की स्थापना किस प्रकार हुई ? इसका उद्देश्य क्या था ?
६. द्वितीय महायुद्ध के क्या कारण थे ?
७. मुसोलिनी और हिटलर के विषय में आप क्या जानते हैं ?
८. शक्ति गुटों (Power Blocks) से आप क्या समझते हैं ? इनके क्या उद्देश्य हैं ?

सोवियट सोशलिस्ट प्रजातंत्र संघ
यो र प
अरल सागर
काला सागर
टर्की
इराक़
फ़ारस
तिब्बत
सिंक्यांग
बाह्य मंगोलिया
मंचूरिया
कोरिया
ची न
अलजीरिया
लि बि या
मिस्र
सऊदी अरब
पाकिस्तान
भारत
ब्रह्मा
हिन्द-चीन
स्याम
फ़िलिपाइन्स द्वीप
फ्रांसीसी पश्चिमी अफ़्रीका
आंग्ल मिस्री सूडान
अरबसागर
बंगाल की खाड़ी
नाइजीरिया
इथिओपिया
मलाया
केनिया
बोर्नियो
सेलीबीज़
सुमात्रा
बेल्जियन कांगो
टैंगनिका
जावा
ए शि या
भा र त
म हा सा ग र
अंगोला
मैडागास्कर
रोडेशिया
द० प० अफ़्रीका
द० अफ़्रीका राज्य संघ
एशिया और अफ़्रीका में राष्ट्रीयता का उत्कर्ष
स्वतंत्र रियासतें

अध्याय १५

भारत तथा अन्य अधीन देशों की स्वतंत्रता और चीन की क्रान्ति

यूरोप के लोगों ने नये नये प्रदेशों का पता लगाया था। इन भौगोलिक खोजों का परिणाम यह हुआ कि ये लोग पूर्व में वहुत दूर तक घुसे चले गये। हम पहले कह आये हैं कि इन लोगों ने अफ्रीका की खोज की थी। धीरे धीरे खोजे देशों में इन लोगों ने अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। इस प्रकार १९ वीं शताब्दी के अंत तथा वीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में सम्पूर्ण एशिया तथा अफ्रीका उनके अधिकार में थे। कुछ देशों में तो इन्होंने शासनसत्ता अपने हाथ में ले ली। अँगरेजों ने भी भारत में ऐसा ही किया था और कुछ देशों में केवल व्यवसाय और वाणिज्य पर ही अपना प्रभुत्व स्थापित किया। चीन के विभिन्न विभागों पर यूरोप की विभिन्न शक्तियों का अधिकार स्थापित हो गया था। यूरोप के शक्तिशाली राष्ट्रों ने संसार के असभ्य भागों को हड़प लिया था।

कुछ समय तक एशिया तथा अफ्रीका के लोग असहाय रहे। यूरोपवालों की बढ़ती हुई शक्ति का विरोध करना उनके वश की वात न थी। इन देशों की सुसज्जित सेना असभ्य लोगों का बुरी तरह दमन करती थीं। कुछ समय तक तो भारत तथा अन्य पूर्वी देशों के लोग यूरोपवालों की वीरता से बड़े प्रभावित हुए। वे लोग उनकी इतनी प्रशंसा करते थे कि अपने अपमानों को भी भूल बैठे थे। किन्तु विदेशी शासन के दोष शीघ्र ही स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगे और पराधीन जनता ने विदेशियों को मार भगाने के प्रयत्न आरम्भ कर दिये थे। ऐसे सभी देशों में विदे-शियों के क्रूर शासन का अंत कर देने के लिए आन्दोलन प्रारंभ हुए। संभवतः सबसे महत्त्वपूर्ण स्वतंत्रता का युद्ध भारत में हुआ।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी एक व्यापारिक संस्था थी। धीरे-धीरे इस कम्पनी ने भारत के कई भागों पर अपना अधिकार जमा लिया। सन् १८५७ के स्वतंत्रता-

संग्राम के पश्चात् अँगरेज़ी सरकार ने भारत की देखभाल का कार्य अपने कंधों पर ले लिया। आगामी पचास वर्षों में ब्रिटिश राज्य की नींव भारत में काफी दृढ़ हो गई। ब्रिटिश राज्य का भारतीय जीवन तथा समाज पर बुरा प्रभाव पड़ा। पुराना समाज छिन्न भिन्न हो गया। गाँव अपनः आर्थिक व राजनैतिक स्वतंत्रता खो बैठे। अँगरेजी राज्य से पहले वे अपने आर्थिक तथा राजनैतिक मामलों में पूर्ण रूपसे स्वतंत्र थे। गाँववालों के झगड़े पहले पंचायतों द्वारा तय हुआ करते थे, किन्तु अँगरेजी राज्य के आने से पंचायतों का नाश हो गया। विदेशी शासन के बोझ से जनता के सुख और आनन्द छिन गये। ब्रिटिश राज्य के प्रभाव से एक नये वर्ग का उदय हुआ, जिसे मध्यम श्रेणी का वर्ग कहा जाता है। इस वर्ग में वे लोग थे जिन्होंने अँगरेजी शिक्षा पाई थी। उन्होंने अंगरेजों के इतिहास, साहित्य और विज्ञान का गूढ़ अध्ययन किया था और वे पश्चिम में हुए स्वतंत्रता के आन्दोलनों से प्रोत्साहित हुए थे। उन्होंने भारतीय समाज में सुधार की आवश्यकता का गहन अनुभव किया।

इससे पहले कि वे स्वयं कोई आन्दोलन प्रारंभ करें, उन्होंने ब्रिटिश सरकार का ध्यान देश की गिरती अवस्था की ओर आकर्षित किया। उन्होंने अँगरेजों से सुधारों की आवश्यकता प्रतीत की और इस विषय पर अनेक लेख लिखे। सरकार से उन्होंने कहा कि शासन में परिवर्तन होना चाहिए। लेकिन अँगरेजों के कान में जूं तक न रेंगी। अंग्रेजों से उन्होंने बार-बार प्रार्थना की, किन्तु उन्होंने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। तब भारतवासियों ने अनुभव किया कि अपनी उन्नति के लिए आपहीं परिश्रम करना होगा। परिणाम स्वरूप सन् १८८५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (Indian National Congress) की नींव डाली गई। इसका पहला अधिवेशन बम्बई में कलकत्ते के सुप्रसिद्ध बैरिस्टर व्योमेशचन्द्र बनर्जी के सभापतित्व में हुआ। इसके द्वारा पढ़े लिखे लोग अपने विचारों को फैलाना चाहते थे। कांग्रेस ने बृटिश सरकार की नीति की बुरी तरह आलोचना की और शासन के दोषों की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित किया। कांग्रेस के नेतागण बहुत सुशिक्षित व्यक्ति थे। इनमें प्रमुख दादाभाई नौरोजी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, फीरोजशाह मेहता, गोपाल कृष्ण गोखले, और पं० मदनमोहन मालवीय थे। इनकी नरम नीति थी और ये वैधानिक आन्दोलन द्वारा ही अपने लक्ष्य की प्राप्ति करना चाहते थे। वे कौन्सिलों का सुधार चाहते थे, उच्च पदों पर भारतीयों की नियुक्ति

चाहते थे और फौजी व्यय को कम करने की भी उनकी माँग थी। उनका अभीष्ट इस समय था ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत उपनिवेशीय स्वराज्य। सरकार ने कुछ भी न सुना। फिर भी इन महापुरुषों ने अपना कार्यक्रम शान्ति-मय ही रक्खा। परन्तु अब कांग्रेस में एक दल ऐसा होगया जो शान्ति की नीति का परित्याग करना चाहता था। उसकी धारणा थी कि विना सक्रिय आन्दोलन के कुछ भी न होगा। इस दल ने अंगरेजी राज्य का अन्त करने का संकल्प किया और इस वात की घोपणा की कि विदेशी राज्य की समाप्ति विना हमारे देश का कल्याण होना असम्भव है। धीरे-धीरे इस दल की संख्या वढ़ने लगी। इस दल के नेता थे वाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपतराय, विपिनचन्द्र पाल और अरविन्द घोप इत्यादि देशभक्त। वंगाल में भी लोग अंगरेजी राज्य से ऊव गये थे। वहाँ क्रान्ति की भी तैयारी हो रही थी। अनेक नवयुवक देश के लिए अपने प्राण तक देने को तैयार थे। सरकार के विरुद्ध घोर आन्दोलन हुआ। समाचारपत्रों में सरकार की निन्दा की गई। पंजाव में भी एक ऐसे दल का जन्म हुआ था। इन दलों के नेता ब्रिटिश राज्य का अंत करने को तुल गये थे। उन्होंने दृढ़ निश्चय किया कि अँगरेजी शासन का अंत करने में वे अपनी पूरी शक्ति लगा देंगे।

सन् १९०५ में ब्रिटिश सरकार ने वंगाल को २ भागों में विभाजित किया। वंगाल निवासी क्रोध की ज्वाला से धधक उटे। इस विभाजन के विरुद्ध एक आन्दोलन प्रारंभ हुआ जिसमें सहस्रों स्त्री-पुरुषों ने भाग लिया। इस आन्दोलन से कांग्रेस के उग्रवादी सदस्यों को वल मिला। इसी समय स्वदेशी आन्दोलन प्रारंभ हुआ जिसमें जनता से अपील की गई कि वे विदेशी वस्तुओंका वहिष्कारकरें। नेतागणों ने स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग करने की प्रार्थना की। कोने-कोने में स्वदेशी की धूम हो गई। सुरेन्द्रनाथ वनर्जी, विपिनचन्द्रपाल आदि नेताओं ने सैकड़ों व्याख्यान दिये जिनके द्वारा जनता को स्वदेशी के लाभों का ज्ञान हुआ। इस आन्दोलन से विदेशी व्यवसाय को गहरा धक्का लगा। श्री वंकिम वावू द्वारा रचित हमारा राष्ट्रीय गान, 'वन्देमातरम्', उत्साह और जोश के साथ हर स्थान पर गाया जाने लगा। इससे अँगरेज वड़े अप्रसन्न हुए। राष्ट्रीय भावना का प्रचार शीघ्रता से होने लगा। भारतवर्ष के प्रायः सभी वड़े-वड़े देशों में जुलूस निकाले गये। पुलिस ने इन जुलूसों को दवाना चाहा। असंख्य स्त्री-पुरुप जेलों में ठूंस दिये गये। निहत्थे भारतीयों पर लाठी चलाई

गई। किन्तु देश की भलाई के लिए लोग पागल हो उठे थे। अँगरेजों का यह अमानवीय व्यवहार उनकी भावनाओं को कुचलने में असमर्थ रहा। वंगाल के कुछ शिक्षित नवयुवकों ने भयंकर आन्दोलन (Terrorist movement) प्रारंभ किया। इस आन्दोलन का उद्देश्य विकराल ढंगों द्वारा अँगरेजों को डराना था। इस आन्दोलन में अनेक ऊँचे अंग्रेज अधिकारियों की हत्या कर दी गई। इन नवयुवकों में से वहुतों को पकड़ लिया और उन्हें कठोर दंड मिला। खुदीराम वोस एक ऐसा ही नवयुवक था। अँगरेजों ने उसे फाँसी पर लटका दिया। सारे देश में हत्याकाण्ड होने लगे। अव्यवस्था और अशांति से अँगरेज व्याकुल हो उठे सच है अन्याय अधिक दिन तक नहीं चलता। इन नवयुवकों के वलिदानों का फल उन्हें मिला। विभाजन के आदेश को रद्द कर दिया गया और १९११ में वंगाल का एकीकरण हुआ।

प्रथम महायुद्ध ने भारतवासियों की आशाओं को प्रोत्साहन दिया। लोगों में स्वतंत्रता की भावना जागृत होती गई। विदेशी राज का अन्त करने को सभी लोग व्याकुल हो रहे थे। स्वतंत्रता की माँग वच्चा-वच्चा कर रहा था, गोरे क्रोधित हो उठे और विरोधियों का नाश करने की ठान ली। समय वलवान् है। इस समय भारत को एक महान् नेता की आवश्यकता थी। वह महान् नेता हमें मिला। उसका नाम था मोहनदास करमचन्द गांधी।

गांधीजी इस समय गोरों के विरुद्ध चलाये गये आन्दोलन का अफ्रीका में नेतृत्व कर रहे थे। दक्षिणी अफ्रीका की सरकार भारतीय तथा काले लोगों के साथ क्रूर व्यवहार करती थी। गांधीजी गोरों के इस व्यवहार को सहन न कर सके। उन्होंने उन का घोर विरोध किया। गांधीजी इस समय वैरिस्टर थे और दक्षिणी अफ्रीका में ही वैरिस्टरी करते थे। उनसे भारतवासियों के प्रति यह अमानवीय व्यवहार न देखा गया और उन्होंने उनकी सेवा के लिए कमर कस ली।

किन्तु गाँधीजी के ढंग पूर्णतया भिन्न थे। वे वम्व तथा वन्दूक की लड़ाई में विश्वास नहीं करते थे। उनका तो अपना एक अद्वितीय अस्त्र था। वे इसे सत्याग्रह कहते थे। जिसका अर्थ है सत्य तथा न्याय की लड़ाई। उनका विश्वास था कि वे इस साधन से विदेशियों को झुकाने में सफल होंगे। एक सत्याग्रही को शान्तिपूर्वक विना किसी घृणा के विदेशियों का विरोध करने के लिए उसका मस्तिष्क तथा शरीर पवित्र होना चाहिए। जव तक सत्याग्रही स्वयं को पवित्र न कर लेवे, किसी

प्रकार का आन्दोलन प्रारंभ नहीं कर सकता। पहले पहल गांधीजी के सिद्धान्तों की लोगों ने कटु आलोचना की। किन्तु गांधीजी को अपने सिद्धान्तों में बड़ा विश्वास था। चारों ओर से विरोध होने पर भी वे अपने सिद्धान्तों पर डटे ही रहे।

प्रथम महायुद्ध में भारतीयों ने अंगरेजों की बड़ी सहायता की थी। इसका कारण यह था कि वे समझते थे कि हमारे इस कार्य से विदेशी प्रसन्न होंगे, और इस प्रकार हमें स्वतंत्रता मिल जायगी। किन्तु उनकी आशाएँ मिट्टी में मिल गईं। कांग्रेस के नेताओं ने अंग्रेजों के विरुद्ध एक शक्तिशाली आन्दोलन उठाया। अंगरेजों ने अनेक प्रकार के नियम बनाये। जिनका उद्देश्य इस आन्दोलन को रोकना था। युद्ध में तुर्की ने जर्मनी का पक्ष लिया था। तुर्की का राजा मुसलमानों का खलीफा था। इंगलैंड और फ्रान्स ने उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया। भारत के मुसलमान इन लोगों के इस व्यवहार से बड़े दुखी हुए। असंतोष की आग भड़क उठी। मौलाना मुहम्मदअली तथा शौकतअली के नेतृत्व में एक भयंकर आन्दोलन उठा। इसका परिणाम यह हुआ कि मुसलमानों के सम्बन्ध अंगरेजी सरकार से अच्छे न रहे। मुसलमान कांग्रेस में शामिल होने लगे। अभी तक ये लोग कांग्रेस से दूर थे।

महात्मा गांधी ने सन् १९२० में कांग्रेस में पदार्पण किया था। तभी उन्होंने अपना असहयोग आन्दोलन प्रारंभ किया था। उन्होंने स्कूल, कालेज तथा कचहरियों के बहिष्कार की अपील की और सहकारी अधिकारियों से त्यागपत्र देने की प्रार्थना की। गांधीजी ने असाधारण उत्साह के साथ स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार किया और विदेशी कपड़े जलाने का आदेश किया। देश में अशान्ति और अव्यवस्था के काले बादल छा गये। गांधीजी की एक पुकार से सहस्रों स्त्री पुरुष उनके साथ हो लिये और वे लोग हर प्रकार का बलिदान करने को उद्यत होगये। जेलें ठूंस-ठूंस कर भर दी गईं। इन जेलों में देश की महान् आत्माओं तक को बन्द कर दिया गया। इस आन्दोलन में भारतीय स्त्रियों ने संसार को बता दिया कि वे किसी से पीछे नहीं हैं। उन्होंने सहर्ष सुख का त्याग किया और देश के लिए जेलों का दुर्लभ जीवन व्यतीत करने को तैयार हो गईं। अंगरेजों ने अधिक क्रूरता से काम लेना प्रारंभ किया। किन्तु इसका कोई अच्छा परिणाम न निकला। उनके इस व्यवहार से महात्माजी ने अत्यंत बल के साथ असहयोग आन्दोलन उठाया। लगता था इस अन्दोलन से अवश्य ही ब्रिटिश शासन की

नींव हिल जायगी। गांधीजी ने बुरे नियमों की अवज्ञा करने का आदेश किया। इनमें सबसे पहले नमक-कानून का विरोध किया गया। उन्होंने एक सविनय अवज्ञा-आन्दोलन (Disobedience Movement) प्रारंभ किया और स्वयं नमक-कानून को भंग करने समुद्रतट पर पहुँचे। किसानों को उन्होंने उपदेश दिया कि वे खेती का कर सरकार को न दें।

इस आन्दोलन ने भीषण रूप धारण कर लिया। महात्माजी स्थिति पर काब न पा सके। कई स्थानों पर रक्तपात तक हो गया। गांधीजी अहिंसा के पुजारी थे। उन्होंने एकदम आन्दोलन को स्थगित कर दिया। दूसरा सविनय अवज्ञा-आन्दोलन सन् १९३० में उठा, जिसे अँगरेजों ने बुरी तरह कुचल दिया। किन्तु वीर हतोत्साहित न हुए। स्वतन्त्रता की भावना जीवित थी। वे स्वतंत्रता और देश की भलाई के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा देना तुच्छ समझते थे। देश के लिए प्राणों पर खेल जाना भारतवासी अच्छी तरह सीख चुके थे।

अंगरेजी सरकार ने अब कुछ उदार नीति से काम लिया। विद्रोहियों को शान्त करने के लिए सन् १९१९ की तरह देश में कुछ सुधार किये गये। सन् १९३५ में एक नया कानून बनाया जिसमें उन्होंने शासन-सम्बन्धी सुधारों का वचन दिया। प्रान्तों को पूर्ण स्वराज्य दे दिया गया। परतु इससे भारतवासी संतुष्ट न हुए।

कांग्रेस ने पूर्ण स्वराज्य का नारा लगाया था और उन्होंने अँगरेजों से भारत छोड़ देने को कहा। सुधारोंवाला सुझाव ठुकरा दिया गया। गांधीजी अपना आन्दोलन चलाते ही रहे। समय के साथ-साथ गांधीजी का प्रभाव भी बढ़ता गया। वे कभी निराश न हुए। उन्होंने देश की जनता से स्वतंत्रता के लिए हँसते-हँसते प्राण देने की अपील की।

संयोग से इसी समय द्वितीय महायुद्ध प्रारंभ हो गया। कांग्रेस चाहती थी कि विदेशी उनकी माँगें मान लें जो कि सर्वथा उचित हैं; और देश की रक्षा का उत्तरदायित्व उन पर छोड़ दिया जाय। किन्तु अँगरेज ऐसे थोड़े ही माननेवाले थे। कांग्रेस की माँगें बुरी तरह ठुकरा दी गईं और बिना भारत के पूछे उसे युद्ध में शामिल कर लिया। इस बात से क्रोधित होकर प्रान्तों में कांग्रेस सरकारों ने त्यागपत्र दे दिये। गांधीजी ने निश्चय किया कि अब वे एक और आन्दोलन प्रारंभ करेंगे, जो पहले आन्दोलनों से अधिक भीषण होगा। सन् १९४२ में उन्होंने सरकार के सामने 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव रखा। उन्होंने कहा; मैं स्वतंत्रत

को प्रधान अथवा ०° देशान्तर माना जाय। ०° देशान्तर के पूरब
पूर्वी देशान्तर तथा इसके पश्चिम की रेखाओं को पश्चिमी देशा
इस प्रकार ३६० की आधी रेखाएं पूरब की ओर और आधी रेखाएं प
हुईं। १८०° की देशान्तर रेखा पूरब से तथा पश्चिम से भी एक
इस पर न पूरब ही लिखा जाता है और न पश्चिम ही।

यहाँ यह जान लेना आवश्यक होगा कि सभी देशान्तर रेखा
वरावर होती है। ये उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों को मिलाती हुई अ
हैं। जिस प्रकार एक अंश अक्षांश की दूरी को ६० मिनटों और

चित्र ८. अक्षांश एवं देशान्तर रेखाएं